शोधादर्श

७५

श्रद्धेय

इतिहास-मनीषी विद्यावारिधि

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जन्म-शती विशेषांक

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

आद्य सम्पादक	:	(स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
पूर्व प्रधान सम्पादक	:	(स्व.) श्री अजित प्रसाद जैन
पूर्व सम्पादक	:	(स्व.) श्री रमा कान्त जैन
मार्गदर्शक	:	डॉ. शशि कान्त
सम्पादक	:	श्री नलिन कान्त जैन
सह–सम्पादक	:	श्री सन्दीप कान्त जैन
	:	श्री अंशु जैन 'अमर'
	:	सौ. डॉ. अलका अग्रवाल

प्रकाशक :

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र.

ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ - २२६ ००४, टेलीफोन सं. (०५२२) २४५१३७५

णाणं णरस्स सारं - सच्चं लोयम्मि सारभूयं
ज्ञान ही मनुष्य जीवन का सार है
सत्य ही लोक में सारभूत तत्व है

शोधादर्श -७५

इतिहास–मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
की जन्म–शती पर विशेषांक

वीर निर्वाण संवत् २५३८ **मार्च–जुलाई, २०१२ ई.**

विषय क्रम

१.	**सम्पादकीय**	श्री नलिन कान्त जैन	५-६
२.	**गुरुगुण-कीर्तन :**		
	गुरुणामगुरु : शलाकापुरुष		
	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	श्री अंशु जैन 'अमर'	७-१८
३.	**गुणानुवादः**	पं. काशीनाथ गोपाल गोरे	१८
४.	**जैन कला का उद्गम और उसकी आत्मा**	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	१९-२५
५.	**ऐतिहासिक परिदृश्य**	डॉ. शशि कान्त	२६-४६
	१८वीं शती के उत्तरार्ध से २०वीं शती के पूर्वार्ध का भारत		२६-३०
	उत्तर प्रदेश		३०-३२

ऐतिहासिक मेरठ ३२-३७
हमारा वंश ३७-४६
६. **श्रद्धांजलि एवं विनयांजलि** ४७-८०
डॉ. नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी ४८-४९
श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन ५०-५२
श्री राजेन्द्र कुमार जैन ५३-५४
श्री सुरेश जैन 'सरल' ५५
श्री निर्मल कुमार जैन सेठी ५६-५७
श्री लूणकरण नाहर जैन ५८
डॉ. विनय कुमार जैन ५९
श्री रोहित कुमार जैन ६०-६१
श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश' ६१
श्री भगवान भरोसे जैन ६२
श्री महेन्द्र प्रसाद जैन ६३
सौ. डॉ. इन्दु राय (रस्तोगी) ६४
सौ. डॉ. राका जैन ६५
डॉ. ऋषभ चन्द्र जैन ६६-६७
डॉ. विजय कुमार जैन ६८-६९
डॉ. वृषभ प्रसाद जैन ७०-७१
डॉ. जय कुमार उपाध्ये ७२-७३
श्री स्वराज्य चन्द्र जैन ७४
पं. काशीनाथ गोपाल गोरे ७५-७६
डॉ. परमानन्द जड़िया ७६
श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास' ७७
डॉ. महावीर प्रसाद जैन 'प्रशांत' ७८-७९
श्री धर्म वीर ७९
श्री रतन चन्द्र गुप्ता ८०
७. **सन्तति के प्रणाम** ८१-१०५
श्री अजित प्रसाद जैन ८३
श्री रमा कान्त जैन ८४
सौ. मंजरी जैन ८५
श्री हुकम चंद जैन ८६-८७
श्री सुरेश चंद जैन ८८
श्री सन्दीप कान्त जैन ८९-९०

श्री राजीव कान्त जैन ९१-९३
सौ. इन्दु कान्त जैन ९४-९६
सौ. डॉ. अलका अग्रवाल ९७-९८
सौ. सीमा 'सौम्या' जैन ९८
सौ. शेफाली मित्तल ९९-१००
सौ. निधि जैन १०१-०२
आयु. पलक जैन १०३-०४
डॉ. शशि कान्त १०५
८. **भावांजलि सन्देश** १०६-०८
श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा १०६
श्री जमनालाल जैन १०६-०७
श्री बी. डी. अग्रवाल १०७-०८
श्री मिलाप चंद डंडिया १०८
९. **इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म-शती पर स्मरण-गोष्ठी** श्री अंशु जैन 'अमर' १०९-१४
१०. **श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद जैन और उनकी सन्तति के विशिष्ट प्रकाशन** श्री नलिन कान्त जैन ११५-२०
डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ११५-१७
श्री रमा कान्त जैन ११७-१८
सौ. इन्दु कान्त जैन ११८
श्री राजीव कान्त जैन ११९
सौ. डॉ. अलका अग्रवाल ११९
डॉ. शशि कान्त १२०
११. **चित्र वीथिका** १२१-२८
१२. **तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र. प्रतिवेदन वर्ष २०११-१२** श्री नलिन कान्त जैन १२९-३३
१३. **पुनीत स्मरण** श्री नलिन कान्त जैन १३४-३५
डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
श्री अजित प्रसाद जैन
श्री रमा कान्त जैन
१४. **व्यंग्यकार कवि रमा कान्त जैन** श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध' १३६-३८
१५. **साहित्य सत्कार**
आत्मकल्याण के दस चरण डॉ. परमानन्द जड़िया १३९-४०

जैन धर्म : प्राचीनतम जीवित धर्म;
स्मृतिका — सौ. डॉ. अलका अग्रवाल — १४०-४१
योग मार्गणा;
जैन तत्त्व दर्शन;
जैन धर्म में प्रतिक्रमण, स्वरूप एवं समीक्षा;
महावीर कथा;
कबिरा खड़ा बाजार में;
जंगलों को गाने दो;
जो छपता है सो छपता है;
छन्द मकरन्द;
युगपत् — डॉ. शशि कान्त — १४१-४७
१६. **अभिनन्दन** — १४८-४९
१७. **शोक संवेदन** — १५०-५१
१८. **समाचार-विविधा** — श्री नलिन कान्त जैन — १५२-५८
प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर
श्रुतसेवा निधि न्यास का अक्षराभिषेकोत्सव, फिरोजाबाद
प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान, वैशाली
डॉ. महेन्द्र कुमार जैन न्यायाचार्य की जन्म-शताब्दी, दमोह
महावीर जयन्ती
पुस्तकालय स्थापना दिवस एवं श्रुत पंचमी पर्व
राष्ट्रिय प्राकृत संगोष्ठी
श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट
श्री जैन इन्टरनेशनल ट्रेड आर्गनाइजेशन (JITO)
भगवान महावीर स्मारक समिति
१९. **पाठकों के पत्र** — १५९-६३
डॉ. उषा माथुर, डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव
श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध', श्री दुली चन्द जैन
डॉ. परमानन्द जड़िया, श्री प्रेम कुमार जैन
श्री बी. डी. अग्रवाल, डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल
श्री हुकम चंद जैन
२०. **आभार** — १६४
२१. **पाठकों/अभिदाताओं से निवेदन** — १६४-६६
२२. **आवश्यक सूचना** — १६७-६८

सम्पादकीय

शोधादर्श का यह अंक श्रद्धेय **इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन** जी को उनके **जन्म-शताब्दी वर्ष** के उपलक्ष में विशेष रूप से समर्पित है। डॉ० साहब की जन्म-शती पर **स्मरण-गोष्ठी** का आयोजन उनकी कार्यस्थली उनके निवास-स्थान **ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ में दिनांक ६ फरवरी, २०१२,** को किया गया था।

श्रद्धेय डॉ. साहब को स्मरण करने के लिये हम **जैन गजट, जैन संदेश, वीर, श्रुत संवर्धिनी** और **राष्ट्रीय स्वरूप** के विद्वान सम्पादकों एवं प्रकाशकों के प्रति आभारी हैं।

मार्च और जुलाई, २०१२, में प्रकाश्य अकों को संयुक्त करके प्रस्तुत अकं ७५ विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है।

इस अंक में समाचार विविधा, अभिनन्दन, शोक संवेदन, आभार, साहित्य सत्कार तथा पाठकों के पत्र विषयक स्तम्भ यथावत् दिये जा रहे हैं। स्वतंत्र लेख आगामी अंक में दिये जायेंगे।

डॉ. साहब के विशिष्ट प्रकाशनों के सम्बन्ध में आवश्यक सूचना इस अंक में दी जा रही है। जिज्ञासु पाठक प्रकाशकों से उन्हें प्राप्त कर सकते हैं।

डॉ. साहब के कृतित्व को स्थायित्व प्रदान करने की दृष्टि से उनके समग्र लेखन को विषयवार वर्गीकृत करके प्रकाशित करने का अभिप्राय है। एक विषय से सम्बन्धित लगभग १००-१२५ पृष्ठों का संकलन प्रकाशित किया जाना अभिप्रेत है ताकि जिज्ञासु सहज रूप से डॉ. साहब की विचारणा से अवगत हो सके। यदि कोई संस्था या प्रकाशक इस कार्य में सहयोग देने के इच्छुक हों तो वे कृपया **ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट** के अध्यक्ष से **ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६००४** के पते पर सम्पर्क कर लें।

शोधादर्श का प्रकाशन डॉ. साहब ने फरवरी १९८६ में प्रारम्भ किया था। उनके जीवन काल में इसके ६ अंक ही प्रकाशित हो सके थे। उनके आशीर्वाद से इसके प्रकाशन की निरंतरता बनी रही और अब ७५वां अंक प्रस्तुत है। यह परम्परा भी बनी रही कि उनके चिंतन प्रसून के रूप में उनका एक लेख प्रत्येक अंक में दिया जाता रहे। इस अंक में भी उस परम्परा का निर्वाह किया जा रहा है।

यहां यह उल्लेख किया जाना भी अभीष्ट है कि हमें पापा जी **डॉ. शशि कान्त** का मार्गदर्शन सहज रूप से प्राप्त होता रहा है। दिनांक **१२ फरवरी** को आदरणीय पापा जी ने ८० वर्ष की वय प्राप्त करके **सहस्र-चंद्र-दर्शन** का सुयोग प्राप्त किया। वह किसी प्रकार के सार्वजनिक प्रदर्शन के लिय सहमत नहीं थे, अतः परिवार जनों ने ही अपनी विनय और शुभकामना उन्हें निवेदित की। उनके पितृव्य-तुल्य श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा ने उन्हें आशीर्वाद प्रदान किया और उनके समवयस्क चिन्तक मनीषी श्री प्रयागदत्त पंत ने उन्हें अपनी शुभकामना प्रेषित की।

इस अंक के सम्पादन में मुझे श्री अंशु जैन 'अमर' से विशेष सहयोग प्राप्त हुआ है। उन सभी विद्वान मनीषियों के प्रति भी मैं विशेष रूप से आभारी हूँ, जिन्होंने श्रद्धेय बाबा जी जी के प्रति अपने भावपूर्ण उद्‌गारों से इस अंक को समृद्ध करने में मुझे अपना सहयोग और आशीर्वाद प्रदान किया।

यह आह्लाद का विषय है कि श्रद्धेय डॉकटर साहब, मेरे पूज्य बाबा जी, को समर्पित इस विशेषांक का लोकार्पण आज 'जयशंकर प्रसाद सभागार' में आयोजित विद्वत् गोष्ठी में किया जा रहा है। आयोजन में सहभागी सभी मित्रों के प्रति सम्पादक मंडल विशेष रूप से अनुग्रहीत है।

२१ जूलाई, २०१२

नलिन कान्त जैन
सम्पादक

गुरुणामगुरु : शलाकापुरुष

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

"णाणं णरस्स सारं" (ज्ञानम् नरस्य सारम्)

अर्थात् ज्ञान ही मनुष्य जीवन का सार है।

इस सृष्टि में असंख्यात जीव समूह हैं, किन्तु सिर्फ मनुष्य-पर्याय में ही जीव विवेकशील व ज्ञानवान होता है। जो मनुष्य अथक श्रम-साधना करके अपनी बुद्धि को प्रखर कर पाने में सफल होते हैं, वे विद्वान की श्रेणी में परिगणित होते हैं और जाति व संस्कृति के संरक्षण का महती कार्य अपने साहित्य-सृजन के माध्यम से सम्पन्न करते हैं तथा समस्त जगत को धारण करते हैं, जैसा कि किसी महान मनीषी ने निम्नलिखित पंक्तियों में कहा है :-

जातिर्न जीवति सुसंस्कृतिमन्तरेण
साहित्यमेव परिरक्षति संस्कृतिं ताम्।
विद्वांश्च तं सृजति तेन बुधः स एकः
नूनं सदैव विदधाति जगत समग्रम्।।

यदि विद्वान धर्म-रक्षक, वस्तु-तत्व निरीक्षक, विद्या प्रदायक, इच्छा रहित और मान की अपेक्षा नहीं करने वाला हो, तो वह कदापि दीनता को प्राप्त नहीं होता है और संसार में सदैव वन्दनीय होता है। वन्दना का उद्देश्य उस व्यक्ति विशेष के गुणों को प्राप्त करने की सद्भावना होती है, जैसा कि कहा भी गया है -

वन्दे तद्गुण लब्धये।

जैन परम्परा में "**गुणिषु प्रमोदम्**" की भावना का विशिष्ट स्थान है। अतः ऐसे विद्वान गुरुओं के गुणों का स्मरण-कीर्तन स्वाभाविक है। और जब ये गुरुजन हमारे पूर्वज हों तो उनके महान व्यक्तित्व और कृतित्व का वन्दन-कीर्तन बारम्बार करने के बावजूद हमारी आत्मा तृप्त नहीं होती है। उनके विषय में सुनने-सुनाने व अधिकाधिक ज्ञानार्जन की लालसा बढ़ती ही जाती है, इसीलिये **महाभारत** में कहा गया है -

न हि तृप्यामि पूर्वेषां श्रृण्वानश्चरितं महत्।

आज मैं भी अपने ऐसे ही एक महान पूर्वज गुरुजन श्रद्धेय पितामह **इतिहास-रत्न, विद्यावारिधि, इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन** के गुणों के कीर्तन करने के लोभ का संवरण नहीं कर पा रहा हूँ। वैसे तो हम लोग प्रतिवर्ष उनकी जन्म-जयंती व पुण्य-तिथि पर उनका पुनीत स्मरण करते हैं लेकिन वर्तमान वर्ष २०१२ विशिष्ट है, क्योंकि हम लोग उनकी जन्म-शताब्दी मना रहे हैं। डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का जन्म आज से ठीक एक शताब्दी पूर्व ६ फरवरी १९१२ ई. को फाल्गुन कृष्ण चतुर्थी के दिन बागपत जनपद के ख्वाजा नगला ग्राम में एक मध्यमवर्गीय तेरापंथी दिगम्बर जैन गोयल गोत्रीय बीसा अग्रवाल वैश्य परिवार में श्री पारस दास जैन की प्रथम सन्तान के रूप में हुआ था। आपके जन्म के समय परिवार की स्थिति संतोषजनक नहीं थी, इसीलिये धर्मनिष्ठ माता-पिता ने बालक को अपनी आशाओं का पुञ्ज मान आपका नाम "ज्योति" रख दिया। आपने 'यथा नाम तथा गुण' कहावत को सत्य साबित करते हुए शीघ्र ही अपने नाम को सार्थक कर दिया। समय ने करवट ली और परिवार परिस्थितियों से उबरकर प्रगतिपथ पर अग्रसरित हो चला। आपने मेरठ में जैन मंदिर की पाठशाला और पाण्डे जी की चटशाला से विद्यारम्भ करके मेरठ व आगरा में शिक्षा ग्रहण कर इतिहास, राजनीति-शास्त्र और अंग्रेजी में एम.ए. तथा एल-एल.बी. की उपाधियां प्राप्त कीं। सन् १९३२ में आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, की "साहित्य विशारद" परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

इतिहास विषय के छात्र के रूप में आपने अनुभव किया कि भारतीय इतिहास के निर्माण में जैन स्रोतों की प्रायः उपेक्षा की गयी है और यत्र-तत्र ही उनका उपयोग किया गया है। आपने यह भी पाया कि जैनेतर विद्वानों में जैन-धर्म की ऐतिहासिकता, पृथक अस्तित्व, साहित्य की प्रामाणिकता आदि अनेक तथ्यों के विषय में अनेक भ्रांतियाँ हैं, जो दुराग्रह का रूप ले चुकी हैं। डॉक्टर साहब सकारात्मक सोच के व्यक्ति थे, अतः इन बातों से क्षुब्ध न होकर वरन् प्रेरित होकर जैन साहित्य, कला व पुरातात्विक स्रोतों के आधार पर भारतीय इतिहास के पुनर्निर्माण का आपने महती एवं सफलीभूत प्रयास किया। इसी विषय पर आपने **शोध-प्रबंध The Jaina Sources of the History of Ancient India** पूर्ण कर आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि हासिल की। आपने अपनी अनवरत साहित्य-साधना से जैन-स्रोतों के माध्यम से भारतीय इतिहास के अनेकों विस्मृत तथ्यों व अध्यायों को उद्घाटित व आलोकित कर उनकी प्रामाणिकता व महत्व को स्थापित किया। किन्तु,

डॉक्टर साहब सदैव धर्म-सम्प्रदाय-आम्नाय भेद रहित और तथ्य-सापेक्ष इतिहास के निरुपण के पक्षधर थे।

१२ फरवरी १९२९ को मास्टर उग्रसेन कंसल की सुपुत्री अनन्तमाला से विवाह कर दाम्पत्य-जीवन में प्रवेश के पश्चात् पारिवारिक दायित्वों के निर्वहन हेतु आपने वकालत, शिक्षण, व्यापार और सरकारी सेवा को आजीविका के रूप में अपनाया। सन् १९५८ में आपकी विशिष्ट अर्हताओं को देखते हुए उत्तर प्रदेश के जिला गज़ेटियर विभाग में उन्हें दस अतिरिक्त वेतन-वृद्धियाँ देकर **'संकलन अधिकारी एवं उप-सम्पादक'** के पद पर नियुक्ति प्रदान की गयी। आपने अत्यन्त परिश्रम और कुशलतापूर्वक कार्य करते हुए २२ जिलों के गज़ेटियर तैयार किये, जिनमें अधिकांश जिलों के इतिहास विषयक अध्याय स्वयं डॉक्टर साहब ने लिखे। उनके इस योगदान को देखते हुए उन्हें दो वर्ष का सेवा-विस्तार भी प्रदान किया गया और वे सन् १९७२ में ससम्मान सेवानिवृत्त हुए। आज भी उनके द्वारा सुनिश्चित प्रणाली पर गज़ेटियर्स के लेखन व प्रकाशन का कार्य हो रहा है।

देश-प्रेम के कारण डॉ. साहब सन् १९२८ से १९३१ तक कांग्रेस सेवा दल के सक्रिय सदस्य भी रहे। इस दौरान आपने खादी का प्रचार एवं महात्मा गांधी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन में सहभागिता भी की।

अध्ययन, चिन्तन, मनन, लेखन और पत्रकारिता का डॉक्टर साहब को बाल्यकाल से ही शौक था। मात्र चौदह वर्ष की अल्प-वय में वे जैन कुमार सभा मेरठ की हस्तलिखित पत्रिका **जैन कुमार** के जनक एवं प्रथम सम्पादक बने। उनका किसी सार्वजनिक पत्र में प्रकाशित सर्वप्रथम लेख **" जैनधर्म के मर्म की अनोखी सर्वज्ञता"** सन् १९३३ में **जैन मित्र** (सूरत) में प्रकाशित हुआ। सन् १९४० में उनकी सर्वप्रथम पुस्तक **पर्यूषण-पर्व** जैन सभा, मेरठ, द्वारा प्रकाशित की गयी।

डॉक्टर साहब का हिन्दी व अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं पर असाधारण अधिकार था। लेखन की भांति डॉ. साहब उभय भाषाओं में धारा-प्रवाह बोलते भी थे। शीघ्र ही वे जैन धर्म, दर्शन, संस्कृति, इतिहास, कला व पुरातत्व के मर्मज्ञ विद्वान के रूप में स्थापित हो गये और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अथॉरिटी माने जाने लगे। यह समय **साहित्य-जगत का स्वर्ण-युग** था, जब श्री जुगल किशोर मुख्तार 'युगवीर', बा. कामता प्रसाद जैन, डॉ. ए.एन.उपाध्ये, डॉ. हीरा लाल जैन, पं. कैलाश चन्द्र शास्त्री और ज्योतिषाचार्य नेमिचन्द्र शास्त्री सरीखी महान जैन विभूतियाँ धूम मचाए हुए थीं।

दूसरी ओर कई जैनतर साहित्यकार भी यथा - मुंशी प्रेमचन्द, निराला, यशपाल, अमृत लाल नागर व शारदा प्रसाद 'भुशुण्डि' लखनऊ को अपनी कर्मभूमि बनाकर माँ भारती के भण्डार को भरने का सराहनीय प्रयास कर रहे थे। **इसी श्रृंखला की एक स्वर्णिम-कड़ी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी भी थे, जिन्होंने अपने अनुसन्धान व लेखन से वाग्देवी की अविस्मरणीय सेवा की।** डॉ. साहब ने दो हजार से अधिक लेख व शोध-पत्रों एवं छोटी-बड़ी लगभग पचास पुस्तकों का प्रणयन किया।

सन् १९६४ में मुंशीराम मनोहरलाल पब्लिकेशन, दिल्ली, द्वारा प्रकाशित **The Jaina Sources of the History of Ancient India** नामक अपने ग्रन्थ में डॉ. साहब ने जैन स्रोतों के महत्व को सिद्ध करते हुए उनके आधार पर महावीर संवत्, विक्रम संवत् व शक संवत् की तिथि-समय निर्धारित करते हुए भारतीय व जैन इतिहास की सांस्कृतिक व राजनीतिक घटनाओं के कालक्रम को सुनिश्चित करने का सफल प्रयास किया।

सन् १९६१ में भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, से प्रकाशित **भारतीय इतिहास : एक दृष्टि** में डॉ. साहब ने प्राचीनतम काल से लेकर स्वतंत्रता-प्राप्ति पर्यन्त सम्पूर्ण भारतीय इतिहास अन्य ऐतिह्य साधनों के साथ-साथ जैन स्रोतों के सम्यक् उपयोग द्वारा प्रस्तुत किया। इस ग्रंथ में उत्तर भारत के इतिहास के साथ ही दक्षिण भारत का विस्तृत इतिहास और भारतीय इतिहास से संबंधित प्रमुख तिथियों की अत्यन्त उपयोगी सूची भी दी गयी है।

सन् १९५१ में जैन कल्चरल रिसर्च सोसाइटी, वाराणसी, से प्रकाशित अपनी पुस्तक **Jainism, The Oldest Living Religion** में डॉ. साहब ने पाश्चात्य एवं जैनेतर भारतीय इतिहासकारों में फैली भ्रांतियों का निवारण करते हुए जैन-धर्म के अन्य भारतीय धर्मों से पृथक स्वतंत्र अस्तित्व एवं उसकी पुरातात्विक स्रोतों के आधार पर प्राचीनता आदि को सिद्ध किया। इस पुस्तक का गुजराती भाषा में सन् १९७९ में अहमदाबाद के श्री हेमंत जे. शाह ने **जैन-धर्म साहुथी वधु प्राचीन अनेजुवन्त धर्म** नाम से अनुवाद किया था। हाल ही में अगस्त २०११ में धर्मोदय साहित्य प्रकाशन, सागर, ने श्री पुलक गोयल द्वारा अनुवादित इस पुस्तक का हिन्दी संस्करण **जैन धर्म : प्राचीनतम जीवित धर्म** नाम से प्रकाशित किया है।

सन् १९७५ में भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, से प्रकाशित एक अन्य ग्रंथ **प्रमुख ऐतिहासिक जैन पुरुष और महिलाएँ** में श्रद्धेय डॉ. साहब ने भगवान महावीर से

लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति पर्यन्त हुए प्रमुख जैन सम्राटों, राजा-महाराजाओं, सामन्त-सरदारों, मंत्रियों, राजपुरुषों, सेनानियों, सेठ, उद्योगपतियों तथा प्रभावक पुरुषों और महिलाओं का कालक्रमिक परिचय-चित्रण अत्यन्त सुन्दर ढंग से दिया है। ये चरित्र समस्त जैन सम्प्रदाय से बिना किसी भेदभाव के चुने गये हैं, यह ग्रंथ की विशेषता है। सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाश चन्द्र शास्त्री ने इसे **परिचयात्मक जैन व्यक्ति कोष** की संज्ञा दी थी।

सन् १९७५ में भारतीय ज्ञानपीठ से ही डॉ. साहब की एक अन्य महत्वपूर्ण पुस्तक **Religion and Culture of The Jains** प्रकाशित हुयी, जिसमें आपने अंग्रेजी भाषा में जैन-धर्म के प्राचीन इतिहास के साथ-साथ जैन-सिद्धान्तों, जैन-दर्शन, जैन-संस्कृति, पूजा-व्रत-उपवास, तीर्थक्षेत्र, कला, आचार-व्यवहार आदि विभिन्न विषयों पर विशद प्रकाश डाला है।

सन् १९७९ में उ.प्र. दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी, लखनऊ, द्वारा प्रकाशित डॉ. साहब की पुस्तक **आदि तीर्थ अयोध्या** में काल-चक्र के वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों में से पांच तीर्थंकरों की जन्म-भूमि स्थावर-तीर्थ अयोध्या के ऐतिहासिक, धार्मिक, पुरातात्विक एवं सांस्कृतिक महत्व पर प्रकाश डालते हुए वहां के दर्शनीय स्थलों के लगभग दो दर्जन सचित्र परिचय प्रस्तुत किये गये हैं। पुस्तक के अन्त में स्तवन, दिगम्बरत्व के विवेचन और जैन परम्परा की प्राचीनता विषयक अध्यायों से पुस्तक की उपादेयता और बढ़ गयी है।

स्मृति-शेष डॉ. साहब के महाप्रयाण के पश्चात ज्ञानदीप प्रकाशन, लखनऊ, द्वारा सन् १९९९ में उनका अत्यन्त श्रम-साध्य जीवन-पर्यन्त शोध-अनुसंधान का प्रतिफल **जैन-ज्योति : ऐतिहासिक व्यक्तिकोश** का प्रथम खण्ड प्रकाशित किया गया। ऐतिहासिक काल में एक ही नाम के अनेक विशिष्ट व्यक्ति हुए हैं और नाम-साम्य के आधार पर कई व्यक्तियों को एक ही मान लेने की भ्रान्ति प्रायः होती है, जिससे ऐतिहासिक घटनाओं का समाकलन भ्रमपूर्ण हो जाता है। अकारादि क्रम से प्रथम खण्ड में **अ** से **अं** तक ग्रथित प्रस्तुत कोश में विगत २५०० वर्षों में हुए जैन आचार्यों, प्रभावक सन्तों, साध्वी, आर्यिकाओं, साहित्यकारों, कलाकारों, धर्म एवं संस्कृति के पोषक राजपुरुषों व अन्य उल्लेखनीय महापुरुषों व महिलाओं का संक्षिप्त प्रामाणिक परिचय ससंदर्भ संकलित किया गया है। परिशिष्ट में अधुना-दिवंगत उल्लेखनीय व्यक्तियों का भी समावेश किया गया है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त आदरणीय डॉ. साहब की कतिपय अन्य प्रमुख कृतियाँ निम्नलिखित हैं -

१. **तीर्थंकरों का सर्वोदय मार्ग** (जैना वाच कपंनी, दिल्ली, से १९७४ में प्रकाशित)

२. **हस्तिनापुर** (शिक्षा विभाग, उ.प्र., द्वारा १९५५ में प्रकाशित)

३. **उत्तर प्रदेश और जैन-धर्म** (ज्ञानदीप प्रकाशन, लखनऊ, से १९७६ में प्रकाशित)

४. **युग-युग में जैन-धर्म** (प्राच्य श्रमण भारती, मुजफ्फरनगर, से २००२ में प्रकाशित)

५. **दशलक्षण-व्रत** (ज्ञानदीप प्रकाशन, लखनऊ, से १९८५ में प्रकाशित)

६. **Bhagwan Mahavira : Life, Times & Teachings** (तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., द्वारा १९८२ में प्रकाशित)

७. **Essence of Jainism** (शुचिता पब्लिकशंस, वाराणसी, से १९८२ में प्रकाशित)

८. **Way to Health & Happiness : Vegetarianism** (तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., द्वारा १९८३ में प्रकाशित)

९. **Jainism and Buddhism** (दि वर्ल्ड जैन मिशन, अलीगंज, एटा, से १९६५ में प्रकाशित)

डॉ. साहब लेखन के साथ-साथ उच्च कोटि के सम्पादक भी थे। वे अनेकों जैन व जैनेतर पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादक/प्रधान सम्पादक अथवा सम्पादक-मण्डलों में रहे। लखनऊ से प्रकाशित होने वाली हिन्दी साहित्यिक मासिक पत्रिका **मानसी, जैन सिद्धान्त भास्कर, Jaina Antiquary, जैन संदेश साप्ताहिक, अनेकान्त, वीर, अहिंसा-वाणी, वॉयस ऑफ अहिंसा, इंग्लिश जैन गजट, जैन-दर्पण** जैसी पत्रिकाओं ने उनके सम्पादन में ही प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त किया। अनेक पत्रिकाओं के विशिष्ट विशेषांकों, स्मारिकाओं, अभिनन्दन-ग्रंन्थों, स्मृति-ग्रंथों के सम्पादक-मण्डलों को भी आपने सुशोभित किया था। **अनेकान्त** का पं. जुगल किशोर मुख्तार 'युगवीर' स्मृति विशेषांक, साहू शान्ति प्रसाद जैन विशेषांक, व गोम्मटेश्वर बाहुबली विशेषांक तथा **वीर** का साहू शान्ति प्रसाद जैन विशेषांक, गोम्मटेश अंक और धर्मस्थल विशेषांक

उल्लेखनीय हैं। सन् १९८३ तक **जैन संदेश शोधांक** के ५१ अंक और जून १९८८ में महाप्रयाण-पर्यन्त **शोधादर्श** के प्रारम्भिक ६ अंकों का आपने कुशलतापूर्वक सम्पादन कर शोध के नये प्रतिमान स्थापित किये।

श्रद्धेय डॉ. साहब भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन की मूर्ति देवी ग्रन्थमाला के जनरल ऐडीटर तथा महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, के सम्पादक-मण्डल के भी सदस्य थे। आपने भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव पर प्रकाशित समग्र जैन समाज की ओर से **भगवान महावीर स्मृति ग्रन्थ** सुसम्पादित किया। जुलाई १९५८ में भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ, मथुरा, से प्रकाशित **जैन सन्देश-शोधांक** तथा फरवरी, १९८६ में तीर्थंकर महावीर स्मृति केंद्र समिति, उ.प्र., से प्रकाशित **शोधादर्श** नामक स्तरीय शोध-पत्रिकाओं के तो आप **जनक और आद्य-सम्पादक** ही थे।

सन् १९४५ में डॉ. माता प्रसाद गुप्त ने मुद्रण कला के इतिहास की पृष्ठभूमि में **हिन्दी पुस्तक साहित्य** प्रकाशित की थी, जिससे प्रेरणा लेकर डॉ. साहब ने सन् १९५८ में जैन मित्र मंडल, दिल्ली, के आग्रह पर **प्रकाशित जैन साहित्य** का सफल सम्पादन किया। इस अत्यन्त महत्वपूर्ण पुस्तक में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी की २०५२, मराठी की ४८, गुजराती की ७०, बंगला की ५२, उर्दू की १६८ तथा अंग्रेजी व अन्य यूरोपीय भाषाओं की २९०, तदनुसार कुल २६८० कृतियों का समावेश किया गया है। परिशिष्ट के रूप में सार्वजनिक जैन पुस्तकालयों व शास्त्र भण्डारों, जैन साहित्यिक संस्थाओं, जैन पुस्तक विक्रेताओं, तत्कालीन ग्रन्थ प्रणेता साहित्य सेवी विशिष्ट जैन विद्वानों एवं जैन साहित्य सेवी प्रसिद्ध अजैन विद्वानों की अत्यन्त मूल्यवान सूचियां भी दी गयी हैं। पुस्तक में डॉ. साहब ने जैन धर्मानुयायियों द्वारा की गयी साहित्य सेवा, उक्त साहित्य के मुद्रण-प्रकाशन का इतिहास, जैन पत्रकारिता का इतिहास, तथा जैन कला, पुरातत्व, अभिलेखों व प्रशस्तियों आदि पर ८९ पृष्ठ की अत्यंत विशद एवं सारगर्भित भूमिका भी लिखी है। अपनी उपयोगिता के कारण यह कृति विद्वत्-जगत में प्रचुर रूप में समादृत हुयी।

कीर्ति-शेष डॉ० ज्योति प्रसाद जैन को अनेक विद्वानों की कृतियों पर अंग्रेजी व हिन्दी में सारगर्भित सम्पादकीय अथवा प्रधान सम्पादकीय एवं प्राक्कथन लिखने का श्रेय भी प्राप्त है, जिनमें भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित आचार्य वट्टकेर विरचित **मूलाचार,** महाकवि पुष्पदंत विरचित **महापुराण (प्रथम भाग)**, पण्डित प्रवर

आशाधर कृत **धर्मामृत (सागार)** व **धर्मामृत (अनगार),** आचार्य नेमिचंद्र सिद्धांत चक्रवर्ती विरचित **गोम्मटसार (जीव काण्ड)** और पं० बाल चंद्र शास्त्री के **षट्खण्डागम परिशीलन** में प्रधान सम्पादकीय उल्लेखनीय है। सन् १९९१ में जैन सिद्धान्त भवन, आरा, से प्रकाशित मुनि केशराज कृत **जैन रामायण "राम-यशो-रसायन-रास"** में सम्पादकीय एवं सन् १९७९ में वीर सेवा मंदिर, दिल्ली, से प्रकाशित बालचंद्र सिद्धांतशास्त्री कृत **जैन लक्षणावली (तृतीय भाग)** में आमुख भी विशेष उल्लेखनीय हैं।

श्रद्धेय डॉ० साहब ने अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद द्वारा सन् १९७४ में डॉ० नेमिचंद्र शास्त्री ज्योतिषाचार्य द्वारा रचित चार खण्डों वाली **तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा** ग्रन्थावली की तैयार पाण्डुलिपि के वाचन में अनेक बहुमूल्य सुझाव देकर उसे उपयोगी बनाने में सराहनीय भूमिका अदा की। सन् १९७५ में भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाणोत्सव पर भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा अंग्रेजी व हिन्दी दोनों भाषाओं में तीन खण्डों में प्रकाशित **जैन कला एवं स्थापत्य (Jaina Art and Architecture)** का सम्पादन भूतपूर्व महानिदेशक, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, श्री अमलानंद घोष द्वारा किया गया, किन्तु इसी दौरान १९७३ में श्री घोष के एक वर्ष के लिये इण्डोनेशिया प्रवास पर जाने के समय जैन कला मर्मज्ञ डॉ० ज्योति प्रसाद जैन ने प्रथम खण्ड के कतिपय अध्यायों की समालोचना-सम्पादन किया और 'जैन कला का उद्गम और उसकी आत्मा' शीर्षक से चौथा अध्याय स्वयं लिखकर ग्रन्थ माला की गरिमा में वृद्धि की।

डॉ० साहब ने प्राचीन प्राकृत ग्रंथ **झाणाझयणं** का अंग्रेजी अनुवाद भी किया, जो सन् १९६४-६५ में **Voice of Ahimsa** में धारावाहिक रूप में प्रकाशित किया गया।

पूज्य डॉ० साहब ने अनेकों विद्वानों की सहस्राधिक पुस्तकों की अत्यन्त विश्लेषणात्मक समीक्षा भी की है, जो समय-समय पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुयी। तत्कालीन समस्त जैन पत्र-पत्रिकाएं डॉ० साहब की चमत्कारिक लेखनी का स्पर्श कर गर्व का अनुभव करती थीं।

डॉ० साहब गद्य के साथ-साथ पद्य-लेखन में भी कुशल थे। आपने अनेक कविताएं, सेहरे व आध्यात्मिक पद्य भी लिखे, जिनमें से **वीतराग स्वरूपं** में और **जय महावीर नमो** विशेष उल्लेखनीय हैं। पूज्य पिता जी, 'सम्पादक सरताज' श्री रमा

कान्त जैन जी, अक्सर बताते थे कि उनके श्रद्धेय पिता डॉ० साहब ने कहानियां भी लिखी हैं व एक उपन्यास भी लिखा है, जो अप्रकाशित हैं। डॉ० साहब की वार्ताएं आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से भी प्रसारित हुयीं, जिनमें उनके महाप्रयाण से कुछ माह पूर्व २४-०१-१९८८ को प्रसारित वार्ता **'नदिया एक, घाट बहुतेरे'** का विशेष उल्लेख अपेक्षित है। डॉ० साहब नियमित देव-दर्शन, स्वाध्याय, धार्मिक चर्चा-गोष्ठी एवं शास्त्र प्रवचन करते थे। जैन पर्यूषण-पर्व के अवसर पर जीवन-पर्यन्त आपने लखनऊ के चारबाग, चौक आदि विभिन्न जैन-मंदिरों में अपने विद्वत्ता-पूर्ण शास्त्र-प्रवचनों से समाज को धर्म के मार्ग पर चलकर सद्गुणों को व्यावहारिक रूप में अपनाने की प्रेरणा दी।

कीर्ति-शेष डॉ. साहब अपने अध्ययन-लेखन व्यसन के बीच समाज की अनेकों साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक संस्थाओं के मार्ग-दर्शन हेतु भी पर्याप्त समय निकाल लेते थे। वे भारतीय ज्ञानपीठ के न्यासी सदस्य, वैशाली के प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान के पार्षद, नागरी प्रचारिणी सभा आगरा के सक्रिय सदस्य, स्याद्वाद महाविद्यालय वाराणसी के उपाध्यक्ष, देव कुमार प्राच्य शोध संस्थान आरा के सदस्य, श्री जैन सिद्धान्त भवन आरा के कार्यकारिणी सदस्य, जैन साहित्य शोध संस्थान आगरा के परामर्शदाता, वीर सेवा मन्दिर 'युगवीर' ट्रस्ट के न्यासी सदस्य, अखिल विश्व जैन मिशन के प्रधान संचालक, श्रमण साहित्य संस्थान दिल्ली के परामर्शदाता, भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद के कार्यकारिणी सदस्य, दिगम्बर जैन महासमिति के सदस्य, भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद की पुरस्कार समिति के सदस्य, उ.प्र. दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के कार्यकारिणी सदस्य, जैनधर्म प्रवर्द्धिनी सभा लखनऊ के उपसभापति, जैन मिलन लखनऊ के संरक्षक, अग्रवाल सभा लखनऊ के कार्यकारिणी सदस्य, सर्व धर्म मिलन लखनऊ के सदस्य, और जैनालॉजिकल रिसर्च सोसाइटी के परामर्शदाता रहे थे। डॉ. साहब तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., के संस्थापक-सदस्य एवं उसकी समस्त शोध-प्रवृत्तियों के जीवन-पर्यन्त मानद निदेशक रहे।

अपनी शोध-अनुसन्धान प्रवृत्ति के कारण ही आपने अपने आवास **'ज्योति निकुंज'** में एक अच्छा खासा पुस्तकालय स्थापित कर लिया था। आपकी प्रेरणा से ही जैन विषयों पर अनुसंधान करने वाले शोधार्थियों को प्रायः महसूस होने वाली कमी को पूरा करने के उद्देश्य से तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति,

उ.प्र., के तत्वावधान में एक **शोध-पुस्तकालय** की स्थापना भी की गयी। डॉ. साहब का हमेशा यही निर्देश रहता था कि पुस्तकालय में समस्त जैन आम्नायों का साहित्य और जैनेतर साहित्य भी रखा जाय ताकि आने वाले शोधार्थी सम्यक् रूप से विषय का तुलनात्मक अध्ययन कर सकें।

डॉक्टर साहब ने यह भी महसूस किया था कि प्रायः जैन समाज में पत्र-पत्रिकाओं के किसी-न-किसी संस्था, संगठन, व्यक्ति, अथवा विचारधारा से संबद्ध होने के कारण वे स्वतंत्र चिन्तन-लेखन को प्रोत्साहित नहीं कर पाती हैं। विशेषकर शोध-अनुसंधान के क्षेत्र में यह स्थिति विषय के तथ्य-सापेक्ष प्रस्तुतिकरण की दिशा में सबसे बड़ी बाधा है। **अतः आपने तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., के तत्वावधान में शोध के प्रतिमान को प्रदर्शित और स्थापित करने वाली चातुर्मासिक शोध-पत्रिका 'शोधादर्श' का प्रकाशन अपने सम्पादन में प्रारम्भ किया, जो पूर्णतः स्वतंत्र चिन्तन-लेखन को प्रोत्साहित करते हुए समाज में अपना एक विशिष्ट स्थान बनाये हुए है।**

श्रद्धेय डॉ. साहब का लेखन-कार्य जीवन-पर्यन्त पूर्णतः स्वान्तः सुखाय रहा। कभी भी वे श्रेय लेने की दौड़, पुरस्कार, अभिनन्दन-ग्रंथ, स्मृति-ग्रंथ आदि के चक्कर में नहीं पड़े। वे **'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन्'** सिद्धान्त को मानने वाले थे और सदैव अपने कर्म के प्रति समर्पित व दृढ़-निश्चयी रहे, फल की वे कदापि चिन्ता नहीं करते थे, इसीलिए सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द शास्त्री ने डॉ. साहब को **गीता** के **'स्थिति-प्रज्ञ'** की संज्ञा दी थी। आपने अपनी अल्प बचत के एक हिस्से से अपने शोध-लेखन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अपना एक निजी ट्रस्ट बनाया था। यदा-कदा भूले-भटके कोई सुधी पाठक पुस्तक के सदुपयोग मूल्य पत्रम्-पुष्पम् को गल्ती से उन्हें भेज देता था तो वे उसे निर्माल्य मानकर अपने उसी ट्रस्ट में साहित्यिक उद्देश्य में लगा देते थे, अपने लिये कुछ न रखते थे। इसीलिये मैंने पूज्य पितामह डॉक्टर साहब को आजीवन अपने अध्ययन-कक्ष में वही पुराने तख्त व मेज पर किताबों-कागज के पन्नों के ढेर से घिरे सिर्फ बनियान और धोती पहने और ऊपर वही रो-रोकर चलते पंखें के साथ साहित्य-साधना में लीन देखा। इन अभावों में भी उन्हें किसी श्रेष्ठि या नेता के समक्ष अपने स्वाभिमान व लेखनी का समझौता करते मैंने कभी नहीं देखा, लेकिन अपने पुरुषार्थ की सफलता का तेज सदैव उनके चेहरे को ज्योतिर्मय बनाये रखता था।

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-लब्ध विद्वान मनीषी होने के बावजूद आप में अहंकार लेश मात्र न था। आपका व्यवहार अत्यन्त सरल व सादगीपूर्ण था। मैंने प्रायः देखा था कि लखनऊ चारबाग मंदिर के ठीक सामने स्थित शोध-पुस्तकालय कक्ष में दर्शन-पूजन के पश्चात् वे नियमित शास्त्र प्रवचन किया करते थे। उसी परिसर में मुन्ने लाल कागजी जैन धर्मशाला भी थी, अधिकांशतः जैनी भाई यहाँ ठहरने आते थे, जब भी कोई अजनबी व्यक्ति या अपरिचित चेहरा उन्हें दृष्टिगत होता था, वे स्वयं उसे बुलाकर अपने पास बैठा लेते और उसका परिचय प्राप्त करते। साथ ही, कोई कठिनाई होने पर नजदीक स्थित अपने आवास पर आने का निमंत्रण तक दे आते। वे बच्चों और युवाओं को सदैव अपने धर्म-संस्कृति के बारे में पठन-लेखन के लिए प्रोत्साहित करते रहते थे। उनकी इसी सहयोगात्मक एवं प्रेरणादायी प्रकृति के कारण उनके बिना किसी विश्वविद्यालय से संबद्ध रहते हुए भी अनेको शोधार्थियों ने उनके निर्देशन का लाभ उठाकर जैन विषयों पर अपने शोध-प्रबंध पूर्ण किये।

व्यक्तिगत व्यवहार में इतने सरल और सहयोगी होने के बावजूद वे अपने चिन्तन व लेखन में पूर्णतः निर्भीक, स्वतंत्र एवं निष्पक्ष थे। समाज में दृष्टिगत विकृतियों पर खुल कर चर्चा करते थे किन्तु आपकी भाषा इतनी संयमित और तर्क संगत होती थी कि जीवनपर्यंत वे किसी वाद-विवाद का अंग नहीं बने। सभी आम्नायों के विद्वानों की विचार-गोष्ठियों का केन्द्र उनकी लखनऊ स्थित कर्मभूमि **ज्योति निकुंज** बना रहता था।

भारतीय इतिहास, साहित्य और जैन-विद्या के क्षेत्र में श्रद्धेय डॉ० साहब के अप्रतिम अवदान हेतु दिनांक २९-०४-१९५८ को अखिल विश्व जैन मिशन के भोपाल अधिवेशन में उन्हें **इतिहास-रत्न**, जनवरी १९७४ में वीर निर्वाण भारती द्वारा मेरठ में **विद्यावारिधि** तथा १२-०२-१९७९ को अनन्त-ज्योति विद्यापीठ, लखनऊ, द्वारा **इतिहास-मनीषी** की उपाधियों से एवं १४-१२-१९८८ को अहिंसा इंटरनेशनल द्वारा **डिप्टीमल जैन पुरस्कार** से दिल्ली में, सम्मानित किया गया।

६ फरवरी २०१२ को कीर्ति-शेष डॉ० साहब द्वारा स्थापित 'ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट', द्वारा उनके तपोकुंज **ज्योति निकुंज** में उनके जीवन की सादगी के दृष्टिगत उनका **जन्म-शताब्दी समारोह** सादगी पूर्ण तरीके से मनाया गया। समारोह के अध्यक्ष केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, लखनऊ, के प्रोफेसर डॉ० विजय कुमार जैन ने अपने संबोधन में अत्यन्त खेद के साथ एक तपस्वी साहित्यकार की पीड़ा व्यक्त करते

हुए कहा कि **डॉक्टर साहब की जन्म-शताब्दी कार्यक्रम के आयोजन का दायित्व जैन समाज का था, जिसका निर्वाह उनके परिवार द्वारा किया गया है।** आज भी देश-विदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयों, पुस्तकालयों और शोधार्थियों द्वारा **युग-पुरुष डॉ० ज्योति प्रसाद जैन** की पुस्तकों के मांग-पत्र भेजे जाते हैं और उनके कृतित्व की प्रामाणिकता को स्वीकार कर उनके अनुसंधान-निष्कर्षों की भूरि-भूरि सराहना की जाती है, तब बरबस महाकवि **मीर** की यही पंक्तियाँ स्मरण हो आती हैं -

पत्ता-पत्ता, बूटा-बूटा हाल हमारा जाने है।
जाने न जाने गुल ही न जाने, बाग तो सारा जाने है।।

आज ऐसे यशस्वी मनीषी गुरु की जन्म-शताब्दी के पुनीत अवसर पर युवा इतिहासकारों-शोधार्थियों से यही आग्रह है कि वे भी **शलाका-पुरुष डॉ० ज्योति प्रसाद जैन जी** की भांति बिना किसी जाति-धर्म-पंथ-आम्नाय भेद के उपलब्ध समस्त स्रोतों का अधिकाधिक शोध-खोज करके पिष्टपेषण-निरपेक्ष और तथ्य-सापेक्ष सदुपयोग करते हुए भारतीय इतिहास और संस्कृति के विविध पहलुओं को समृद्ध करें। **ज्योति निकुंज** एवं **शोधादर्श** परिवार भी डॉक्टर साहब के इन्हीं पद-चिन्हों का अनुसरण करने हेतु कृत-संकल्प है।

- अंशु जैन 'अमर'
सह-सम्पादक, शोधादर्श

गुणानुवादः

ज्योति के समान तेजपुंज से सुदीप्त थे
ऋजु सरल स्वभाव के प्रसाद गुणस्वरूप थे
याकि ज्योतिरूप ज्ञान के प्रसादरूप थे
जैन धर्म के महर्षि ज्योति प्रसाद जैन थे
प्रेरणा सदैव दी ज्ञानप्राप्ति की हमें
ज्ञान के अगाध सिन्धु से दिये रतन हमें
अन्धकार से हमें उबार ज्योति से किया
दीप्तिमान, नित्य प्रेम में हमें डुबो दिया
उन्हें सदैव हम विनम्र सिर झुका स्मरण करें
सदैव वे विकास का प्रकाशमान पथ करें

विनीत
काशीनाथ गोपाल गोरे

जैन कला का उद्‌गम और उसकी आत्मा

- डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

जैनधर्म का उद्‌देश्य है मनुष्य की परिपूर्णता अर्थात् संसारी आत्मा की स्वयं परमात्मत्व में परिणति। व्यक्ति में जो अन्तर्निहित दिव्यत्व है उसे स्वात्मानुभूति द्वारा अभिव्यक्त करने के लिये यह धर्म प्रेरणा देता है और सहायक होता है। सामान्यतः इस मार्ग में कठोर अनुशासन, आत्म-संयम, त्याग और तपस्या की प्रधानता है। किन्तु एक प्रकार से कला भी दिव्यत्व की प्राप्ति का और उसके साथ एकाकार हो जाने का पवित्रतम साधन है, और कदाचित् यह कहना भी अतिशयोक्ति न होगा कि 'धर्म के याथार्थ स्वरूप की उपलब्धि में यथार्थ कलाबोध जितना अधिक सहायक है उतना अन्य कुछ नहीं।' संभवतया यही कारण है कि जैनों ने सदैव ललित कलाओं के विभिन्न रूपों और शैलियों को प्रश्रय एवं प्रोत्साहन दिया। कलाएं, निस्सन्देह, मूलतः धर्म की अनुगामिनी रहीं किन्तु उन्होंने इसकी साधना की कठोरता को मृदुल बनाने में भी सहायता की। धर्म के भावनात्मक, भक्तिपरक एवं लोकप्रिय रूपों के पल्लवन के लिये भी कला और स्थापत्य की विविध कृतियों के निर्माण की आवश्यकता हुई, अतः उन्हें वस्तुतः सुन्दर बनाने में श्रम और धन की कोई कमी नहीं की गयी। जैनधर्म की आत्मा उसकी कला में स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित है, वह यद्यपि बहुत विविधतापूर्ण और वैभवशाली है परन्तु उसमें जो श्रृंगारिकता, अश्लीलता या सतहीपन का अभाव है, वह अलग ही स्पष्ट हो जाता है। वह सौंदर्यबोध के आनंद की सृष्टि करती है पर उससे कहीं अधिक, संतुलित, सशक्त, उत्प्रेरक और उत्साहवर्धक है और आत्मोत्सर्ग, शांति और समत्व की भावनाओं को उभारती है। उसके साथ जो एक प्रकार की अलौकिकता जुड़ी है, वह आध्यात्मिक चिंतन एवं उच्च आत्मानुभूति की प्राप्ति में निमित्त है।

विभिन्न शैलियों और युगों की कला एवं स्थापत्य की कृतियां समूचे देश में बिखरी हैं, परन्तु जैन तीर्थस्थल विशेष रूप से, सही अर्थों में कला का भण्डार हैं। और, एक जैन मुमुक्षु का आदर्श ठीक वही है, जो 'तीर्थयात्री' शब्द से व्यक्त होता है, जिसका अर्थ है ऐसा प्राणी जो सांसारिक जीवन में अजनबी की भांति यात्रा करता रहता है। वह सांसारिक जीवन जीता है, अपने कर्तव्यों का पालन और दायित्वों का निर्वाह सावधानीपूर्वक करता है, तथापि उसकी मनोवृत्ति एक अजनबी दृष्टा या पर्यवेक्षक की

बनी रहती है। वह वाह्य दृश्यों से अपना एकत्व नहीं जोड़ता और न ही सांसारिक संबंधों और पदार्थों में अपने आप को मोहग्रस्त होने देता है। वह एक ऐसा यात्री है जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र के त्रिविध मार्ग का अवलम्बन लेकर अपनी जीवनयात्रा करता है और अपनी आध्यात्मिक प्रगति के पथ पर तब तक बढ़ता चला जाता है जब तक कि वह अपने लक्ष्य अर्थात् निर्वाण की प्राप्ति नहीं कर लेता। वास्तव में, जैनधर्म में पूजनीय या पवित्र स्थान को तीर्थ (घाट) कहते हैं क्योंकि वह दुःखों और कष्टों से पूर्ण संसार को पार करने में मुमुक्षु के लिये सहायक होता है और निरंतर जन्म-मरण के उस भ्रमण से मुक्त होने में भी सहायता देता है जो इस सहायता के बिना कभी मिट नहीं सकता। यही कारण है कि जैन तीर्थयात्रा का वास्तविक उद्देय आत्मोत्कर्ष है। कदाचित् इसीलिये जैनों ने अपने तीर्थक्षेत्रों के लिये जिन स्थानों को चुना, वे पर्वतों की चोटियों पर या निर्जन और एकांत घाटियों में जनपदों और भौतिकता से ग्रसित सांसारिक जीवन की आपाधापी से भी दूर, हरे-भरे प्राकृतिक दृश्यों तथा शांत मैदानों के मध्य स्थित हैं, जो एकाग्र ध्यान और आत्मिक चिंतन में सहायक एवं उत्प्रेरक होते हैं। ऐसे स्थान के निरंतर पुनीत संसर्ग से एक अतिरिक्त निर्मलता का संचार होता है और वातावरण आध्यात्मिकता, अलौकिकता, पवित्रता और लोकोत्तर शांति से पुनर्जीवित हो उठता है। वहां, वास्तु-स्मारकों (मंदिर-देवालयों आदि) की स्थापत्य कला और सबसे अधिक मूर्तिमान तीर्थंकर प्रतिमाएँ अपनी अनंत शांति, वीतरागता और एकाग्रता से भक्त तीर्थयात्री को स्वयं "परमात्मत्व" के सन्निधान की अनुभूति करा देती है। आश्चर्य नहीं यदि वह पारमार्थिक भावातिरेक में फूट पड़ता है :

चला जा रहा तीर्थक्षेत्र में अपनाए भगवान को।
सुन्दरता की खोज में, मैं अपनाए भगवान को।।

तीर्थक्षेत्रों की यात्रा भक्त-जीवन की एक अभिलाषा है। ये स्थान, उनके कलात्मक मंदिर, मूर्तियां आदि जीवंत स्मारक है मुक्तात्माओं के, महापुरुषों के, धार्मिक तथा स्मरणीय घटनाओं के; इनकी यात्रा पुण्यवर्धक और आत्मशोधक होती है, यह एक ऐसी सच्चाई है जिसका समर्थन तीर्थयात्रियों द्वारा वहां बिताये जीवन से होता है। नियम, संयम, उपवास, पूजन, ध्यान, शास्त्र-स्वाध्याय, धार्मिक प्रवचनों का श्रवण, भजन-कीर्तन, दान और आहारदान आदि विविध धार्मिक कृत्यों में ही उनका अधिकांश समय व्यतीत होता है। विभिन्न व्यवसायों और देश के विभिन्न प्रदेशों से

आये आबाल-वृद्ध-नर-नारी वहां पूर्ण शांति और वात्सल्य से पुनीत विचारों में मग्न रहते हैं।

यह एक तथ्य है कि भारत की सांस्कृतिक धरोहर को समृद्ध करने वालों में जैन अग्रणी रहे हैं। देश के सांस्कृतिक-भण्डार को उन्होंने कला और स्थापत्य की अगणित विविध कृतियों से संपन्न किया जिनमें से अनेकों की भव्यता और कला-गरिमा इतनी उत्कृष्ट बन पड़ी है कि उनकी उपमा नहीं मिलती और उनपर ईर्ष्या की जा सकती है।

यह भी एक तथ्य है कि जैन कला प्रधानतया धर्मोन्मुख रही, और जैन जीवन के प्रायः प्रत्येक पहलू की भांति कला और स्थापत्य के क्षेत्र में भी उनकी विश्लेषणात्मक दृष्टि और यहां तक कि वैराग्य की भावना भी इतनी अधिक परिलक्षित है कि परम्परागत जैन कला में नीतिपरक अंकन अन्य अंकन पर छा गया दिखता है, इसीलिये किसी-किसी को कभी यह खटक सकता है कि जैन कला में उसके विकास के साधक विशुद्ध सौंदर्य को उभारने वाल तत्वों का अभाव है। उदाहरणार्थ, **मानसार** आदि ग्रंथों में ऐसी सूक्ष्म व्याख्याएं मिलती हैं जिनमें मूर्ति-शिल्प और भवन-निर्माण की एक रूढ़ पद्धति दीख पड़ती है और कलाकार से उसी का कठोरता से पालन करने की अपेक्षा की जाती थी। किन्तु, यही बात बौद्ध और ब्राह्मण धर्मों की कला में भी विद्यमान है, यदि कोई अंतर है तो वह श्रेणी का है।

जैन मूर्तियों में जिनों या तीर्थंकरों की मूर्तियां निस्संदेह सर्वाधिक हैं और इस कारण यह आलोचना तर्कसंगत लगती है कि उनके प्रायः एक-जैसी होने के कारण कलाकार को अपनी प्रतिभा के प्रदर्शन का अवसर कम मिल सका। पर इनमें भी अनेक मूर्तियां अद्वितीय बन पड़ी हैं, यथा कर्नाटक के श्रवणबेलगोल की विश्वविख्यात विशालाकाय गोम्मट-प्रतिमा, जिसके विषय में हैनरिख ज़िम्मर ने लिखा हैः 'वह आकार-प्रकार में मानवीय है, किन्तु हिमखण्ड के सदृश्य मानवोत्तर भी, तभी तो वह जन्म-मरण के चक्र, शारीरिक चिंताओं, व्यक्तिगत नियति, वासनाओं, कष्टों और होनी-अनहोनी के सफल परित्याग की भावना को भलीभांति चरितार्थ करती है।' एक अन्य तीर्थंकर मूर्ति की प्रशंसा में वह कहते हैंः 'मुक्त पुरुष की मूर्ति न सजीव लगती है न निर्जीव, वह तो अपूर्व, अनंत शांति से ओतप्रोत लगती है।' एक अन्य दृष्टा कायोत्सर्ग तीर्थंकर मूर्ति के विषय में कहता है कि 'अपराजित बल और अक्षय शक्ति मानो जीवंत हो उठे हैं, वह शालवृक्ष (शाल-प्रांशु) की भांति उन्नत और विशाल है।'

अन्य प्रशंसकों के शब्द हैं 'विशालकाय शांति, सहज भव्यता या परिपूर्ण काय-निरोध की सूचक कायोत्सर्ग मुद्रा जिससे ऐसे महापुरुष का संकेत मिलता है जो अनंत, अद्वितीय केवलज्ञानगम्य सुख का अनुभव करता है और ऐसे अनुभव से वह उसी प्रकार अविचलित रहता है जिस प्रकार वायु-विहीन स्थान में अचंचल दीप-शिखा।' इससे ज्ञात होता है कि तीर्थंकर मूर्तियां उन विजेताओं की प्रतिबिम्ब हैं जो, ज़िम्मर के शब्दों में, 'लोकाग्र में सर्वोच्च स्थान पर स्थित हैं और क्योंकि वे रागभाव से अतीत हैं अतः संभावना नहीं कि उस सर्वोच्च और प्रकाशमय स्थान से स्खलित होकर उनका सहयोग मानवीय गतिविधियों के इस मेघाच्छन्न वातावरण में आ पड़ेगा। तीर्थ-सेतु के कर्ता विश्व की घटनाओं और जैविक समस्याओं से भी निर्लिप्त हैं, वे अतीन्द्रिय, निश्चल, सर्वज्ञ, निष्कर्म और शश्वत शांत हैं।' यह तो एक आदर्श है जिसकी उपासना की जाये, प्राप्ति की जाये; यह कोई देवता नहीं जिसे प्रसन्न किया जाये, तृप्त या संतुष्ट किया जाये। स्वभावतः इसी भावना से जैन कला और स्थापत्य की विषय वस्तु ओतप्रोत है। ❖

❖ **तुलनीय :**

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः
ज्ञान-विज्ञान-तृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
समं काय-शिरो-ग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः
संप्रेक्ष्यं नासिकाग्रं स्वं दिशश्चनवलोकयन्।
यथा दीपो विवातस्थो नेङ्गवे सापमा स्मृता
योगिनो यत-चित्तस्य गुञ्जतो योगमात्मनः।

(**भगवद्गीता,** अध्याय ६, श्लोक ७, ८, १३ और १९)

आजानु-लम्ब-बाहुः श्रीवत्साङ्कः प्रशान्त-मूर्तिश्च
दिग्वासास्तरुणो रूपवांश्च कार्योर्हतां देवः।

(वराहमिहिर कत **वृहत्संहिता,** ५८. ४५)

शान्त-प्रसन्न-मध्यस्थ-नासाग्रस्थाविकार-दृक्
सम्पूर्ण-भाव-रूपानुविद्धाङ्गं लक्षणान्वितम्।
रौद्रादि-दोष-निर्मुक्तं प्रातिहार्याङ्क-पक्ष-युक्
निर्माण विधिना पीठे जिन-बिम्ब निवशयेत्।

(आशाधर कत **प्रतिष्ठासारोद्धार,** ६३, ६४;
मानसार तथा अन्य ग्रंथ भी दृष्टव्य)

किन्तु, दूसरी ओर, इन्द्र और इंद्राणी, तीर्थंकरों के अनुचर यक्ष और यक्षी, देवी सरस्वती, नवग्रह, क्षेत्रपाल और सामान्य भक्त नर-नारी, जैन देव-निकाय के अपेक्षाकृत कम महत्व के देवताओं या देवतुल्य मनुष्यों के मूर्तन में, तीर्थंकरों और अतीत के अन्य सुविख्यात पुरुषों के जीवन चरित्र के दृश्यांकनों में, और विविध अलंकरण प्रतीकों के प्रयोग में कलाकार किन्हीं कठोर सिद्धांतों से बंधा न था, वरन् उसे अधिकतर स्वतंत्रता थी। इसके अतिरिक्त भी कलाकार को अपनी प्रतिभा के प्रदर्शन का पर्याप्त अवसर था, प्राकृतिक दृश्यों तथा समकालीन जीवन की धर्म-निरपेक्ष गतिविधियों के शिल्पांकन या चित्रांकन द्वारा जो कभी-कभी विलक्षण बन पड़े, जिनसे विपुल ज्ञातव्य तत्व प्राप्त होते हैं और जिनमें कलात्मक सौंदर्य समाया हुआ है। पर, इन सब में भी कलाकार को जैन धर्म की शुद्धाचार नीति को ध्यान में रखना था, इसीलिये उसे श्रृंगार, अश्लीलता और अनैतिक दृश्यों की उपेक्षा करनी पड़ी।

जहां तक स्थापत्य का प्रश्न है, आरंभ में जैन साधु क्योंकि अधिकतर वनों में रहते थे और भ्रमणशील होते थे, अतः जनपदों से दूर पर्वतों के पार्श्वभाग में या चोटियों पर स्थित प्राकृतिक गुफाएं उनके अस्थायी आश्रय तथा आवास के उपयोग में आयीं। यहां तक कि आरंभ में निर्मित गुफाएं सादी थीं और सल्लेखना धारण करने वालों के लिये उनमें पालिशदार प्रस्तर-शय्याऐं प्रायः बना दी जाती थीं। तीसरी/चौथी शती ईस्वी से, जनपदों से हटकर बने मंदिरों या अधिष्ठानों में लगभग स्थायी रूप से रहने की प्रवृत्ति जैन साधुओं के एक बड़े समूह में चल पड़ी, इससे शैलोत्कीर्ण गुफा-मंदिरों के निर्माण को प्रोत्साहन मिला। जैसा कि स्मिथ ने लिखा है : 'इस धर्म की विविध व्यावहारिक आवश्यकताओं ने, निस्संदेह, विशेष कार्यों के लिये अपेक्षित भवनों की प्रवृत्ति को भी प्रभावित किया।' तथापि, जैन साधु अपने जीवन में संयम-धर्म को कभी अलग न कर सके। संभवतया यही कारण है कि अजंता और ऐलोरा युगों में भी, थोड़ी संख्या में ही जैन गुफाओं का निर्माण हुआ, और पांचवीं से बारहवीं शताब्दियों के मध्य ऐसे लगभग तीन दर्जन मात्र गुफा-मंदिर ही निर्मित किये गये, वे भी केवल दिगम्बर आम्नाय द्वारा; श्वेताम्बर साधुओं ने पहले ही जनपदों में या उनके समीप रहना आरंभ कर दिया था।

मंदिर स्थापत्य कला का विकास प्रत्यक्षतः मूर्ति पूजा के परिणामस्वरूप हुआ जो जैनों में कम से कम इतिहास-काल के आरंभ से प्रचलित रही है। बौद्ध ग्रंथों में

उल्लेख है कि वज्जि देश और वैशाली में अर्हत्-चैत्यों का अस्तित्व था जो बुद्धपूर्व अर्थात् महावीर-पूर्व काल से विद्यमान थे, (तुलनीय : **महा-परिनिब्बान-सुत्तन्त**)। चौथी शती ईसा-पूर्व से हमें जैन मूर्तियों, गुफा-मंदिरों और निर्मित देवालयों या मंदिरों के अस्तित्व के प्रत्यक्ष प्रमाण मिलने लगते हैं।

अपने मंदिरों के निर्माण में जैनों ने विभिन्न क्षेत्रों और कालों की प्रचलित शैलियों को तो अपनाया, किन्तु उन्होंने अपनी स्वयं की संस्कृति और सिद्धांतों की दृष्टि से कुछ लाक्षणिक विशेषताओं को भी प्रस्तुत किया जिनके कारण जैन कला को एक अलग ही स्वरूप मिल गया। कुछ स्थानों पर उन्होंने समूचे 'मंदिर-नगर' ही खड़े कर दिये।

मानवीय मूर्तियों के अतिरिक्त, आलंकारिक मूर्तियों के निर्माण में भी जैनों ने अपनी ही शैली अपनायी, और स्थापत्य के क्षेत्र में अपनी विशेष रुचि के अनुरूप स्तम्भाधारित भवनों के निर्माण में उच्च कोटि का कौशल प्रदर्शित किया। इनमें से कुछ कला-समृद्ध भवनों की विख्यात कला-मर्मज्ञों ने प्राचीन और आरंभिक मध्यकालीन भारतीय स्थापत्य की सुन्दरतम कृतियों में गणना की है। बहुत बार, उत्कीर्ण और तक्षित कलाकृतियों में मानव-तत्व इतना उभर आया है कि विशाल, निर्ग्रंथ दिगम्बर जैन मूर्तियों में जो कठोर संयम साकार हो उठा लगता है उसका प्रत्यावर्तन हो गया। कला-कृतियों की अधिकता और विविधता के कारण उत्तरकालीन जैन कला ने इस धर्म की भावात्मकता को अभिव्यक्त किया है।

जैन-मंदिरों और वसदियों के सामने, विशेषतः दक्षिण भारत में, स्वतंत्र खड़े स्तम्भ जैनों का एक अन्य योगदान है। मानस्तम्भ कहलाने वाला यह स्तम्भ उस स्तम्भ का प्रतीक है जो तीर्थंकर के समवसरण (सभागार) के प्रवेशद्वारों के भीतर स्थित कहा जाता है। स्वयं जिन-मंदिर समवसरण का प्रतीक है।

जैन स्थापत्यकला के आद्य रूपों में स्तूप एक रूप है, इसका प्रमाण मथुरा के कंकाली टीले के उत्खनन से प्राप्त हुआ है। वहां एक ऐसा स्तूप था जिसके विषय में ईस्वी सन् के आरंभ तक यह मान्यता थी कि उसका निर्माण सातवें तीर्थंकर के समय में देवों द्वारा हुआ था और पुनर्निर्माण तेईसवें तीर्थंकर के समय में किया गया था। यह स्तूप कदाचित् मध्यकाल के आरंभ तक विद्यमान रहा। किन्तु, गुप्त-काल की समाप्ति के समय तक जैनों की रुचि स्तूप के निर्माण में नहीं रह गयी थी।

एक बात और, जैसा कि लांगहर्स्ट का कहना है, 'स्थापत्य पर वातावरण के प्रभाव का यथोचित महत्त्व समझते हुये हिन्दुओं की अपेक्षा जैनों ने अपने मंदिरों के निर्माण के लिये सदैव प्राकृतिक स्थान को ही चुना।' उन्होंने जिन अन्य ललित कलाओं का उत्साहपूर्वक सृजन किया उनमें सुलेखन, अलंकरण, लघुचित्र और भित्तिचित्र, संगीत और नृत्य हैं। उन्होंने सैद्धांतिक पक्ष का भी ध्यान रखा और कला, स्थापत्य, संगीत एवं छंदशास्त्र पर मूल्यवान ग्रन्थों की रचना की।

कहने की आवश्यकता नहीं कि जैन कला और स्थापत्य में जैन धर्म और जैन संस्कृति के सैद्धांतिक और भावनात्मक आदर्श अत्यधिक प्रतिफलित हुये हैं, जैसा कि होना भी चाहिये था।

दृष्टव्य :

Heinrich Zimmer - Philosophies of India, pp.181-82

V. A. Smith - History of Fine Arts in India and Ceylon, p.9

A. H. Longhurst - Hampi Ruins, p.99

Jyoti Prasad Jain - The Jaina Sources of the History of Ancient India, ch X

Religion and Culture of the Jains, ch. VIII

जैन कला एवं स्थापत्य, ३ खण्ड (१९७५)

(भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित **जैन कला एवं स्थापत्य** के खण्ड १ के अध्याय ४ से साभार उद्धृत - सम्पादक)

ऐतिहासिक परिदृश्य

— डॉ. शशि कान्त

18वीं शती के उत्तरार्ध से 20वीं शती के पूर्वार्ध का भारत — उत्तर प्रदेश — ऐतिहासिक मेरठ — हमारा वंश

18वीं शती के उत्तरार्ध से 20वीं शती के पूर्वार्ध का भारत

भारत के इतिहास में ईस्वी सन् की 18वीं शताब्दी का विशेष महत्व है। 23 जून 1757 को पलासी के युद्ध में अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया की जीत ने भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना के बीज बोये। इस युद्ध में मुगल साम्राज्य के अंतर्गत बंगाल के सूबेदार सिराजुद्दौला की पराजय हुई थी। उसके बाद 22 अक्टूबर 1764 को बक्सर के युद्ध में मुगल सेना की पराजय भी हुई और इस प्रकार मुगल साम्राज्य की सत्ता का प्रायः अंत हो गया।

13 जनवरी 1761 को पानीपत में मराठा सेना को विदेशी आक्रमणकर्ता अहमदशाह दुर्रानी (अब्दाली) के हाथों पराजय झेलनी पड़ी। मराठों की इस पराज़य ने पेशवा की भारत पर सर्वोच्च सत्ता की आकांक्षा को ध्वस्त कर दिया। अवध का नवाब शुजाउद्दौला और रोहेला सरदार नजीब खां मुगल सम्राट के प्रतिनिधि थे परन्तु मज़हब–परस्ती में वे अहमदशाह से जा मिले। मराठों के साथ कोई मुसलमान सेना नहीं रही। इब्राहीम खां गर्दी मराठों के तोपखाने का सेना–नायक तो था परन्तु उसके अधीन सैनिकों में केवल मराठा सैनिक ही थे, अतः गर्दी का साथ में होना मुसलमान शत्रु के विरुद्ध हिन्दू मराठा सेना में मुसलमानों की भागीदारी वास्तव में सूचित नहीं करता। इस युद्ध से यह सन्देश ध्वनित हुआ कि यदि आक्रमकणकारी मुसलमान हो तो हिन्दू के साथ मिलकर मुसलमान उसका मुकाबला नहीं करेंगे।

बक्सर का युद्ध और पानीपत का युद्ध भारतीय इतिहास, विशेष रूप से उत्तर भारत के इतिहास, में दो अत्यंत महत्वपूर्ण घटनायें हैं। पहली घटना के द्वारा मुगल सत्ता का अंत हो गया और दूसरी घटना के द्वारा मराठों की राजनीतिक महत्वाकांक्षा ध्वस्त हो गई।

1757 से धीरे–धीरे प्रसार पाते हुये अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अपना प्रभुत्व भारत के सम्पूर्ण क्षेत्र पर अगले 100 वर्ष के भीतर स्थापित कर लिया था। कलकत्ता, बाम्बे और मद्रास इस सत्ता के तीन केन्द्र–स्थल थे और शासन व्यवस्था को एकीकृत करने की दृष्टि से बंगाल के गवर्नर को गवर्नर–जनरल

नामित किया गया था तथा बम्बई और मद्रास के गवर्नर भी औपचारिक रूप से उसके अधीन रखे गये थे।

1857 के सैन्य विद्रोह के बाद भारत में अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनी का शासन समाप्त हो गया और ब्रिटेन की सरकार द्वारा सीधे ही भारतीय उपनिवेश पर शासन प्रारंभ कर दिया गया। 2 अगस्त 1858 को ब्रिटेन की पार्लियामेंट ने The Act for the Better Government of India पारित किया। इस अधिनियम के द्वारा ब्रिटेन का राज–मुकुट–धारी रानी या राजा भारत का भी रानी या राजा हो गया और भारतीय उपनिवेश में नियुक्त गवर्नर–जनरल अब ब्रिटेन के राज–मुकुट–धारी का वॉयसराय, अर्थात् प्रतिनिधि, हो गया। 1 नवम्बर 1858 को घोषणापत्र द्वारा ब्रिटेन की Queen Victoria भारत की भी "रानी विक्टोरिया" हो गयी। अब British Indian Empire के सेवकों की जवाबदेही ब्रिटिश पार्लियामेंट को हो गयी क्योंकि ब्रिटेन के अलिखित संविधान के अनुसार शासन की सर्वोच्च सत्ता ब्रिटेन की पार्लियामेंट में निहित थी और राज–मुकुट–धारी उसका संवैधानिक अध्यक्ष होता था।

एक पारिवारिक समस्या के उत्पन्न होने के बाद **Queen Victoria** को 1 जनवरी 1877 को **Empress of India** घोषित किया गया। जनवरी 1874 में विक्टोरिया के द्वितीय पुत्र ने रूस के ज़ार की पुत्री से विवाह कर लिया था। ज़ार सम्राट था और उसकी पुत्री स्वयं को Imperial Highness सम्बोधित कराना चाहती थी। विक्टोरिया स्वयं भी Imperial Majesty नहीं थीं और उनके ज्येष्ठ पुत्र जो Prince of Wales कहलाता था, का विवाह डेनमार्क की राजकुमारी से हुआ था जो भी Imperial Highness कहलाने की योग्यता नहीं रखती थी। अपनी पुत्री की प्रतिष्ठा के प्रश्न को लेकर ज़ार लन्दन विक्टोरिया से मिलने गये। स्थिति गम्भीर हो गयी। विक्टोरिया ने प्रधानमंत्री बेन्जामिन डिज़राइली से परामर्श किया। डिज़राइली संकोच के साथ पार्लियामेन्ट में The Royal Titles Bill प्रस्तुत करने के लिए तैयार हो गये और यह विधेयक किसी प्रकार अल्प बहुमत से पारित हो गया। इस अधिनियम के अनुसार रानी विक्टोरिया भारत के उपनिवेश के लिए **कैसर–ए–हिन्द (Empress of India)** घोषित कर दी गईं। अब उनकी पुत्रवधुयें Imperial Highness सम्बोधित की जा सकती थीं। इस प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि यह शुभ कार्य डिज़राइली के माध्यम से सम्पन्न हुआ, जो ब्रिटेन के इतिहास में अकेले ग़ैर–इसाई, तिस पर यहूदी, प्रधानमंत्री हुए हैं।

अंग्रेजों ने उत्तर भारत में 4 सैनिक छावनी स्थापित की थीं। बंगाल में बारकपुर में पलासी के युद्ध के बाद छावनी बनाई गई थी। मध्य भारत में 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में मराठों से युद्ध के सिलसिले से मऊ में छावनी बनाई गई थी। M.H.O.W. (Military Headquarter of War) का हिन्दुस्तानी रूपान्तर महू, या मऊ, हुआ। उसी समय के लगभग दिल्ली पर आधिपत्य स्थापित करने की दृष्टि से मेरठ में छावनी बनाई गई थी। 1816 में नेपाल से युद्ध के बाद देहरादून के पास चकराता में भी एक छावनी बनाई गयी ताकि उत्तर में पहाड़ी इलाकों की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके और मेरठ की छावनी से अंग्रेज अफसर और सिपाही ग्रीष्म ऋतु में गर्मी की तपिश से बच सकें।

1857 में ब्रिटिश सेना में ग़दर का प्रारंभ 10 मई 1857 को **मेरठ की छावनी** से हुआ था। उसके बाद से इस छावनी का महत्व विशेष रूप से बढ़ गया। मेरठ में सदर और तोपखाना इस छावनी के केन्द्र रहे। 1857 में अंग्रेज सिपाहियों की बटेलियन "लाल कुर्ती" के नाम से जानी जाती थी क्योंकि इन गोरे सिपाहियों की ट्यूनिक लाल रंग की होती थी। हिन्दुस्तानी सिपाहियों की पलटन "काली पलटन" कही जाती थी। "लाल कुर्ती" और "काली पलटन" के नाम से आज भी मोहल्ले हैं। काली पलटन के क्षेत्र में महादेव मंदिर था, जहां क्रांतिकारियों की बैठकें हुआ करती थीं। अंग्रेज साहब और उनकी मेमों की चहल कदमी के लिए छावनी के क्षेत्र में एक ठण्डी सड़क भी हुआ करती थी। यह सड़क छोटे महीन कंकड़ों से बनाई जाती थी और उसे मिट्टी का तेल डालकर ठंडा किया जाता था।

इस बहुसंख्यक विशाल देश पर अपना शासन और नियंत्रण सुनिश्चित करने के लिए अत्यधिक अल्पसंख्यक अंग्रेजों तथा उनके सहकर्मी अन्य यूरोपवासियों को कुछ विशिष्ट उपाय करना आवश्यक हुआ। उनकी आवश्यकता के कुछ पहलू ये थे –

1 अंग्रेज बहादुर की सेवा के लिए सेवक,
2 सेना में सिपाही और सेवक,
3 दफ्तर के काम के लिए बाबू लोग,
4 डाक व्यवस्था के लिए डाकिये/पोस्टमैन और पोस्टमास्टर,
5 सिंचाई हेतु नहरों की व्यवस्था के लिए नहर के दरोगा या ओवरसियर,
6 रेल व्यवस्था के लिए विभिन्न प्रकार के कर्मचारी जिनमें रेल की पटरी की रखवाली के लिए, रेल के टिकट बांटने के लिए, रेल के चालन के

लिए और पार्सल आफिस इत्यादि के लिए विभिन्न प्रकार के कर्मचारी,

7 गावों में स्कूल जो वर्नाक्यूलर स्कूल कहलाते थे तथा शहरों में सरकारी या मिशन के स्कूल जिनमें अंग्रेजी भी पढ़ाई जाती थी, के लिए अध्यापक,

8 हैजा, मलेरिया, प्लेग और चेचक सरीखे संक्रामक रोगों जिनका संक्रमण यूरोप वालों को अधिक होता था, से बचाव के लिए स्वास्थ्य कर्मी और चिकित्सक, तथा

9 पुलिस और राजस्व के महकमों के लिए दरोगा, सिपाही, पटवारी, कानूनगो, तहसीलदार आदि।

उपरोक्त आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये अंग्रेजी शासन द्वारा शिक्षण संस्थाओं की स्थापना और व्यवस्था की गई। उन महकमों में जो प्रशासन की दृष्टि से संवेदनशील होते थे, विशेष रूप से ऐंग्लो–इण्डियन रखे जाते थे जो सामान्यतया पढ़ाई–लिखाई में तो कमजोर होते थे परन्तु उनकी स्वामिभक्ति असंदिग्ध होती थी। रेलवे में गार्ड और ड्राईवर प्रायः ऐंग्लो–इण्डियन होते थे और बड़े स्टेशनों के स्टेशन मास्टर कम पढ़े–लिखे यूरोपियन ही होते थे ताकि सैन्य संचालन सुरक्षित रहे।

20वीं शताब्दी का पूर्वार्ध हमारे देश में स्वतंत्रता के लिए किये गये प्रयासों के लिए महत्वपूर्ण है। क्रान्तिकारी आन्दोलन भी हुये और इण्डियन नेशनल कांग्रेस के माध्यम से अहिंसक शान्तिपूर्ण आन्दोलन भी हुये। अंग्रेजी शासन ने इन आन्दोलनों को निर्बल बनाने के लिए साम्प्रदायिक वैमनस्य उत्पन्न करने के विभिन्न उपाय किये जिनमें हिन्दू और मुसलमान सम्प्रदायों के बीच दंगा मुख्य था। तथापि द्वितीय विश्व युद्ध (1939–45) के बाद वैश्विक राजनीतिक परिस्थिति ऐसी हो गयी कि अंग्रेजों को प्रत्यक्ष रूप से भारत के शासन से हटना पड़ा।

ब्रिटिश पार्लियामेन्ट द्वारा 1 जुलाई 1947 को The Indian Independence Act पारित किया गया, जिसके द्वारा बिट्रिश भारतीय साम्राज्य के अन्तर्गत रहे सम्पूर्ण क्षेत्र को इण्डिया (हिन्दुस्तान) और पाकिस्तान नाम की दो प्रभुत्व सम्पन्न राजनीतिक इकाइयों (Dominion) में बांट दिया गया। भारत में सत्ता का हस्तांतरण इण्डियन नेशनल कांग्रेस के नेतृत्व को हुआ जो उस समय पं. जवाहरलाल नेहरू के अधिनायकत्व में थी। अंग्रेज जून 1948 में सत्ता हस्तांतरित करने का मन बनाये हुये थे परन्तु परिस्थितिवश हस्तांतरण 1947 में ही करना पड़ा। लेडी एड्विना के प्रति अपनी कोमल भावनाओं की अपेक्षा से पंडित जी

ने भारत के लिए स्वतंत्रता प्रदान किये जाने हेतु **15 अगस्त** का दिन पसंद किया क्योंकि द्वितीय विश्व युद्ध में इसी दिन एड्विना के पति लार्ड माउण्टबैटन ने जापानी सेना को अंतिम रूप से विजित किया था।

पुनः, यद्यपि भारत की संविधान सभा ने भारत के लिए **"प्रभुत्व–सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य"** के संविधान को 26 नवम्बर 1949 को "अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित" कर लिया था, संविधान **26 जनवरी 1950** को लागू किया गया क्योंकि कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में पंडित जी ने 1930 में 26 जनवरी को "पूर्ण स्वराज दिवस" मनाया था। सत्ता हस्तांतरित किये जाने के लिए कृतज्ञता–ज्ञापन स्वरूप पंडित जी ने अंतिम अंग्रेज गवर्नर–जनरल लार्ड माउण्टबैटन को ही डोमिनियन भारत का प्रथम गवर्नर–जनरल स्वीकार कर लिया, और गणराज्य की घोषणा के बाद भारत को ब्रिटिश कामनवेल्थ ऑफ नेशन्स, जिसका प्रधान ब्रिटेन का राज–मुकुट–धारी होता है, का सदस्य बनाया जाना भी स्वीकार कर लिया। यह यक्ष प्रश्न बना रहा कि क्या भारत ने पूर्ण स्वतंत्रता के बाद भी ब्रिटेन की सर्वोच्च सत्ता को औपचारिक रूप से स्वीकार किये रखा।

दूसरी डोमिनियन **पाकिस्तान** की स्थिति भिन्न रही। उसका उद्घाटन 14 अगस्त 1947 को ही सम्पन्न हो गया। पाकिस्तान के निर्माता कहे जाने वाले क़ायदे–आज़म मोहम्मद अली जिन्ना ने माउण्टबैटन को पाकिस्तान का गवर्नर–जनरल बनाकर अनुग्रहीत नहीं किया। 23 मार्च 1956 को **इस्लाम–इ जम्हुरिया–ए पाकिस्तान** (Islamic Republic of Pakistan) घोषित होने के बाद पाकिस्तान ने ब्रिटिश कॉमनवेल्थ की सदस्यता से भी अपने को हटा लिया।

उत्तर प्रदेश

1818 में अंग्रेजों ने मराठा सत्ता को अंतिम रूप से समाप्त कर दिया और पेशवा को कानपुर के पास बिठूर में प्रवासित कर दिया। 1816 में नेपाल को भी पराजित करके कुमांयु और गढ़वाल के क्षेत्र अपने अधिकार में ले लिये थे। 1856 में नवाब वाजिद अली शाह को कलकत्ता में मटिया बुर्ज़ में निर्वासित करके अवध को भी अंग्रेजों ने अपने आधिपत्य में ले लिया। 1857 के गदर को दबाने के बाद अंग्रेजों द्वारा यह प्रशासनिक व्यवस्था की गयी कि अवध की पृथक प्रशासनिक इकाई चीफ कमिश्नर के अधीन रहे और उसका मुख्यालय लखनऊ रहे। दिल्ली और आगरा के समस्त क्षेत्रों को मिलाकर **नार्थ–वेस्टर्न प्राविंस** बनाई गयी जिसका मुख्यालय 1858 से पहले आगरा था परन्तु 1858 में

इलाहाबाद को मुख्यालय बनाया गया। 1877 में नार्थ–वेस्टर्न प्राविंस और अवध की कमिश्नरी को मिलाकर लेफ्टीनेन्ट गवर्नर के प्रशासकत्व में एक प्रान्त बनाया गया परन्तु इसका मुख्यालय इलाहाबाद ही रखा गया और दिल्ली का क्षेत्र इससे अलग कर दिया गया। 1902 में इस प्रान्त का नाम बदल कर United Provinces of Agra and Oudh रखा गया। अब इस प्रान्त का प्रशासक गवर्नर नियुक्त हुआ। 1921 में इस प्रान्त का मुख्यालय इलाहाबाद से लखनऊ स्थानान्तरित कर दिया गया। 1937 में प्रान्त के नाम को छोटा कर केवल United Provices (U.P.), या संयुक्त प्रान्त, कर दिया गया। 26 जनवरी 1950 को इसका नामकरण **उत्तर प्रदेश** हुआ। अगस्त 2000 में कुमांयु–गढ़वाल के 13 जिले इससे अलग कर दिये गये जो **उत्तरांचल,** अब **उत्तराखण्ड,** के नाम से नये राज्य में समाविष्ट हैं।

ब्रिटिश शासन काल में इस प्रदेश का विशेष महत्व था। देहरादून में जनरल एवरेस्ट की अध्यक्षता में Surveyor General of India का कार्यालय स्थापित किया गया, जिसके माध्यम से पूरे भारत का भू–सर्वेक्षण किया गया। यह कार्य इस देश में पहली बार हुआ और ब्रिटिश साम्राज्य की दृष्टि से इसकी सामरिक (strategic) उपयोगिता थी। रुड़की में थाम्पसन इन्जीनियरिंग कॉलेज की स्थापना की गई जो देश में पहला इन्जीनियरिंग कॉलेज था। कौसानी में क्षय–रोगियों के लिए आरोग्य आश्रम (Sanatoriun) स्थापित किया गया। मेरठ के अलावा चकराता में भी छावनी स्थापित की गई। देहरादून में इण्डियन मिलिट्री एकेडेमी की स्थापना भी की गई।

सामान्य स्तर के स्वास्थ्य कर्मियों की उपलब्धता हेतु आगरा में मेडिकल कॉलेज की स्थापना की गई जिसमें एल.एम.पी. (लाइसेंशियेट मेडिकल प्रैक्टिशनर) जो बाद को एल.एस.एम.एफ. नामित की गई, के नाम से चिकित्सा एवं स्वास्थ्य शिक्षा की शुरुआत की गई। बाद को 1911 में लखनऊ में किंग जार्ज मेडिकल कॉलेज की स्थापना की गई जिसमें स्नातक स्तर की आधुनिक चिकित्सा शिक्षा की व्यवस्था की गई और उसे एम.बी.बी.एस. की डिग्री देने के लिए अधिकृत किया गया।

उच्च शिक्षा के प्रसार के लिए 1857 में कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में विश्वविद्यालय स्थापित किये गये थे। कलकत्ता विश्वविद्यालय के क्षेत्राधिकार में ही यू.पी. आता था। इलाहाबाद यूनीवर्सिटी की स्थापना के बाद यू.पी. उसके क्षेत्राधिकार में आ गया। 1927 में आगरा विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद

इलाहाबाद विश्वविद्यालय केवल आवासीय (Residential) हो गया। आवासीय विश्वविद्यालय में वहीं रहकर पढ़ाई करनी होती थी और उसके साथ सम्बद्ध कॉलेज Associated कॉलेज कहलाते थे। अन्य विश्वविद्यालय, जैसे कि आगरा विश्वविद्यालय, Affiliating विश्वविद्यालय कहलाते थे; इनमें रहकर पढ़ाई नहीं की जाती थी वरन् इनसे सम्बद्ध कॉलेजों में पढ़ाई की जाती थी। मेरठ में मेरठ कॉलेज और आगरा में आगरा कॉलेज व सेंट जॉन्स कालेज प्रारम्भ में कलकत्ता विश्वविद्यालय से सम्बद्ध थे, तत्पश्चात् इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हुये और 1927 से आगरा विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हुये। 20वीं शती के तीसरे दशक में इस प्रदेश में लखनऊ विश्वविद्यालय, काशी हिन्दू विश्वविद्यलय और अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय की भी स्थापना हुई; ये सभी विश्वविद्यालय Residential थे।

20वीं शती के पूर्वार्ध में हिन्दू और मुस्लिम सम्प्रदायों द्वारा प्राईमरी, मिडिल, हाईस्कूल और इण्टरमीडियट स्तर की शिक्षा के लिए बहु संख्या में विद्यालय स्थापित किये गये। आर्य समाज इसमें अग्रणी था। स्वतंत्रता के प्रति, विशेषकर शिक्षित वर्ग में, जागृति प्रारंभ हो गयी थी। इन विद्यालयों को नियंत्रित करने के लिए ब्रिटिश शासन ने यह व्यवस्था की कि हिन्दुओं के विद्यालय में एक मुसलमान मौलवी की और मुसलमानों के विद्यालय में एक हिन्दू पण्डित की नियुक्ति की जाये। मौलवी और पण्डित का कार्य ब्रिटिश शासन को सावधान करना था। कक्षा 6, 7 और 8 में हिन्दी के विद्यार्थियों को सेकेण्ड फार्म के रूप में उर्दू पढ़ना और उसी प्रकार उर्दू वालों को हिन्दी पढ़ना अनिवार्य कर दिया गया। 1940 के दशक में **हिन्दुस्तानी बोलचाल भाग–1, 2** व **3** इसके लिए निर्धारित थी और लिपि भेद के अतिरिक्त दोनों भाषाओं की पुस्तक में पाठ्य सामग्री प्रायः समान होती थी।

ऐतिहासिक मेरठ

मेरठ नगर के बारे में यह अनुश्रुति है कि इसे **मय** नामक व्यक्ति ने बसाया था। महाभारत के युग में उसकी एक वास्तुकार (Architect and Town-Planner) के रूप में प्रतिष्ठा थी और पाण्डवों के पांच प्रस्थों को बसाने का श्रेय उसको दिया जाता है। महाभारत युद्ध से पहले एक राजनीतिक समझौते के अनुसार दुर्योधन द्वारा युधिष्ठिर को यमुना नदी के किनारे के खाण्डव वन का कुछ प्रदेश दे दिया गया था। उस प्रदेश में पांचों पाण्डव भाइयों के लिए एक–एक प्रस्थ का निर्माण किया गया, यथा – प्राणिप्रस्थ, स्वर्णप्रस्थ, व्याघ्रप्रस्थ, इन्द्रप्रस्थ और

तिलप्रस्थ। पानीपत, सोनीपत, बागपत, दिल्ली में पुराना किला, और तिलपत के रूप में ये प्रस्थ आज भी अस्तित्व में हैं।

मय ने अपने निवास स्थान का नाम **मयराष्ट्र** रखा जो कालांतर में **मेरठ** हो गया। अंग्रेजों ने इसे Meerut कर दिया परन्तु सर्वाधिकार प्रभुत्व सम्पन्न होने के 62 वर्ष बाद भी हम उसके शब्द–विन्यास को सही Merath नहीं कर पाये। यह नगर यमुना–गंगा के दोआबा में दोनों नदियों से प्रायः समान दूरी पर स्थित है। कौरवों की राजधानी हस्तिनापुर गंगा नदी के किनारे थी और पाण्डवों का केन्द्र–स्थल इन्द्रप्रस्थ यमुना नदी के किनारे था।

ऐतिहासिक दृष्टि से यह विदित है कि मौर्य सम्राट अशोक (ई.पू. 272–236) के समय में यह नगर महत्वपूर्ण था क्योंकि अशोक के स्तम्भ लेखों वाली लाट यहीं से फ़िरोज़ तुगलक़ दिल्ली ले गया था। यह स्तम्भ अब दिल्ली में फिरोजशाह कोटला में स्थित है।

10वीं शती के अन्तिम दशकों में कन्नौज के गुर्जर–प्रतिहार साम्राज्य का अंत हो गया और मेरठ के आस–पास के क्षेत्र पर हरदत्त नाम के सामन्त ने आधिपत्य कर लिया। 983 ई. में हरदत्त ने हरपुर (हापुड़) नगर बसाया और मेरठ के सुप्रसिद्ध किले का निर्माण भी कराया।

13वीं–14वीं शती में मेरठ का किला दिल्ली के सुल्तानों के आधिपत्य में चला गया। 1398 ई. के दिसम्बर माह में तुर्क आक्रमणकारी तैमूर ने मेरठ के किले पर कब्जा कर लिया और नौचन्दी के मैदान में एक लाख हिन्दू युवा पुरुष बन्दियों की हत्या करा दी तथा उनके औरतों और बच्चों को गुलाम बना लिया। इससे यह विदित होता है कि 14वीं शती में मेरठ एक महत्वपूर्ण नगर था और नौचन्दी का मैदान इतना विशाल था कि वहां एक लाख लोगों को इकठ्ठा करके कत्ल किया जा सकता था।

नौचन्दी के मैदान में आज भी चैत्र मास के प्रथम पक्ष में प्रतिवर्ष मेला लगता है और प्रदेश के स्थानीय मेलों में इसका प्रमुख स्थान है। इस मैदान में नव–चण्डी के मंदिर के अतिरिक्त बाले मियां की दरगाह भी है।

13 जनवरी 1761 को पानीपत में अहमदशाह दुर्रानी (अब्दाली) से परास्त होने के बाद जब मराठा सेना की टुकड़ियां जान बचाकर भागीं तो पेशवा की रसोइया टुकड़ी का सरदार मेरठ में लूटपाट करता हुआ पहुंचा और उसने मेरठ पर अधिकार कर लिया। उसका बनवाया हुआ पंचमुखी शिवालय अभी मौजूद है जो चमार दरवाजे के रास्ते पर पड़ता है। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक उनके एक

वंशज नानकचंद मौजूद थे। नानकचंद ने 20वीं शती के पूर्वार्ध में कई शिक्षण संस्थायें मेरठ में स्थापित कीं और "नानकचंद क्षेत्र" के नाम से अपनी सम्पत्ति का ट्रस्ट भी बनाया। इनके किसी वंशज की जानकारी नहीं है। ट्रस्ट और संस्थाओं का प्रशासक अब मेरठ का जिलाधिकारी है।

1805 में मेरठ और आस–पास का क्षेत्र **अंग्रेजों के आधिपत्य** में आ गया था। 1818 में मेरठ जिले का गठन किया गया और जिले का सर्वोच्च अधिकारी कलेक्टर नियुक्त किया गया जो अंग्रेज आई.सी.एस. होता था।

मेरठ नगर से पश्चिम की ओर सरधना कस्बा स्थित है। 1778 में रोहिला सरदार नज़फ खां से वाल्टर जोजेफ राइनहार्ट ने सरधना को जागीर के रूप में प्राप्त कर लिया। राइनहार्ट यूरोप में लक्ज़मबर्ग का रहने वाला था और वह अपनी किस्मत आज़माने के लिए भारत आया था। दिल्ली में फ़रज़ाना नाम की तवायफ़ से उसकी मोहब्बत हो गयी। 1778 में ही राइनहार्ट की मृत्यु हो गयी और उसकी जागीर विधवा फ़रज़ाना, जो उस समय 25 वर्ष की थी, को प्राप्त हो गयी। राइनहार्ट ने अपना उप नाम "सोम्ब्रे" रख लिया था जो बिगड़ कर "समरू" हो गया, अतः उसकी विधवा **"बेगम समरू"** कहलायी। 1781 में फ़रज़ाना इसाई हो गयी और उसका नाम जोअन्ना हो गया तथापि वह बेगम समरू के नाम से ही प्रसिद्ध रही। 1805 में अंग्रेजों ने बेगम समरू को यह जागीर जीवन पर्यन्त के लिए दे दी। 1820 में उसने सरधना में एक रोमन कैथोलिक गिरजाघर का निर्माण कराया जिसकी विशेष प्रसिद्धि हुई। 1836 में 83 वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गयी और चूंकि उसका कोई उत्तराधिकारी नहीं था सरधना की जागीर मेरठ जिले में मिला ली गयी। बेगम समरू के बारे में बहुत सी जनश्रुतियां हैं जो यह सूचित करती हैं कि वह बहुत क्रूर प्रकृति की महिला थी और मेरठ के रईसों से वसूली करने के लिए प्रायः मेरठ आती थी। जहां वह आती थी वह स्थान आज भी "बेगम का पुल" कहलाता है और हमारे बचपन में वह "खूनी पुल" के नाम से प्रसिद्ध था क्योंकि बेगम समरू वहां क्रूरता पूर्वक वसूली करती थी।

अंग्रेजों के विरुद्ध जिस विद्रोह का सूत्रपात मेरठ में 10 मई 1857 को हुआ था, वह स्थानीय जनमानस में **'सन् 57 का बैदा'** (अर्थात् उपद्रव) के रूप में अंकित रहा क्योंकि हिन्दुस्तानी सिपाहियों ने शहर में और आस–पास के इलाकों में जम कर लूट–पाट की; उन पर न तो किसी का नियंत्रण था और ना ही उनमें स्व–अनुशासन था। अंग्रेज इतिहासकारों ने अंग्रेजी सेना में हिन्दुस्तानी सैनिकों द्वारा Mutiny या गदर के नाम से इसका उल्लेख किया है जो वास्तविकता थी।

घटना के 40–50 वर्ष बाद विनायक दामोदर सावरकर ने इसे "स्वतंत्रता संग्राम" का नाम दिया। एक वर्ष के भीतर ही मेरठ में उपद्रव का दमन कर दिया गया और अंग्रेजी शासन का नियंत्रण स्थापित हो गया।

19वीं शती में और 20वीं शती के प्रारम्भ में मेरठ में शिक्षा की स्थिति यह थी कि ब्राह्मणों के बच्चे पाठशालाओं में पढ़ते थे जहां वे पुरोहिती का और कथा–वाचन आदि का प्रशिक्षण प्राप्त करते थे। बनियों के बच्चे आमतौर से महाजनी की शिक्षा प्राप्त करते थे ताकि वे मुनीम का कार्य कर सकें। इसमें हिन्दी–मुण्डी में बहीखाता लिखने का अभ्यास कराया जाता था। कायस्थों के बच्चे उर्दू के मदरसों में मिडिल तक की पढ़ाई करते थे ताकि वह मुहर्रिर (मुंशी) का काम कर सकें। आधुनिक शिक्षा अर्थात् वर्नाक्यूलर मिडिल के बाद अंग्रेजी भाषा की शिक्षा सरकारी हाई स्कूलों में और इसाई मिशन के स्कूलों में होती थी। मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करना सभी सरकारी नौकरियों के लिए तथा अध्यापन और वकालत करने के लिए भी पर्याप्त था।

मेरठ नगर के वैश्य परिवारों में आधुनिक उच्च शिक्षा का प्रसार 20वीं शती के प्रारंभ होने के बाद हुआ। 1924 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.ए. व एल–एल.बी. की परीक्षा एक साथ उत्तीर्ण करने वाले नवयुवक रतीश मोहन अग्रवाल थे और उनकी इस उपलब्धि के लिए हाथी पर बैठाकर उनकी सवारी निकाली गई थी। सीताराम जो बाद में विधान परिषद के अध्यक्ष हुये और कैलाश प्रकाश जो उत्तर प्रदेश में शिक्षा मंत्री भी रहे, 20वीं शती के तृतीय दशक के स्नातकों में थे। जैन परिवारों में इस दशक में सुमत प्रसाद स्नातक हुये जिनकी नियुक्ति इन्कम टैक्स इन्सपेक्टर के पद पर हुई और वे इन्कम टैक्स कमिश्नर के पद से सेवा निवृत्त हुये।

अंग्रेजी शासन में मेरठ का विशेष महत्व था। यहां अंग्रेजी फौज का सबसे बड़ा कैन्टूनमेंट था जो पूरे उत्तर भारत पर, और विशेष रूप से दिल्ली पर, नज़र रखता था। यहीं कन्ट्रोलर ऑफ मिलिट्री एकाउन्ट्स का कार्यालय भी स्थापित किया गया था। 1857 में गदर का प्रारंभ मेरठ के कैन्टूनमेंट से ही हुआ और उसके बाद इस कैन्टूनमेंट का महत्व और भी बढ़ गया। इस कैन्टूनमेंट के महत्व के कारण अंग्रेजों की संख्या भी मेरठ मे बहुत काफी रहती थी परन्तु वे कैन्टूनमेंट के क्षेत्र में ही सीमित रहते थे। जिले का कलेक्टर भी अंग्रेज आई.सी.एस. ही होता था। मेरठ में ही गवर्नमेंट हाई स्कूल की स्थापना की गई थी, जिसका हैडमास्टर सन् 1930 तक कोई अंग्रेज ही होता था। हमारे बाबा जी के समय 1915 में मि.

फ़ैरीयर हैडमास्टर थे और पिता जी के समय 1928 में मि. प्लोमर हैडमास्टर थे। बीसवीं शती के प्रारंभ में मेरठ कॉलेज की स्थापना भी की गई जिसमें इण्टरमीडियेट और स्नातक एवं स्नातकोत्तर कक्षायें चालू की गईं। इसका प्रिंसिपल भी सन् 1940 तक कोई अंग्रेज ही होता था। पिता जी के समय 1928–36 में कर्नल टी. एफ.ओ'डोनल प्रिन्सिपल थे। यह कॉलेज प्रारंभ में इलाहाबाद यूनीवर्सिटी से सम्बद्ध रहा, परन्तु आगरा यूनीवर्सिटी की स्थापना के बाद यह आगरा यूनीवर्सिटी से सम्बद्ध हो गया।

इसाई मिश्नरियों ने भी अपने स्कूल खोले हुये थे जो मिशन स्कूल कहलाते थे और उनमें अंग्रेजी भी पढ़ाई जाती थी। 20वीं शती की प्रारंम्भिक दशाब्दियों में गवर्नमेंट हाई स्कूल की अंग्रेजी माध्यम के स्कूल के रूप में और आधुनिक शिक्षा के मॉडल के रूप में विशेष प्रतिष्ठा थी। इस स्कूल में कक्षा 3 से कक्षा 10 तक की पढ़ाई होती थी, सभी विषय अंग्रेजी में पढ़ाये जाते थे और कक्षा 10 की परीक्षा दिलाई जाती थी जो School Leaving Certificate Examination कहलाती थी, यही बाद को Matriculation Examination कहलाने लगी और अन्ततः इसका नामकरण High School Examination हुआ। हिन्दुओं और मुसलमानों के कुछ निजी स्कूलों में भी कक्षा 10 तक की पढ़ाई चालू हो गई थी परन्तु परीक्षा का केन्द्र Government High School ही होता था।

ब्रिटिश शासन में शिक्षा के क्षेत्र में मेरठ का एक महत्वपूर्ण योगदान यह था कि हिन्दी और उर्दू वर्णमाला की प्राथमिक पुस्तक यहां ही लिखी गयी थी। इसके लिखने वाले कोई मौलवी थे जिनका नाम शायद नादिर अली था परन्तु अब उनके बारे में कोई जानकारी नहीं है। "नादिर अली की कोठी" के नाम से जो इमारत मशहूर है वह बाजे वाले नादिर अली की है और उसका कुछ हिस्सा जल जाने के कारण वह "जली कोठी" भी कहलाती है। 1920 के दशकों से वह मुसलमान दंगाईयों का अड्डा भी बन गयी है।

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में मेरठ शहर में हिन्दी–मुण्डी और महाजनी की पढ़ाई के लिए मुरारी पांडे और किशन पांडे की पाठशाला विख्यात थीं। इन पाठशालाओं में हमारे बाबा जी (बा. पारस दास) और पिता जी (डॉ. ज्योति प्रसाद) ने पढ़ाई की थी। 1920–30 के दशकों में वैदिक हाईस्कूल, देवनागरी हाईस्कूल और फैज़–आम हाईस्कूल की स्थापना भी आधुनिक शिक्षा के लिए हिन्दू और मुसलमान समुदायों ने की थी। हिन्दू बालिकाओं में शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए नानकचंद गर्ल्स स्कूल की स्थापना भी की गई। सामान्यतया हिन्दू

बालिकाओं की पढ़ाई वर्नाक्यूलर हिन्दी मिडिल स्कूल तथा संस्कृत में प्रवेशिका आदि की शिक्षा तक ही सीमित रहती थी और प्रायः प्राईवेट तरीके से ही पाठशालाओं में यह शिक्षा उपलब्ध होती थी। जैन समाज के श्वेताम्बर समुदाय ने सदर में एक पाठशाला बच्चों की पढ़ाई के लिए खोली थी जिसमें धार्मिक शिक्षा भी दी जाती थी। दिगम्बर समुदाय ने शहर के मोहल्ला तीरगरान के दिगम्बर जैन मंदिर में पाठशाला खोली थी। इस पाठशाला में हमारे पिता जी ने और हमने भी बालपने में शिक्षा ग्रहण की थी।

हमारे परिवार में हमारे बाबा जी श्री पारस दास जैन ने 1915 में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। उसके बाद उच्च शिक्षा प्राप्त करने वालों में हमारे पिता जी ज्योति प्रसाद जी थे जिन्होंने 1933 में बी.ए., 1935 में एल–एल.बी., और 1936 में एम.ए., की परीक्षाएं उत्तीर्ण कीं तथा हमारे चाचा जी श्री अजित प्रसाद ने भी 1936 में बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। मेरठ की जैन समाज में इस प्रकार शिक्षित होने वाला हमारा परिवार अग्रणी था।

मेरठ शहर से बाहर जाने के लिए कई दरवाजे प्रसिद्ध हैं। कम्बोह दरवाजे से रेलवे स्टेशन जाने का रास्ता है। गेट के ऊपर घंटाघर है और इसके बाहर टाउन हॉल है जिसमें सार्वजनिक पुस्तकालय बनाया गया था, तथा इसी के बाहर एक ओर पुराना सिनेमाघर है जो 1930 के दशक में खोला गया था। दिल्ली दरवाजे से दिल्ली को जाने का रास्ता है। चमार दरवाजे से नौचंदी को रास्ता जाता है। इनके अलावा बुढ़ान दरवाजा, खैर नगर दरवाजा, शाह पीर दरवाजा, आदि हैं।

1920–30 के दशकों में मेरठ में टोपी का प्रसिद्ध व्यवसाय था जिसे उग्गरसेन जैन टोपी वाले चलाते थे। ये टोपियां मुस्लिम देशों को निर्यात होती थीं, और इनके माध्यम से हिन्दू विधवा स्त्रियों को घरेलू रोज़गार भी उपलब्ध कराया जाता था। इन टोपियों पर महीन कढ़ाई होती थी जो ये महिलाएं करती थीं। मेरठ का कैंची का व्यवसाय आज भी प्रसिद्ध है; इस व्यवसाय में लगे कारीगर प्रायः मुसलमान होते हैं।

हमारा वंश

वर्तमान मुजफ्फरनगर जिले के मंसूरपुर–बिहारी नामक स्थान पर 18वीं शती में **अग्रवाल जाति के गोयल गोत्र का एक जैन धर्मावलम्बी परिवार** रहता था। इस परिवार में 18वीं शती के मध्य के लगभग एक विशेष घटना घटित हुई। परिवार का ज्येष्ठ पुत्र पास ही के चरथावल नामक स्थान में ब्याहा था। वह गौना

कराने के लिए परिवार के पुरोहित युवक के साथ भेजा गया। गांव का कुत्ता भी पीछे–पीछे चला गया। पुरोहित को लालच आ गया और उसने उस युवक के गहने उतार लिये तथा उसे मारकर रास्ते में ही गाड़ दिया। कुत्ता वापस लौट आया और लड़के के पिता की धोती पकड़कर खींचने लगा। उसकी इस हरकत से घरवालों को अचम्भा हुआ और वे लोग कुत्ते के पीछे–पीछे चले। एक स्थान पर आकर कुत्ते ने जमीन पैरों से खोदना शुरू किया तो युवा पुत्र की लाश मिली। उसकी ससुराल में जैसे ही यह समाचार पहुंचा उसकी बहू ने अवसादग्रस्त होकर यह निश्चय कर लिया कि वह भी पति के साथ सती हो जायेगी और अन्त्येष्टि के समय सभी प्रकार रोकने के बावजूद वह चिता पर जा बैठी। तब से हमारे परिवार में एक यह परम्परा बनी कि ज्येष्ठ पुत्र के विवाह पर पति–पत्नी को सतियों के स्थान पर दर्शनार्थ ले जाया जाये और वहां विशेष रूप से कुत्ते को भोजन कराया जाये। **"सतियों का थान"** के रूप में वह स्थान उस क्षेत्र में प्रसिद्ध है और एक पवित्र स्थान माना जाता है। हमारी जानकारी में मेरे पिता जी विवाह के बाद वहां दर्शन के लिए 1929 में गये थे और ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते मुझे भी 1953 में वहां जाने का सुयोग प्राप्त हुआ था। जब मैं वहां गया था तो वहां खेतों के बीच टूटा–फूटा कच्चा चबूतरा था परन्तु वहां के लोग उस स्थान को पूज्य भाव से देखते थे। ज्ञात हुआ है कि इस बीच वह स्थान रमणीक बना दिया गया है। मेरा ज्येष्ठ पुत्र शिरीष उस स्थान के दर्शन कर आया है और अब उसका भी ज्येष्ठ पुत्र शिशिर वहां दर्शनार्थ जायेगा। परिवार में यह परम्परा लगभग गत ढाई सौ वर्षो से चली आ रही है। इसका तात्पर्य सती प्रथा की पक्षधरता से नहीं है, वरन् एक त्रासदायक ऐतिहासिक घटना के स्मरण किये जाने से है।

18वीं शती में परिवार का बिखराव होने लगा। उस शती के उत्तरार्ध में एक पुत्र सरधना आ गये। उनके नाम का स्मरण अब नहीं हैं। सरधना में 19वीं शती के अंतिम दशकों में बेगम समरू का आधिपत्य था और जान–माल सुरक्षित नहीं थे। अतः वह पूर्वज अपनी पत्नी के साथ मेरठ चले आये और यहां 1805 ई. में उनके **कंवरसेन** नामक पुत्र का जन्म हुआ। कंवरसेन का विवाह हापुड़ के एक प्रतिष्ठित घराने में हुआ। उनकी सास बीबी सहजो प्रसिद्ध हकीम थीं, और उनके साले बृजलाल अपने समय के प्रसिद्ध सांगाचार्य थे और खलीफ़ा कहलाते थे।

18वीं–19वीं शती में विवाह सम्बन्ध प्रायः सजातीय होते थे और समान स्तर के सामाजिक प्रतिष्ठा के परिवारों में ये सम्बन्ध किये जाते थे। यह प्राथमिकता

थी कि अग्रवाल जाति में ही अग्रवाल बालक–बालिकाओं का विवाह हो। इसका ध्यान रखा जाता था कि एक ही गोत्र में विवाह न हो, परन्तु धर्म की बाध्यता नहीं थी और जैन धर्मावलम्बी परिवारों के वैष्णव धर्मावलम्बी परिवारों से वैवाहिक सम्बन्ध होते थे क्योंकि दोनों ही शाकाहारी होते थे। जो लड़की जिस परिवार में आ जाती थी वह उसी कुल के धर्म का पालन करती थी।

कंवरसेन की पत्नी **"राम की पुतली"** के नाम से प्रसिद्ध हुई। वह वैष्णव परिवार से आयी थी परन्तु कंवरसेन का कुल धर्म जैन था और उनकी पत्नी भी कुलधर्म का ही पालन करती थी। कदाचित् विवाह के पूर्व ही कंवरसेन की माता दिवंगत हो चुकी थी। अतः परिवार में रीति–रिवाजों की परम्परा "राम की पुतली" ने ही डाली। परिवार में सती की कथा से वह अवगत थी। अतः दीपावली पर जो मिंसा–पूजा जाता है, उसमें सती, पुत्र और कुत्ते के नाम से जात निकाली जाती थी। यह परम्परा आज भी कम–से–कम हमारे परिवार में चली आ रही है।

1825 में कंवरसेन के **तुलसीराम** नाम का पुत्र हुआ। कंवरसेन की मृत्यु जल्दी ही 31–32 वर्ष की उम्र में हो गई और उस समय तुलसीराम मात्र 10–11 वर्ष के बालक थे। तुलसीराम की एक छोटी बहन भी थी। परिवार की असहाय अवस्था को देखकर तुलसीराम के मामा बृजलाल अपनी विधवा बहन और उसके पुत्र व पुत्री को अपने साथ हापुड़ ले गये। युवावस्था प्राप्त होने पर तुलसीराम को मामा का आश्रित होना पसंद नहीं आया और वे अपनी मां व बहन को लेकर मेरठ चले आये। मेरठ सदर में रहकर उन्होंने छावनी क्षेत्र में बर्तनों की फेरी लगाना शुरू किया। वह समय बेहद विपन्न अवस्था का था जब मात्र 3–4 पैसे रोज़ की आमदनी पर गुज़ारा करना होता था। परन्तु अपने अध्यवसाय से उन्होंने धीरे–धीरे मकान भी बनवा लिया और कसेरट की दुकान भी खोल ली।

तुलसीराम जी को 1857 के गदर में स्वतंत्रता संग्राम से सहानुभूति थी और वे सदर में काली पलटन के महादेव मंदिर में क्रांतिकारियों की बैठकों में सम्मिलित होते थे। उन्हें कविता से भी प्रेम था। प्रतिवर्ष रामलीला में राम बनवास के अवसर पर दालमण्डी के कुएं पर बैठकर लाला तुलसीराम जी कसेरे के अपने नये बनाये 5–4 झूलने अवश्य होते थे। रामबक्स ठठेरा उस समय का एक प्रसिद्ध कवि था और उसके लिखे बारहमासे बहुत प्रसिद्ध हुये थे, वह उन्हें अपना गुरू मानता था। ठठेरे का काम करते समय बरतनों को मठारते–मठारते वह कविता लिखा करता था। सन् 1870 के लगभग लाला तुलसीराम जी का देहान्त हो गया। वह एक

उद्यमी, स्वाभिमानी और स्वावलम्बी पूर्वज श्रेष्ठ थे। उनके ये संस्कार परिवार में आज भी प्रवृत्त हैं।

उनके 18 सन्तान हुईं परन्तु केवल 3 ही जीवित रहीं। जीवित संतानों में **गणेशीलाल** ज्येष्ठ पुत्र थे जिनका जन्म 1852 में हुआ था। उसके बाद एक पुत्री चावली थी और एक पुत्र बनवारीलाल थे जो अपने भाई से लगभग 10 वर्ष छोटे थे। गणेशीलाल के 8 संतान हुईं, जिनके नाम इमरतराय, द्वारिकाप्रसाद, मुखनी, बिशम्भरसहाय, मंगलसेन, मन्नूलाल, लटूरीलाल ओर नन्हेंमल थे। तुलसीराम से लेकर नन्हेंमल तक सभी नाम वैष्णव प्रभाव के हैं जिसका श्रेय "राम की पुतली" को है, परन्तु कुलधर्म जैन ही बना रहा। "राम की पुतली" ने लगभग 80 वर्ष की आयु पाई और उनके जीवन काल में ही उनके पौत्र गणेशीलाल की पत्नी अपनी अंतिम सन्तान नन्हेंमल को जन्म देकर 1893 में दिवंगत हो गयी।

19वीं शती के उत्तरार्ध में मेरठ में पं. बल्देव सहाय प्रसिद्ध हकीम थे। जब रोग के निदान में वे निराश हो जाते थे तो "राम की पुतली" को बुलाया जाता था। उनकी हिकमत के सम्बन्ध में कई किस्से प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि एक बार डिप्टी महताब राय का पुत्र बहुत बीमार हो गया। उस समय के सभी बड़े–बड़े हकीम डॉक्टर बुलाये गये परन्तु रोग किसी की समझ में नहीं आया। अंत में "राम की पुतली" बुलायी गयीं। उन्होंने देखते ही कह दिया कि "भैया, इसे कुछ मत दो, केवल गंगा जल दो, और जो कुछ दान–पुन करना है सो करो। सन्ध्या को 5 बजे से रोगी की दशा बिगड़नी शुरू होगी और रात्रि के 11 और 12 के बीच में इसकी मृत्यु हो जायेगी।" सभी आश्चर्य चकित रह गये किन्तु हुआ वही जो "राम की पुतली" ने कहा था। यह कोई भविष्यवाणी नहीं थी परन्तु रोग के अनुभवजन्य निदान का परिणाम था।

गणेशीलाल 1852 से 1915 तक रहे। गणेशीलाल जी की सातवीं संतान हमारे बाबा जी थे। बचपन में बालक कृष्ण की तरह इनके बाल लटदार थे, इसलिए पर–दादी "राम की पुतली" ने इनका नाम लटूरीलाल रख दिया। इनका जन्म 19 अप्रैल 1891 को हुआ था। 1908 में जब उन्होंने गवर्नमेंट हाई स्कूल में अपना नाम लिखाया तो नाम **पारस दास जैन** लिखाया और उसके बाद वे इसी नाम से जाने जाते रहे। 1908 में उनका विवाह बागपत जिले के नगला ख्वाज़ा के मुखिया और लम्बरदार लाला शिताब राय की पुत्री राम कटोरी से सम्पन्न हुआ और 1910 में गौना कराने के बाद उन्होंने गृहस्थी सम्भाली। 6 फरवरी 1912 को हमारे पिता जी **ज्योति प्रसाद** का जन्म हुआ। पूरे कुटुम्ब में गणेशीलाल जी

के वही एकमात्र पौत्र थे। 15 जनवरी 1915 को एक पुत्री मैनावती का जन्म हुआ। उसी वर्ष पारस दास ने स्कूल लीविंग सर्टीफिकेट (मैट्रिक) की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा उनके पिता गणेशीलाल का देहान्त हो गया जिसकी अन्त्येष्टि कर्म के दायित्व का उन्होंने ही निर्वहन किया। 1 जनवरी 1918 को उनकी तीसरी संतान और कनिष्ठ पुत्र अजित प्रसाद का जन्म हुआ। परिवार में अपनी पीढ़ी में सबसे ज्येष्ठ होने के कारण हमारे पिता जी को **भाई साहब** के नाम से सम्बोधित किया जाता था। हम भी उन्हें भाई साहब ही कहते थे और अपनी मां को भाभी कहते थे, अपने बाबा जी को लाला जी और दादी को अम्मा कहते थे जैसे कि हमारी बुआ जी और चाचा जी उन्हें कहते थे।

मैट्रिक पास करने के बाद हमारे बाबा जी की नियुक्ति कलेक्ट्रेट में हुई। आयकर का विभाग तभी खुला था। उस विभाग में बही–टेस्टर के रूप में उनकी प्रथम नियुक्ति हुई और बाद को आयकर विभाग में ही वे क्लर्क नियुक्त हो गये। प्रारम्भिक दिनों में आयकर के अधिकारी डिप्टी कलेक्टर हुआ करते थे। सेवाकाल में बाबा जी का स्थानान्तरण बुलन्दशहर, आगरा, मुरादाबाद, लखनऊ और सहारनपुर भी हुआ तथा अंत में मेरठ से ही 1946 में इन्कम टैक्स इन्सपेक्टर के पद से वे सेवा निवृत्त हुये।

ब्रिटिश शासन की आय का मूल स्रोत मालगुज़ारी था जो जमींदारों से वसूल की जाती थी। 20वीं शती के प्रारम्भ में इसमें इन्कमटैक्स को आय के स्रोत के रूप में जोड़ा गया। प्रारम्भ में व्यापारी वर्ग जो प्रायः सभी हिन्दू था, इसकी परिधि में आया। व्यापारी अपना हिसाब–किताब हिन्दी–मुण्डी में रखते थे अतः हिन्दी–मुण्डी जानने वाले कर्मचारियों की आवश्यकता हुई और उसी के परिणाम स्वरूप हमारे बाबा जी की नियुक्ति इस विभाग में हुई।

भाई साहब ने एम.ए., एल–एल.बी. तक की उच्च शिक्षा प्राप्त की, परन्तु उनकी रुचि सरकारी नौकरी में नहीं थी, यद्यपि उनके पिता आयकर विभाग में सरकारी कर्मचारी थे और उन्होंने अपने छोटे भाई को दिल्ली ले जाकर 1935 के दिसम्बर में दिल्ली पब्लिक सर्विस कमीशन द्वारा आयोजित सेक्रेटेरियट की परीक्षा दिलवाई, जिसमें वे उत्तीर्ण भी हुये और बी.ए. का परिणाम आने के बाद शिमला में नियुक्ति प्राप्त की। पुनः, 14–8–1938 को अपने छोटे भाई अजित प्रसाद को इलाहाबाद में यू.पी. सेक्रेटेरियट की परीक्षा दिलाने के लिए ले गये जिसका परिणाम आने पर उन्होंने शिमला के कार्यालय में त्याग पत्र देकर 10–8–1939 को लखनऊ में यू.पी. सेक्रेटेरियट में सेवा योजन किया और उनके सौभाग्य से जून

1940 में ही उन्हें सीनियर ग्रेड में प्रोन्नत कर दिया गया। अपने छोटे भाई को सरकारी नौकरी में लगाने के लिए वे प्रयत्नशील थे, परन्तु स्वयं सरकारी नौकरी नहीं करना चाहते थे। इस विषय में मेरी कभी उनसे चर्चा नहीं हुई कि वे सरकारी नौकरी क्यों नहीं करना चाहते थे परन्तु उनका जीवन क्रम जो मेरी जानकारी में आया उससे यह भासित हुआ कि वे विदेशी अंग्रेजी सरकार की चाकरी करना पसन्द नहीं करते थे, वरन् समाज के उत्थान में और जैन धर्म एवं अपने देश के इतिहास के सम्बन्ध में प्रचलित भ्रान्त धारणाओं का निरसन करने में अपना योगदान करना श्रेयस्कर समझते थे। वकालत के पेशे में जो बेईमानी का वातावरण था और वकीलों को कचहरी परिसर में पेड़ के नीचे बैठने के लिए तख्त और बस्ता दिये जाते थे उससे अवमानना का जो बोध होता था, इन सबसे खिन्न होकर उन्होंने वकालत के पेशे को नहीं अपनाया। उस समय एक कहावत थी कि पढ़ा–लिखा व्यक्ति अगर बाबू नहीं बन सकता और मास्टर भी नहीं बन सकता तो वकील बनता है।

हमारे परिवार में 20वीं शती के दूसरे दशक से ही आधुनिक शिक्षा का प्रवेश हो गया था जिसका प्रारंभ हमारे बाबा पारस दास जी द्वारा 1915 में मैट्रिक की परीक्षा पास करने से हुआ था। हमारे ननिहाल में भी हमारे **नाना उग्रसेन कंसल** ने उसी समय के लगभग मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण कर क्रिश्चियन मिशन हाई स्कूल में अंग्रेजी और गणित के अध्यापक के रूप में अध्यापन कार्य प्रारंभ किया था। उन्होंने हाई और मिडिल कक्षाओं के छात्रों के लिए दो पुस्तकें – Commercial Practice और Simple Essays And Letters – भी लिखीं। दूसरी पुस्तक 1926 में प्रकाशित हुई थी, और यह हमारे पुस्तक संग्रह में संरक्षित है। उनके बड़े भाई मित्तर सेन ड्राइंग के अध्यापक थे। इन दोनों भाईयों ने मेरठ में ठठेरवाड़े में एक किराये का मकान लेकर जैन बोर्डिंग हाउस की स्थापना की थी, जिसमें आस–पास के गांवों आदि से शिक्षा के प्रति जागरूक जैन बालकों को रहने और अध्ययन करने की सुविधा प्रदान की जाती थी। रुड़की के थाम्पसन इंजीनियरिंग कॉलेज में ओवरसियर और इंजीनियर कक्षाओं में प्रवेश के लिए मास्टर मित्तरसेन ड्राइंग का अभ्यास कराते थे तथा मास्टर उग्रसेन गणित और अंग्रेजी का अभ्यास कराते थे। यह कार्यक्रम उनका अपने व्यवसाय से अलग निःशुल्क था। उस समय के बहुत से ओवरसियर और इंजीनियर उन दोनों भाइयों द्वारा प्रवेश हेतु शिक्षित किये गये थे। बाद को रेलवे रोड पर एक विशाल भूखण्ड पर जैन बोर्डिंग हाउस के भवन का निर्माण हुआ। जैन विद्यार्थियों को धार्मिक शिक्षा भी दी जाती

थी और 1930 के दशक में मेरठ में अपने प्रवास के दौरान हमारे पिता जी सप्ताह में एक दिन बोर्डिंग हाउस के विद्यार्थियों को जैन धर्म के दर्शन और सिद्धान्त के ग्रन्थों का ज्ञान कराया करते थे।

मेरठ शहर के ठठेरवाड़े मोहल्ले में हमारे बचपन में पीपल के पेड़ वाले मकान के नाम से जाने जाना वाला एक बहुत बड़ा ऊंचे चबूतरे वाला मकान था जिसमें बहुत से किरायेदार रहते थे। सम्भवतः यह मराठा सरदारों में से ही किसी की मिल्कियत थी। इसी के एक हिस्से में हमारी बुआ के ससुराल वाले भी अपना मकान होने से पहले किराये पर रहते थे। 1933 में ठठेरवाड़े में पंचमुखी के पिछवाड़े वाला मकान उन्होंने खरीदा और 1936 में हमारे बाबा जी ने भी उस मकान से जुड़ा एक हिस्सा खरीदा। बचपन में हमने इस पर गौर नहीं किया था परन्तु अब विचार करने पर यह प्रतीत होता है कि उस क्षेत्र के अधिकांश भवन पुराने मराठा सामंतों के रहे हो सकते हैं।

हमारे पिता जी का विवाह मास्टर उग्रसेन कंसल की सुपुत्री **अनन्त माला** से 12 फरवरी 1929 को सम्पन्न हुआ। नाना जी स्वयं अध्यापक थे अतः स्त्री शिक्षा में उनकी रुचि थी। उन्होंने अपनी पुत्री को हिन्दी वर्नाक्यूलर मिडिल की परीक्षा तथा संस्कृत में प्रथमा परीक्षा उत्तीर्ण करायीं। हमारी माता जी को हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी और उर्दू का ज्ञान था और वे स्त्री शिक्षा के प्रसार मे सोना बीबी का सहयोग भी करती थीं। उनके संस्कृत के ज्ञान और धार्मिक ग्रन्थों में अभिरुचि को देखते हुये हमारी बुआ जी की चचिया सास गुणमाला देवी ने उन्हें **लघु सिद्धान्त कौमुदी** भेंट की थी जो हमारी माता जी ने बहुत सहेज कर रखी हुई थी।

1920 के दशक में मेरठ में जैन समाज ने एक दस्तूरामल बनाया था जिसका उद्देश्य यह था कि समाज में धनी और निर्धन परिवारों में धन के कारण दूरियां न हों। इसके अनुसार मात्र एक रुपये से रोकने की रस्म की जानी थी। हमारे पिता जी के विवाह में इस दस्तूरामल का पालन किया गया था क्योंकि हमारे नाना जी विशेष रूप से सिद्धान्तवादी थे।

1930 में सविनय अवज्ञा आन्दोलन (Civil Disobedience Movement) प्रारम्भ हुआ। पिता जी ने भी कांग्रेस सेवादल की सदस्यता ग्रहण की। उनके साथियों में कैलाश प्रकाश थे। इस आन्दोलन से जुड़ने के कारण 1930 में वे इण्टरमीडियट की परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो गये। उसी वर्ष गांधी जी मेरठ आये थे। गांधी जी के मंच पर मेरठ कॉलेज के अंग्रेज प्रिन्सिपल कर्नल टी.एफ.ओ'डोनल

मौजूद थे। इससे पिता जी के मन में आन्दोलन के उद्देश्य के प्रति शंका उत्पन्न हुई और उन्होंने अपनी पढ़ाई में दत्तचित्त होना श्रेयस्कर समझां। तदनुसार 1931 में उन्होंने इण्टरमीडियट की परीक्षा ससम्मान उत्तीर्ण की और उसके बाद आगे की पढ़ाई चालू रखी।

उस आन्दोलन का प्रभाव तदपि हमारे परिवार में यह रहा कि हमारे घर चरखा आ गया और हमारे नाना जी के घर भी चरखा आ गया। हमारे बाबा जी ने अंग्रेजी लिबास नहीं पहना। हमारे नाना जी ने क्रिश्चियन मिशन हाईस्कूल से, जहां वे सीनियर टीचर थे, त्यागपत्र दे दिया और उसके बाद अपना स्कूल अपने मकान के पास स्थापित कर लिया। बच्चों के लिए जो लकड़ी के मुग्दर उन्होंने बनवाये थे उन्हे हमने अपने बचपन में देखा था। नाना जी का 1935 में असमय निधन हो गया और उनका स्कूल भी बन्द हो गया।

अपने माता–पिता की 6 सन्तानों में हम दो भाई जीवित रहे। मेरा जन्म 12 फरवरी 1932 को हुआ था और छोटे भाई रमा कान्त का जन्म 4 वर्ष बाद हुआ था। मेरी प्रारम्भिक शिक्षा 1938–39 में मेरठ में मन्दिर की पाठशाला में पं. राम रतन जी के शिक्षण में हुई थी। उस समय के मेरे एक साथी राजेन्द्र कुमार हैं।

1930 का दशक बेहद मंदी का था। पढ़े–लिखे नवयुवकों में बेराज़गारी चरम पर थी। उस ओर से नव जागृत युवक समुदाय का ध्यान हटाने के लिए सविनय अवज्ञा आन्दोलन विशेष रूप से कारगर हुआ था।

उन दिनों इनकम टैक्स विभाग में इन्सपेक्टर की नियुक्ति करने का अधिकार कमिश्नर को था। शिक्षा विभाग में एल.टी. के प्रशिक्षण के लिए नामांकन भी जिला अधिकारी करता था। आन्दोलन से सम्बद्ध होने के कारण भाई साहब इनके लिए अपात्र हो गये। तथापि वे निराश नहीं हुए और समाज में नवचेतना का संचार करने में तत्पर रहे। उन्होंने 1927 में ही मेरठ में नवयुवकों की जैन कुमार सभा का पुर्नगठन किया था और उसके सभापति निर्वाचित हुए थे। 1932 से 1935 में आगरा में अपने प्रवास के दौरान उन्होंने राजा मण्डी में जैन युवक संघ का गठन किया और आगरा के जैन हॉस्टल में जैन स्टूडेन्ट एसोसियेशन की स्थापना की। राजा मण्डी से रथयात्रा भी प्रारम्भ कराई। 1935 में मेरठ लौटने पर जैन सभा का पुनर्गठन किया और तीरगरान के मंदिर में वीर पुस्तकालय की स्थापना की। 1939 में जैन बोर्डिंग हाउस के संयुक्त मंत्री निर्वाचित हुये, तथा जैन पाठशाला के मैनेजर भी निर्वाचित हुये। इस बीच उन्होंने जैनों की शिक्षण संस्थाओं में अपना योगदान करना चाहा परन्तु उन संस्थाओं के व्यवस्थापकों की

मनोवृत्ति को देखकर वह क्षुब्ध हुये, तदपि प्रायः एक वर्ष 1937 में उन्होंने भेल्सा के एस.एस.एल. जैन हाईस्कूल में अपना योगदान किया। अन्ततः 1942 में वह लखनऊ चले आये और यहां आकर उन्होंने यूनियन मेडिकल स्टोर्स के नाम से औषधि का व्यवसाय प्रारम्भ किया। व्यापार के बजाय उनकी रुचि अध्ययन में और समाजोत्थान की ओर प्रवृत्त थी। 2500वीं वीर शासन जयंती के प्रसंग से 1946 में वे कलकत्ता भी गये परन्तु वहां उन्होंने समाज के नेतृत्व वर्ग की जो दशा देखी उससे क्षुब्ध होकर वापस आ गये। पुनः 1946–47 में उन्होंने वीर सेवा मन्दिर, सरसावा, में अपनी सेवाएं दीं और उस संस्था के शोध कार्यो को आगे बढ़ाया एवं शोध पत्रिका **अनेकान्त** के सम्पादन में अपना योगदान किया। आचार्य जुगल किशोर मुख्तार उनसे बहुत प्रभावित थे और विशेष आग्रह करके उन्होंने भाई साहब को वीर सेवा मन्दिर बुलाया था। मुख्तार साहब से जीवन पर्यन्त भाई साहब के आदरास्पद सम्बन्ध बने रहे।

भाई साहब को अपने दो अध्यापकों से जीवन में विशेष सहयोग प्राप्त हुआ। जब वह हाईस्कूल के छात्र थे तो उनके एक शिक्षक मि. रहमान थे। सेवा निवृत्ति के बाद वह लखनऊ आ गये थे, और संयोग से उनकी मुलाकात भाई साहब से हो गई। सेवा निवृत्ति के बाद मि. रहमान मेरठ में फैज़–आम इण्टर कॉलेज में प्रिन्सिपल नियुक्त हो गये थे। उन्होंने 1952–54 में आग्रह करके भाई साहब को अपने कॉलेज में अंग्रेजी के शिक्षण के लिए बुलाया।

मेरठ कॉलेज में एम.ए. में इतिहास विषय के भाई साहब के अध्यापक डॉ. बी. आर. चटर्जी थे। वह अन्ततः मेरठ कॉलेज के प्रिन्सिपल भी हो गये। 1950 के प्रारम्भ में जब भाई साहब से उनकी भेंट हुई तो उन्होंने भाई साहब की शोध प्रवृत्ति को और उसके परिपालन में उनके द्वारा किये गये लेखन को देखते हुये उन्हें प्राचीन भारतीय इतिहास के जैन स्रोतों पर पी–एच.डी. के लिए शोध करने का सुझाव दिया। डॉ.चटर्जी के प्रोत्साहन से भाई साहब ने अपना शोध–प्रबन्ध आगरा विश्वविद्यालय को प्रस्तुत किया और उन्हें 1956 में पी–एच.डी. की उपाधि प्रदान की गई।

परिस्थितियां अब बदल चुकी थीं। भारत अब स्वतंत्र देश था। उत्तर प्रदेश में जिला गज़ेटियरों के पुनर्लेखन के लिए एक कार्यालय स्थापित किया गया। उस कार्यालय के अध्यक्ष स्टेट ऐडिटर श्री विनोद चन्द्र शर्मा, आई. ए.एस., अपने कार्यालय के लिए एक शोध विधा में दक्ष व्यक्ति की तलाश में थे। चाचा जी (श्री अजित प्रसाद जैन) उनके साथ कार्य कर चुके थे और एक

औपचारिक मुलाकात में भाई साहब के सम्बन्ध में उनसे ज़िक्र आया कि वे इतिहास विषय में पी–एच.डी. हैं। शर्मा जी ने भाई साहब को मिलने के लिए बुलाया और उनसे प्रभावित होकर उन्हें 10 अग्रिम वेतन वृद्धियां देकर संकलन अधिकारी एवं उप–सम्पादक के पद पर नियुक्ति का प्रस्ताव किया जिसे स्वीकार कर 1958 में भाई साहब ने गज़ेटियर विभाग में अपनी सेवाएं दी।

1958 से 1972 तक भाई साहब गज़ेटियर विभाग में रहे और उनके कार्य काल में 22 जिलों के गज़ेटियर बनाये गये। वाराणसी, मुरादबाद, मेरठ, बरेली और मथुरा के इतिहास विषयक अध्यायों का लेखन उन्होंने स्वयं किया, फैजाबाद जिले के प्राचीन काल खण्ड का लेखन भी उन्होंने ही किया, तथा इलाहाबाद, बाराबंकी और सीतापुर जिलों के इतिहास विषयक अध्याय का सम्पादन किया। आई.ए.एस. संवर्ग के वरिष्ठ अधिकारी श्री विनोद चंद्र शर्मा, श्रीमती एशा बसंती जोशी, श्री सयैद अली अतहर रिज़वी और श्री प्रकाश चन्द्र सक्सेना उनके सेवा काल में स्टेट ऐडिटर रहे थे। श्री रिज़वी ने उन्हें दो वर्ष का सेवा–विस्तार दिये जाने की विशेष रूप से अनुशंसा की थी।

लखनऊ में आवासित होने के बाद चाचा जी (श्री अजित प्रसाद) ने 1953 में आर्य नगर में अपना निजी आवास 'पारस सदन' निर्मित करा लिया था। भाई साहब ने भी 9 मई 1960 को पानदरीबा चारबाग में भू–खण्ड क्रय करके 'ज्योति निकुंज' को अपना स्थायी आवास बना लिया।

सृष्टि के शाश्वत नियम के अनुसार 20वीं शती के उत्तरार्ध में 4 सितम्बर 1956 को बाबा जी, 22 अप्रैल 1976 को दादी जी, 5 अप्रैल 1986 को माता जी और 11 जून 1988 को पिता जी (भाई साहब) ने परिवार से अन्तिम विदा ली। 21वीं शती के प्रथम दशक में 25 जून 2005 को चाचा जी (श्री अजित प्रसाद) के आशीर्वाद की शीतल छाया से वंचित होना पड़ा, और 26 मई 2009 को भाई रमा कान्त भी चिर निद्रा में निमग्न हो गये।

परिवार में स्वावलम्बन, स्वाभिमान, स्वदेश–प्रेम, स्वतंत्र चिन्तन और साहित्य साधना की जो प्रवृत्ति है वह तुलसीराम जी से चली आ रही परम्परा की देन है। इस परम्परा को हमारे बाबा जी श्री पारस दास और पिता जी डॉ. ज्योति प्रसाद ने विशेष रूप से परिपुष्ट किया। यह सन्तोष की बात है कि हमारी सन्तति में भी यह परम्परा प्रवृत्त है।

———————

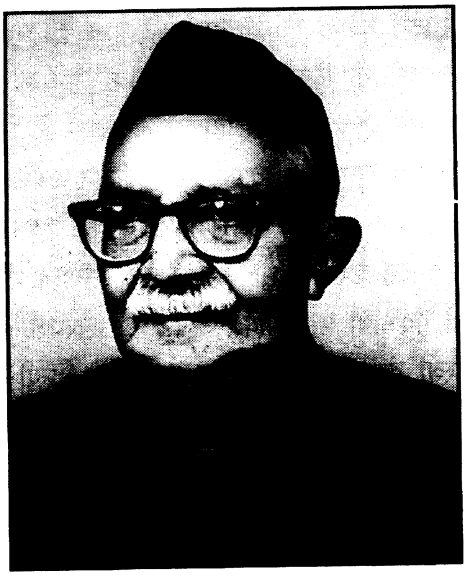

को

श्रद्धांजलि ❖❖❖❖ विनयांजलि

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन : मधुर संस्मरण

- इतिहास-मनीषी डॉ. नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी
पूर्व निदेशक, राज्य संग्रहालय, लखनऊ
निदेशक, ज्ञान प्रवाह, वाराणसी

पिछली शताब्दी के साठवें दशक के उत्तरार्ध की बात है। उत्तर प्रदेश शासन ने जिला गजेटियर्स के नवीकरण के लिए एक प्रशासनिक अधिकारी की अध्यक्षता में स्वतंत्र विभाग की स्थापना की थी। राज्य संग्रहालय लखनऊ के निदेशक के नाते उस विभाग से अंशतः मैं भी जुड़ा था। इस विभाग में संकलन अधिकारी और सम्पादक थे डॉ. ज्योति प्रसाद जैन। यही था मेरा उनसे परिचय का प्रथम बिन्दु। प्रथम दर्शन या औपचारिक वार्तालाप में यह कल्पना भी नहीं की जा सकती थी कि साधारण कोट टोपी में आवृत्त सौम्य एवं मृदुभाषी यह व्यक्ति अपने में तलस्पर्शी विद्वत्ता, प्रभावशाली लेखन कौशल्य, जैन शास्त्रों का मूल सैद्धान्तिक ज्ञान एवं हिन्दी व अंग्रेजी भाषा में प्रभुत्व समेटे होगा।

जनवरी २८-२९, १९७२, को मैने राज्य संग्रहालय में एक द्विदिवसीय जैन संगोष्ठी का आयोजन किया था। उन दिनों संग्रहालयों में इस प्रकार की संगोष्ठियों के आयोजन अपवाद रूप में ही होते थे। हमारा आयोजन अत्यधिक सफल रहा। विद्वानों का सहयोग भी खूब मिला। बम्बई संग्रहालय के निदेशक डॉ. मोतीचंद अध्यक्ष थे और सहभागियों के रूप में डॉ. यू.पी.शाह, डॉ. एम. के ढाकी, डॉ. वाकणकर, बर्लिन के प्रोफेसर हर्बर्ट हर्टल जैसे कई विद्वान पधारे थे। इस कार्य की सफलता का श्रेय डॉ. ज्योति प्रसाद जी को जाता है क्योंकि उन्हीं के कारण मुझे स्थानीय जैन समाज और जैन मिलन का तथा श्री लक्ष्मीचंद जैन जैसे लोगों का सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ था। आगे भी हमारा स्नेह सुदृढ़ होता गया।

ज्योति निकुंज, चारबाग, में १९७९ की १२ फरवरी को एक समारोह का आयोजन हुआ। उद्देश्य था डॉ. ज्योति प्रसाद जी तथा लखनऊ विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व के पूर्व विभागाध्यक्ष डॉ. राम कुमार दीक्षित का अभिनन्दन और इतिहास-मनीषी की उपाधि से अलंकरण। इस स्मरणीय

अवसर का अध्यक्ष बनने का सौभाग्य मुझे मिला। इस प्रसंग के छायाचित्र मेरे संग्रह में विद्यमान हैं।

१९८० में सेवा निवृत्त होकर वाराणसी चला आया किन्तु निवास स्थान की दूरी ने हमारे स्नेह के नेकट्य को कम नहीं किया। डॉ. साहब का स्नेह तथा उनके द्वारा सम्पादित **शोधादर्श** के दर्शन निरंतर होते रहे। इस हार्दिक स्नेह के परिणाम फलस्वरूप उन्होंने इतिहास-मनीषी की उपाधि के लिए १९८७ में मुझे चुना और लखनऊ में आमंत्रित किया। बी.ए., एम.ए., पी-एच.डी. आदि उपाधियों में और विद्वानों के द्वारा प्रसन्न होकर दी गई उपाधियों में अंतर होता है क्योंकि

विद्वानेव विजानाति विद्वज्जनकृतश्रमम्।
महि वन्ध्या विजानाति गुर्वी प्रसववेदनाम्।।

सृष्टि क्रम के अनुसार विद्वान का पांचभौतिक शरीर नष्ट हो जाता है पर उसकी कीर्ति काया चिरकाल तक अनेकों को प्रेरणा देती रहती है। डॉ. साहब द्वारा स्थापित **शोधादर्श** तथा उसमें प्रकाशित होने वाले उनके विविध विषयों की चर्चा करने वाले लेख लगभग दो दशक बीत जाने पर भी अत्यंत महत्व के हैं और आगे भी बने रहेंगे। **शोधादर्श** उन्हें समय-समय पर पुनः प्रकाशित करके शोधार्थियों को उपकृत कर रहा है।

हर्ष की बात है कि **आत्मा वै पुत्रनामासि** इस सिद्धान्त के अनुसार आज भी विद्या और विनय की मूर्ति डॉ. साहब हमारे बीच विद्यमान हैं और मार्ग दर्शन कर रहे हैं।

सी.के.-१/१३, भोंसले मन्दिर, पाटनी टोला, वाराणसी-२२१००१

श्रद्धेय डॉक्टर सा. : एक मधुर स्मृति

- श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन
पूर्व प्राचार्य, पी.डी. जैन इन्टर कालेज, फिरोजाबाद
परामर्श प्रमुख, जैन गजट
संस्थापक-अध्यक्ष, श्रुतसेवा निधि न्यास

एक पण्डित परिवार में जन्म लेने के कारण हमें बचपन से ही कुछ ऐसे संस्कार मिले कि किसी विद्वान का नाम जिह्वा पर आते ही उनके प्रति हमारे मन में श्रद्धा जाग उठती है। इस सन्दर्भ में पण्डित प्रवर आशाधर जी के इस कथन में हम पूरी आस्था रखते हैं -

जैन श्रुत तदाधारौ तीर्थद्वावेव तावतः।
संसारस्तीर्यते ताभ्यां तत्सेवी तीर्थसेवकः।।

अर्थात्, जिनवाणी और जिनवाणी के ज्ञाता पंडित ये दो ही यथार्थ में तीर्थ हैं, क्योंकि ये दोनों ही इस जीव को संसार से तारने वाले हैं। जो इनकी सेवा करते हैं वे ही सच्चे तीर्थसेवक कहलाते हैं।

विद्वान समाज के मार्गदर्शक होते हैं। आगम के आलोक में जीवन जीने की प्रेरणा लोगों को उन्हीं से मिलती है। विद्वान् की सुरक्षा में ही समाज की सुरक्षा है। जब विद्वानों का अभाव हो जाता है, तब सामाजिक गौरव की भी क्षति होती देखी जाती है। यही कारण है कि प्राचीन काल में राजा-महाराज और सेठ-श्रीमन्त विद्वानों को सम्मान पूर्वक आश्रय दिया करते थे। आर्थिक दायित्वों से निश्चिन्त होकर विद्वानों ने भी माँ जिनवाणी की अच्छी सेवा की है, इतिहास इसका साक्षी है।

जिनवाणी के सच्चे सपूतों में ऐसे ही एक अनन्य श्रुतसेवक थे श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन। जब हम हाईस्कूल में पढ़ते थे, तभी से उनके नाम से परिचित थे। उन दिनों हमारे घर पर **जैन सन्देश** पत्र आता था। उसमें उनके शोधपूर्ण, इतिहास परक एवं तात्विक आलेख प्रायः छपते रहते थे। हमारे भीतर जिनवाणी के प्रति रुचि ऐसे ही आलेखों को पढ़-पढ़कर जागृत हुई। पारिवारिक वातावरण का लाभ भी मिलता था। डॉक्टर साहब के दर्शन करने का कोई सुखद संयोग कभी हमें मिलेगा

तब यह कल्पना ही नहीं थी। इसका कारण था कि हम अपने छात्र-जीवन में कहीं आते-जाते ही नहीं थे।

पिछले दिनों फोन पर आदरणीय डॉ. शशि कान्त जी से बात हुई और उन्होंने **शोधादर्श** के विशेषांक के लिए कुछ लिखने का आग्रह किया तो अचानक हमारी स्मृति के वातायन से एक मधुर प्रसंग निकल कर बाहर आ गया। उसे यहां प्रस्तुत करने का लोभ-संवरण हम नहीं कर पा रहे हैं।

बात मार्च सन् १९७० की है। हमारे एक निकटस्थ मित्र बीमार थे और लखनऊ के किसी अस्पताल में अपना इलाज करा रहे थे। उन्हें देखने के लिए हम लखनऊ गए और चारबाग स्थित जैन धर्मशाला में ठहरे थे। कुछ ही दिनों पूर्व नगर के श्री चन्द्रप्रभ जैन मंदिर अतिशय क्षेत्र कमेटी ने हमारे द्वारा सम्पादित एक लघु कृति **चन्द्रप्रभ-वैभव** का प्रकाशन किया था। उसकी एक प्रति हमारे साथ थी। जब हम ऊपरी मंजिल पर स्थित जैन मंदिर में दर्शन को गए तो वह प्रति लोगों के पढ़ने के लिए वहीं छोड़ दी। आधा-पौन घण्टे के बाद जब हम धर्मशाला के ग्राउण्ड फ्लोर पर स्थित वाचनालय में अखबार आदि पढ़ने के लिए गए तब देखा कि एक तेजस्वी वयोवृद्ध सज्जन हमारे द्वारा मंदिर जी में छोड़ी उसी प्रति को वहाँ एक बैंच पर बैठे-बैठे पढ़ रहे थे। हम भी उनके पार्श्व में जाकर बैठ गये। उनके पूछने पर जब हमने अपना नाम बताया तो बोले 'अच्छा लिखते हो। तुम्हारी यह कृति छोटी, किन्तु पठनीय है।' प्रशंसा सुनकर मन में खुशी हुई और संकोच के साथ हमने उनका परिचय पूछा, बोले 'डॉ. ज्योति प्रसाद जैन'। हम तो मन-ही मन खुशी से इठलाने लगे। इतने बड़े विद्वान से इतने सहज ढंग से मिलना होगा, इसकी हमें कोई कल्पना ही नहीं थी।

हम अपनी सीट से उठे और श्रद्धेय डॉ. साहब के चरण-स्पर्श किए। आशीर्वाद मिला, साथ ही घर आने का स्नेहपूर्ण आदेश भी। हमने उनके घर का पता नोट किया और दिया उनके आदेश के परिपालन का आश्वासन भी, यह हमारा सौभाग्योदय था, ऐसा हम मानते हैं।

पैदल ही पूछते-पूछते हम उनके घर पहुंच गए। पास में ही तो था - चारबाग में ही। कुण्डी खटखटाई, द्वार खुला और कमरे में डॉक्टर साहब दिख गए। पुनः चरण स्पर्श किए। सिर पर उनके हाथ का स्पर्श पाकर हम रोमांचित हो उठे। किसी यशस्वी विद्वान से यह हमारी प्रथम भेंट थी। कुछ देर घर-परिवार की बातें हुईं। डॉ. शशि कान्त जी, श्री रमा कान्त जी तथा अन्य सबसे परिचय हुआ। ऐसा लगा कि हम विद्वानों की किसी कार्यशाला में हैं।

वार्तालाप के बाद ऐसा अनुभव हुआ कि हम अपने ही परिवार में बैठे हैं। लगा ही नहीं कि हम पहली बार मिल रहे हैं। ऐसा आशीर्वाद, स्नेह और प्यार ही तो किसी के जीवन की अमूल्य सम्पत्ति है। श्रद्धेय डॉ. साहब ने उत्तर प्रदेश और रुहेलखण्ड के जैन वैभव से सम्बन्धित अपनी दो कृतियां हमें दीं, जो एक यादगार धरोहर के रूप में आज भी हमारे पास सुरक्षित हैं। उनके विद्वान पुत्र-द्वय ने बिना भोजन किए हमें लौटने नहीं दिया।

अपने मित्र से अस्पताल में मिलकर और उनके प्रति शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ की कामना व्यक्त कर दूसरे दिन हम घर लौट आए। मई १९७० में हमें पी.डी.जैन इण्टर कॉलेज, जिसमें हम हिन्दी के प्रवक्ता थे, का प्रधानाचार्य चुन लिया गया। इसे हम एक उत्कृष्ट जैन इतिहासकार एवं जैनदर्शन के तलस्पर्शी विद्वान के प्रशस्त आशीर्वाद का फल ही मानते हैं।

घटना ४२ वर्ष पुरानी हो गई पर स्मृति आज भी नई और ताजी है। महामना डॉक्टर साहब की इस पावन स्मृति को शतशः प्रणाम!

१०४, नई बस्ती, फिरोजाबाद-२८३२०३

विनयांजलि

- श्री राजेन्द्र कुमार जैन
सम्पादक - वीर
राष्ट्रीय उपाध्यक्ष - भारतीय जैन मिलन
जनरल सेक्रेटरी - वेस्टर्न यू. पी. चैम्बर ऑफ कामर्स,

यह मेरा परम सौभाग्य है कि मेरे जीवन काल में मुझे पिता तुल्य डॉ. ज्योति प्रसाद जी की जन्म-शताब्दी पर अपनी विनयांजलि प्रस्तुत करने का अवसर मिला। डॉक्टर साहब पूर्व में मेरठ में ही निवास करते थे एवं उनके बड़े सुपुत्र डॉ. शशि कान्त आरम्भिक काल में एक ही स्कूल में एक ही क्लास में मेरे साथ ही पढ़ते थे अतः डॉक्टर ज्योति प्रसाद जी का मेरे ऊपर विशेष स्नेह था। मैं अक्सर लखनऊ जाता था और लखनऊ जाकर डॉक्टर साहब का आशीर्वाद लेना मैं कभी भूलता नहीं था। मैं जब भी जाता था उन्हें सदैव अध्ययन करते पाया या कुछ लिखते पाया। जैन धर्म की गूढ़ से गूढ़ बातों को बड़ी सरलता से समझा देना उनकी विशेषता थी। रात्रि में घर पर ही शास्त्र का पठन उनकी दैनिक क्रिया थी।

डॉक्टर साहब का सारा जीवन एक खुली किताब है। उन्होंने अपने जीवन में जिस प्रकार से जैन धर्म के मूल सिद्धान्तों को आत्मसात किया वह सारी जैन समाज को प्रेरणा देता रहेगा। उनके व्यवहार में सरलता एवं सहजता थी जिसके कारण समाज के हर वर्ग को वे सहज ही अपने विचारों से आकर्षित कर लेते थे।

स्पष्टवादिता डॉक्टर साहब की विशेष पहचान थी। धर्म विरूद्ध यदि किसी ने कोई बात लिखी है या कही है तो उसके बारे में अपनी लेखनी से वे समाज का मार्गदर्शन करने में कभी हिचकिचाते नहीं थे।

मेरा सौभाग्य था कि डॉक्टर साहब ने **वीर** पत्र के प्रधान सम्पादक का भार सम्हाला और मुझे उनके मार्गदर्शन में **वीर** के सम्पादक का दायित्व मिला। डॉक्टर साहब ने मुझे सम्पादकीय लिखने के लिए प्रोत्साहित किया और पत्र लिखकर वह मुझे कहा करते थे कि 'राजेन्द्र, इस बार तुम अमुक विषय पर लिखो।' इस प्रकार मैं भी उनके मार्गदर्शन में **वीर** जैसे प्रमुख पत्र में सामाजिक समस्याओं एवं विषयों पर लेख लिखने का साहस करने लगा। वास्तव में डॉक्टर साहब के सम्पर्क में आने के बाद अक्षम व्यक्ति भी अपनी क्षमता का उपयोग सही दिशा में करने लगता था।

डॉक्टर साहब ने अक्सर चर्चा में मेरे से कहा कि 'यह दिगम्बर समाज का

दुर्भाग्य है कि वह वालों में बंटा है, कोई अग्रवाल है कोई खंडेलवाल है तो कोई और दूसरा वाल है। यदि यह वाल हट जाये तो एक वृहद हाल का रूप दिगम्बर समाज ले सकता है एवं दिगम्बर जैन समाज तभी सशक्त हो सकता है।'

डॉक्टर साहब की एक सबसे बड़ी विशेषता यह भी थी कि वह मान-सम्मान की भावना से बहुत दूर थे।

बात १९७४ की है। भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव की सारे देश में विविध कार्यक्रमों के साथ तैयारियां चल रही थीं। राष्ट्रसंत विद्यानन्द जी मुनि के आशीर्वाद से मेरठ में 'वीर निर्वाण भारती' की स्थापना इस उद्देश्य से की गयी थी कि देश के मूर्धन्य जैन विद्वानों का सामाजिक स्तर पर अभिनन्दन किया जाये एवं उन्हें पुरस्कृत किया जाये। मैं 'वीर निर्वाण भारती' का सचिव था। विद्यानन्द जी ने चर्चा के दौरान यह संकेत दिया कि जैन इतिहास के क्षेत्र में डॉ. ज्योति प्रसाद जी लखनऊ वालों का विशेष योगदान रहा है अतः 'वीर निर्वाण भारती' द्वारा यदि डॉक्टर साहब का अभिनन्दन किया जाये तो अच्छा होगा। मैं विशेष रूप से लखनऊ गया। डॉ. ज्योति प्रसाद जी **वीर** के प्रधान सम्पादक थे और मैं उनके मार्गदर्शन में सम्पादक की जिम्मेदारी सम्हाल रहा था। मैने उनसे कहा कि 'वीर निर्वाण भारती' उनका अभिनन्दन एवं उनको पुरस्कृत करना चाहती है। यह कार्यक्रम विद्यानन्द जी मुनि महाराज के सान्निध्य में होगा। पहले तो डॉक्टर साहब ने अभिनन्दन के प्रति अरुचि दिखाई परन्तु विद्यानन्द जी महाराज के सान्निध्य में कार्यक्रम होने से उनके दर्शन एवं उनके साथ तात्विक चर्चा का अवसर प्राप्त होने के कारण डॉक्टर साहब ने मुझे अपनी स्वीकृति प्रदान की परन्तु उनकी बात से यह स्पष्ट झलक रहा था कि वे किसी ऐसे अभिनन्दन या सम्मान के प्रति रुचि नहीं रखते थे। विद्यानन्द जी मुनि महाराज के साथ डॉक्टर साहब की जो भी चर्चा हुई उसके पश्चात् विद्यानन्द जी के मुख से यही निकला कि 'वास्तव में आप विद्यावारिधि हैं। आपको जैन इतिहास के बारे में जो जानकरी है वह दुर्लभ है।'

आज डॉक्टर साहब हमारे बीच नहीं हैं परन्तु उनके कार्य, उनकी कृतियां हम सब का मार्गदर्शन करती रहेंगी। मैं श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म-शताब्दी के अवसर पर अपनी ओर से उनके चरणों में विनयांजलि प्रस्तुत करता हूं।

१३३२, पी.एल. शर्मा रोड, मेरठ-२५०००१

एक श्रद्धांजलि ऐसी भी

- श्री सुरेश जैन 'सरल'

विख्यात वरिष्ठ साहित्यकार, चिन्तक मनीषी

आपको करता हूँ आदाब। श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद। हमने अनेक वर्षों तक मेहनत की, इतनी - कि श्रम रूपी गोबर से सन गये। पर अभी तक न समझ पाये कि आप किस तरह विद्वान बन गये।

वर्तमान शोधोत्सुओं की भीड़ में/दस में से एकाध होता है विद्वान, बाकी होते हैं - भौंकने/बकने वाले श्वान।

आजकल विद्वानगण श्रेष्ठि या संत के साथ चित्र मढ़ा रहे हैं, 'पद' पर 'लद' कर, 'कद' बढ़ा रहे हैं।

घर में लिखते नहीं बनता, विद्यालय में पढ़ाते नहीं बनता, अधिकारियों के हाथ जोड़-जोड़, खुद को किसी तरह खपा रहे हैं। मगर भाषण में गौरव से बतलाते हैं -

'हम संस्था के हितार्थ खुद को तपा रहे हैं।'

आप! आप हिन्दी-अंग्रेजी के पचीसों ग्रंथों के प्रणेता हैं, शताधिक निबन्धों के जनेता है।

जैन सिद्धान्त भास्कर, जैन एन्टीक्वेरी, शोधांक, शोधादर्श, अनेकान्त, वायस ऑफ अहिंसा, अहिंसा वाणी आदि शोध एवं पुरातत्व के स्थापित पत्रों के सफल सम्पादक थे, अखिल-विश्व-जैन-मिशन के संचालक थे।

जैन विद्या, साहित्य, संस्कृति, इतिहास के अनवरत विशिष्ट अभ्यासी थे, पुरातत्व के अधिशासी थे, आपके १००वें जन्म दिवस पर आपको नमन करते हैं,
आपके नित्य स्मरण में लेखनी लेकर हम रमण करते हैं।

थे - भारतीय ज्ञानपीठ ग्रन्थमाला के प्रमुख सम्पादनकर्ता, अशुद्ध साहित्य के दुख-हर्ता!

आप कल तक - विद्वान श्रृंखला के प्रथम छोर थे, शिखर थे, आश्चर्य यह कि सौ साल बाद, आज भी विद्वानों में शिखर-पुरुष हैं, हम, हमारी पीढ़ियां, इस सत्य से खुश हैं।

हे डॉ. साब! मेरा कहा विनोद न मानिए,
विद्वान ही नहीं, आप विद्वान के 'बाप' थे,
सच, आप तो बस, आप थे।

'सरल कुटी', ४०५ गढ़ाफाटक, जबलपुर-४८२००२

भावभीनी श्रद्धांजलि

- श्री निर्मल कुमार जैन सेठी
अध्यक्ष, श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि हमारे परम आदरणीय डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन के जन्म के १०० वर्ष पूरे होने पर उनकी स्मृति में एक स्मारिका प्रकाशित हो रही है।

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन हमारे जैन समाज के प्रकांड विद्वान् थे। सरकारी कार्य करते हुए जैन इतिहास के बारे में उन्होंने काफी ज्ञान प्राप्त कर लिया। उनकी भारतीय इतिहास पर काफी बहुमूल्य रचनायें प्रकाशित हुई हैं जिनमें **भारतीय इतिहास : एक दृष्टि, प्रमुख ऐतिहासिक जैन पुरुष और महिलायें** मुख्य हैं। उन्होंने जैन धर्म के बारे में बहुत सी अनखोजित चीजें खोज कर पूरे विश्व के इतिहास में हलचल पैदा कर दी थी।

मेरा उनसे बहुत प्रेम था। मेरे साथ में वे तथा उनके छोटे भाई अजित प्रसाद जी जैन सीतापुर महावीर जयन्ती पर आये थे। वहाँ पर उन्होंने बहुत पाण्डित्यपूर्ण वक्तव्य दिया था। मैं उनसे बहुत प्रभावित हुआ था। उन्होंने मुझे एक बार कहा था कि 'आपने गोरखपुर में मिल खरीदी है। वहां पर देवरिया के पास एक कहाउं क्षेत्र है। वहाँ पर समुद्रगुप्त राजा के समय का शिलालेख है। वह मानस्तम्भ पर सबसे पुराना शिलालेख है उसकी रक्षा करना।' मैंने वहां जाकर उस मानस्तम्भ के चारों तरफ दीवार बनवा कर उसकी रक्षा की। उस समय मानस्तम्भ में गाय भैंसे बांधी जाती थीं।

भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव को उत्तर प्रदेश में मनाने में डॉक्टर साहब ने बहुत सहयोग दिया। एक स्मृति-ग्रन्थ का प्रकाशन भी आपके द्वारा हुआ। अनेक कार्यक्रमों में आपने भाग लेकर भगवान महावीर की शिक्षाओं का प्रचार किया।

डॉ. साहब के सान्निध्य में हमारे श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष साहू शांति प्रसाद जी जैन ने डालीगंज लखनऊ में सुमेरचन्द पाटनी अतिथिगृह में श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी की राज्यस्तरीय उत्तर प्रदेश दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी की शाखा का डॉ. ज्योति प्रसाद जैन, श्री

सुकमारचंद जैन मेरठ, श्री अजित प्रसाद जैन लखनऊ और श्री सुमेरचंद जी पाटनी की उपस्थिति में विधिवत उद्घाटन किया था।

यह श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी की प्रथम राज्यस्तरीय शाखा थी जिसको हम लोगों ने खोला था। इस प्रयास से साहू शांति प्रसाद जी बहुत खुश हुए थे और उन्होंने हमें आशीर्वाद दिया। उस समय हमें साहू शान्ति प्रसाद जी के साथ अयोध्या, रतनपुरी (रौनाही) एवं श्रावस्ती तीर्थों पर जाने का मौका मिला। आदरणीय शांति प्रसाद जी ने अपने बहुमूल्य सुझाव दिये और कहा कि 'समस्त दिगम्बर जैन समाज को मिलकर अपने प्राचीन तीर्थों की रक्षा करनी चाहिये। हमारी बहुमूल्य सम्पत्ति हैं हमारे प्राचीन तीर्थ।'

हमने लखनऊ में १९८४ में वैंकटेश्वर फ्लोर मिल ऐशबाग में खरीदी। मेरा मूल उद्देश्य था कि हम डॉ. साहब से मिलते रहेंगे और उनका मार्गदर्शन प्रचीन तीर्थों के जीर्णोद्धार के बारे में लेते रहेंगे। मुझे उन्होंने जो प्यार दिया और जो मार्गदर्शन प्राचीन जैन तीर्थों के बारे में बताया, वह मैं हमेशा याद रखता हूँ।

डॉक्टर साहब ने जिनशासन की जो प्रभावना बढ़ाई है और जैन इतिहास को विश्व के सामने रखा उसके लिये हमारी जैन समाज उनको युगों-युगों तक याद रखेगी। इस अवसर पर हम श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा की तरफ से उनको भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं और भगवान जिनेन्द्र से प्रार्थना करते हैं कि वे उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

४०३, सहयोग बिल्डिंग, ५८ नेहरु प्लेस, नई दिल्ली-११००१९

डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन की जन्म-शती के उपलक्ष में

- श्री लूणकरण नाहर जैन
अध्यक्ष - तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.
मुख्य संरक्षक - श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन सभा, लखनऊ

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि **शोधादर्श** पत्रिका जैन समाज के गौरव, महान विद्वान, इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन की स्मृति में उनके जन्म शताब्दी वर्ष के उपलक्ष में एक विशेषांक निकाल रही है। डॉ. साहब से मेरा प्रथम परिचय सन् १९८१ में जब तपस्वी पूज्य लाभचन्द जी म.सा. लखनऊ में चातुर्मास हेतु विराजमान थे, तब हुआ। आप और आपके अनुज स्व. श्री अजित प्रसाद जी जैन म.सा. के प्रवचन सुनने ४ महीने तक लगातार मुन्ने लाल कागजी जैन धर्मशाला चारबाग में पधारते थे। प्रवचन के बाद डॉ. साहब से मेरा रोज ही मिलना होता था। चातुर्मास समाप्ति के बाद भी जैन मिलन लखनऊ की मीटिंगों में आपके विद्वत्तापूर्ण प्रवचन सुनने को मिलते थे। डॉ. साहब उच्च कोटि के लेखक, इतिहास-अन्वेषक होने के साथ ही बच्चों सी मुस्कान लिए सरल स्वभावी इंसान थे। आपके सारयुक्त सम्प्रदाय-मुक्त गम्भीर लेखन से जैन समाज को सही दिशा मिली। बहुत सारी संस्थाओं से सम्मानित होने के बावजूद अभिमान आपको जरा भी नहीं छू सका। मैं ऐसे महान इतिहास पुरुष की जन्म शती पर उनके चरण कमलों में श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुए शत्-शत् नमन करता हूं।

जो इतिहास-मनीषी, विद्या-वारिधि, प्रज्ञावान विद्वान थे।
जैन जगत के जग-मग तारे, डॉ. ज्योति प्रसाद जी महान थे।।
जन्मशती पूज्यवर की आयी, हम सब मिल गुण-गान करें।
चरणों में झुककर विद्वत्वर के शत-शत बार प्रणाम करें।।

५१४, राजेन्द्र नगर, लखनऊ-२२६००४

———

एक संत विद्वान को श्रद्धा सुमन

- डॉ. विनय कुमार जैन
पूर्व विभागाध्यक्ष, जय नारायण पी.जी.कॉलेज, लखनऊ
व कोआर्डिनेटर, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

विद्या-वारिधि, इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का जैन समाज में ही नहीं बल्कि अपने समकालीन जैनेतर विद्वानों में भी एक विशिष्ट स्थान रहा है। उन्होंने भारतीय इतिहास के अलावा जैन दर्शन और सामाजिक मामलों पर भी अपनी कलम चलाई। वह जिस भी विषय को उठाते, प्रामाणिकता की दृष्टि से पहले उसका एक शोधार्थी की तरह अध्ययन करते, फिर लिखना शुरू करते।

बाबू जी से मेरी पहली मुलाकात पर्यूषण-पर्व के समय चारबाग जैन मंदिर में स्थित तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के पुस्तकालय में हुयी थी। वह किसी शास्त्र को पढ़कर वहां उपस्थित लोगों को उसका गूढ़ अर्थ समझा रहे थे। मैं भी श्रोताओं में सम्मिलित हो गया। शास्त्र वाचन समाप्त करने के बाद उन्होंने मेरा परिचय पूछा। जब मैंने बताया कि मैं एक महाविद्यालय में जीव विज्ञान का लेक्चरार हूं तो उन्होंने मुझसे पुस्तकालय आने और वहां होने वाले कार्यक्रमों में रुचि लेने का आग्रह किया।

तत्पश्चात मंदिर जाने पर अक्सर उनसे पुस्तकालय में मुलाकात होती। वह मुझे जैन शास्त्रों में जीव विज्ञान से सम्बधित विषयों पर शोध करने के लिये प्रेरित करते। संस्कृत और प्राकृत का ज्ञान न होने के कारण मैं अपनी असमर्थता प्रकट करता था। लेकिन वह मुझे हमेशा प्रोत्साहित करते तथा कहते कि लिखना शुरू करो, मैं तुम्हारी मदद करूंगा। मुझे जीवन भर इस बात का अफसोस रहेगा कि मैं यह कार्य प्रारंभ ही नहीं कर पाया।

बाबूजी आज हमारे बीच नहीं हैं फिर भी मैं आँख मूंदकर उनका चेहरा हू-बहू याद कर सकता हूं। छोटे-पके बाल, आंखों पर चश्मा, शरीर पर धोती और कमीज तथा चेहरे पर एक सहज और संक्षिप्त मुस्कराहट। अपने मधुर स्वभाव में स्पष्ट और बिना किसी लाग-लपेट के बातें करना। किन्तु जिस चीज ने मुझे सबसे अधिक आकर्षित किया वह थी उनकी सरलता - जलन, दंभ, आवेश और वैमनस्य की सभी भावनाओं से दूर - विवेक और विनम्रता की मूर्ति। संक्षेप में कहूं तो एक संत विद्वान।

अब तो बस यादें शेष हैं।

३६, पटेल नगर, आलमबाग, लखनऊ-२२६००५

जैन जगत के जगमगाते सितारे थे
डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

- श्री रोहित कुमार जैन
सेवा-निवृत्त अपर निबन्धक, सहकारी समितियां, उ.प्र.

संसार में वैसे तो प्रतिदिन अनेकों प्राणी जन्म लेते व मरते हैं किन्तु कुछ ऐसे बिरले प्राणी ही होते हैं जिन्हें उनकी मृत्यु के बाद भी उनके व्यक्तित्व व कृतित्व के कारण हम हमेशा स्मरण करते हैं। डॉ. ज्योति प्रसाद जैन भी ऐसे ही बिरले पुरुष थे जिन्होंने अपने पुरुषार्थ से इतिहास के गर्त में खोये हुये जैन धर्म व जैन वाङ्मय के अनेकों रहस्यों को अपने अथक प्रयासों से उजागर किया तथा अपने तर्कों व तथ्यों से सिद्ध भी किया। अपनी कृतियों के माध्यम से उन्होंने गूढ़ व गहन सिद्धान्तों को भी सरल भाषा शैली में प्रस्तुत किया।

अपनी प्रज्ञा व प्रतिभा से उन्होंने जैन धर्म के सिद्धान्तों व इतिहास को एक नया आयाम दिया। भगवान महावीर को एक नए कलेवर में सरल व सुगम भाषा-शैली में प्रस्तुत कर जन-जन के लिए सुलभ करा दिया। अपनी तेजस्विता, निष्ठा व ज्ञान के द्वारा वे शीघ्र ही समाज में लोकप्रिय हो गए थे तथा अपने प्रवचनों व धार्मिक गोष्ठियों के माध्यम से उन्होंने लोगों के दिलों में अपनी गहरी पैठ बना ली थी। लोगों की अनेकों धार्मिक व अन्य सामाजिक शंकाओं का भी निवारण वे बहुत ही सहजता व सरलता से कर देते थे। वास्तव में उनका व्यक्तित्व बहुत ही महान तथा जीवन बहुत ही सरल व सहज था। उन्हें जीवन में कोई दिखावा व आडम्बर पसंद नहीं था।

अनेकों संस्थाओं द्वारा उन्हें इतिहास-मनीषी, विद्या-वारिधि, आदि अनेकों उपाधियों व सम्मान से विभूषित किया गया। शासन द्वारा भी उन्हें, साहित्यिक अभिरुचि को देखते हुए, कई वेतन वृद्धि देकर नियोजित किया गया परन्तु वे जैसे इन सब उपाधियों व सम्मान से निर्लिप्त रहते हुए सदैव ही धर्म व साहित्य की आजन्म सेवा करते रहे।

इतिहास के पन्नों पर उन्होंने अपने कार्यों से अपने व्यक्तित्व व कृतित्व की जो अमिट छाप छोड़ी है वह सदा ही अविस्मरणीय रहेगी। वास्तव में वे जैन जगत के जगमगाते सितारे थे।

उन्हें उनकी जन्मशती पर शत-शत नमन।
ज्ञान की वे ज्योति थे और ज्योतिपुंज थे, ज्ञान के,

जैन दर्शन, व्याकरण व साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान थे।
उदार हृदय, सादा जीवन, प्रवचन कला में प्रवीण थे,
जैन जगत के उजियारे डॉ. ज्योति प्रसाद जैन महान थे।।
श्रद्धा, भक्ति और आस्था के वे अनुपम प्रतीक थे,
दर्शन, ज्ञान और आचरण से प्रतिपूरित निर्भीक थे।
अपने बेबाक तर्कों और सद्विचारों से बनाते अपनी पहचान थे,
जैन जगत के ----------।।
अपनी कृतियों से उन्होंने धर्म को एक नई पहचान दी,
अपनी सरल भाषा-शैली से सिद्धान्तों को ऊंचाई प्रदान की।
अनेकों गोष्ठियों व सभाओं की वे प्रमुख जान थे,
जैन जगत के ----------।।
उनके गुणों का बखान करने में हम अक्षम हो जाते हैं,
उनके गौरव व गरिमा के शब्द आते-आते रुक जाते हैं।
उनकी पावन जन्मशती पर हम केवल इतना कह पाते हैं -
जैन जगत के उजियारे डॉ. ज्योति प्रसाद जैन महान थे !

६, द्वारिकापुरी, इन्दिरानगर, लखनऊ-२२६०१६

जन्म-शती पर श्रद्धा-सुमन

- श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश'

डॉक्टर ज्योति प्रसाद जैन जी का विशिष्ट व्यक्तित्व था।
जैन धर्म् दर्शन में देखा जीवन का अस्तित्व था।।
सब के प्रति सद्भाव प्रेम था, सब से सद् व्यवहार था।
पर-सेवा, पर-हित चिन्तन ही जीवन का आधार था।
जन्म शती की सुस्मृतियों को उनकी आज प्रणाम है।
ज्योतिर्मय वे ज्योतिपुंज थे दूर-दूर तक नाम है।

उन्हीं के नाम आज की शाम !
सभी के आये हमेशा काम !!

कवि, लेखक एवं समीक्षक
पद्मा कुटीर, सी-२६, बंसत विहार, अलीगंज, लखनऊ-२४

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन - एक युग-पुरुष

- श्री भगवान भरोसे जैन

सेवा-निवृत्त संयुक्त सचिव, उ. प्र. शासन

डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन जगत के उन उद्भट विद्वानों में से एक थे, अनेक उपाधियों से अलंकृत होते हुए भी जिनकी सादगी, सरलता, सहजता और स्वाभाविकता ज्यों-की-त्यों उनमें विद्यमान थी। वे अनेक गुणों से सुशोभित थे। मेरी दृष्टि में वे एक **युग-पुरुष** थे। उन जैसा व्यक्ति निकट भविष्य में होना असंभव-सा लगता है। उनकी लेखनी ने जैन दर्शन और उससे संबंधित साहित्य, इतिहास, पुरातत्व, आदि के क्षेत्र में जो सेवायें अपनी अर्पित कीं वह अपने आप में अनुपम एवं अनूठी हैं और सदैव स्मरण रहेंगी। पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादन के साथ-साथ यह बताने में मुझे संकोच नहीं कि उन्होंने विवाह आदि अवसरों पर पढ़ने वाले मंगल गीत, सेहरा, भजन, विनतियां आदि की भी रचनाएं की हैं जो सुहृदय कवि का पस्चिय देती हैं।

मैं कब उनके व्यक्तिगत सम्पर्क में आया यह मुझे ठीक से स्मरण नहीं और न ही मुझे यह याद है कि मैं कब उनका स्नेहपात्र बन बैठा लेकिन लगभग ४०-४५ वर्ष अवश्य हो गये होंगे। इस अवधि में मेरे मन-मस्तिष्क में अनेक संस्मरण अंकित हैं जिनको लिख पाना दुष्कर है। श्रवण मिल वाले स्व. श्री अजित प्रसाद जी 'बब्बे जी' द्वारा उनके निवास-स्थान चौक में एक साप्ताहिक धार्मिक गोष्ठी प्रत्येक शनिवार को आयोजित हुआ करती थी, जिसमें यहियागंज, सआदतगंज, डालीगंज, चौक के बुजुर्ग धार्मिक व्यक्ति आमंत्रित होते एवं उपस्थित रहते थे। मैं भी अवश्य जाता था। मेरी धर्म एवं उनके सिद्धान्तों को जानने की रुचि बचपन में जब मैं पढ़ता था तब से ही थी। मेरी मां बहुत धार्मिक थीं, उनके धार्मिक संस्कार ही थे जिन्हें मैं भुला नहीं पाया।

मैं डॉ. साहब से बहुत प्रभावित था क्योंकि जैन दर्शन और उनके सिद्धान्तों पर उनकी गहरी पैठ थी। शास्त्र के गूढ़ अर्थ को समझने की कला उनमें अद्वितीय थी। शास्त्र-प्रवचन के समय प्रश्नकर्त्ता द्वारा पूछी गयी जिज्ञासा का समाधान उनका बहुत ही अनुपम और अनूठा होता था - प्रश्नकर्त्ता स्वयं ही निरुत्तर हो जाता था। स्व. बब्बे जी द्वारा आयोजित रेल से तीर्थयात्रा के दौरान मैं उनके साथ था जो लगभग एक माह की थी। अनेक तीर्थ-स्थानों के ऐतिहासिक महत्व पर वह अपना मंतव्य बताते रहते थे। दशलक्षण-पर्व के दिनों में चारबाग मन्दिर में उनको सुनने जाया करता था। उनके द्वारा शास्त्रों के पठन-पाठन की गहरी छाप मेरे मन-मस्तिष्क पर ऐसी पड़ी है कि मैं स्वाध्याय प्रतिदिन करता हूं - नये ग्रन्थों को पढ़ने की जिज्ञासा बनी रहती है। मैं उनकी जन्मशती पर अपनी भाव-भीनी श्रद्धाँजलि एवं विनयांजलि अर्पित करता हूँ।

३१०/१२, चूड़ी वाली गली, चौक, लखनऊ-२२६००३

श्रद्धा-सुमन

- श्री महेन्द्र प्रसाद जैन
सेवा-निवृत्त वरिष्ठ वित्त एवं लेखा अधिकारी

इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन से मेरा परिचय सर्वप्रथम उन्नीस सौ साठ के दशक में उनके अनुज स्व. श्री अजित प्रसाद जैन के निवास पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ पर हुआ था। उसके पश्चात पारिवारिक अनुष्ठानों इत्यादि के माध्यम से बराबर सम्पर्क बना रहा। जैन एवं जैनेतर समाज डॉक्टर साहब को उनके वैयक्तिक गुणों व ज्ञान और सादा जीवन उच्च विचारों के लिए आदर्श स्वरूप विशेष स्थान प्रदान करता रहा है। जैन धर्म के वे ज्ञान-चक्षु समझे जाते रहे हैं। डॉक्टर साहब के धार्मिक प्रवचनों का लाभ अपनी धर्मपत्नी की प्रेरणा से पर्यूषण पर्व की अवधि में निरंतर दस दिनों तक प्राप्त करने का सुअवसर मुझे प्राप्त हो सका। डॉक्टर साहब के ज्ञान की सीमा का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि व्याख्यानों के मध्य अगर किसी को कोई जिज्ञासा रही तो उसका सटीक निदान तत्काल उस व्यक्ति एवं अन्य उपस्थित श्रावकों को संतुष्ट करने में सक्षम रहता था। उनके द्वारा लिखी गई पुस्तकों Religion and Culture of the Jains, **भारतीय इतिहास : एक दृष्टि, तीर्थंकरों का सर्वोदय मार्ग** आदि से जो ख्याति एवं सम्मान उन्हें प्राप्त हुआ वह अद्वितीय था। तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के तत्वावधान में मुन्नेलाल कागजी जैन धर्मशाला में जैन पुस्तकालय भी डॉक्टर साहब एवं उनके अनुज स्व. श्री अजित प्रसाद जैन के अथक प्रयासों का ही प्रतिफल है, जिससे समस्त स्थानीय एवं बाहरी स्थानों से आए हुए जैन बंधु लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

डॉक्टर साहब बहु आयामी प्रतिभा के मूर्धन्य पुरुष थे। उनका बृहद ज्ञान भंडार सदैव याद किया जाएगा। मैंने डॉक्टर साहब को स्वभाव से अत्यन्त सरल, मृदुभाषी एवं धर्म प्रभावना के प्रति प्रोत्साहित करते हुए पाया। कोई भी व्यक्ति उनके पास जाकर अपनी कठिन से कठिन समस्या का समाधान सहज ही प्राप्त कर लेता था। परिवार के सभी सदस्यों को सदैव दूसरों के प्रति आदर भाव एवं स्व-चरित्र को सर्वश्रेष्ठ बनाए रखने की सीख देते रहे। यही कारण है कि डॉक्टर साहब की सन्तति का प्रत्येक सदस्य छोटा या बड़ा अपने से बड़ों को यथोचित सम्मान प्रदान करने की प्रवृत्ति एवं क्षमता रखता है। डॉक्टर साहब के समस्त परिवार को साहित्य पिपासा धरोहर के रूप में प्राप्त है। डॉक्टर साहब अब इस संसार में नहीं हैं परन्तु हम सभी के दिलों में निरंतर बने रहेंगे। मैं विशेष रूप से उनके प्रति अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करता हूँ।

५१, खुर्शेद बाग, लखनऊ-२२६००४

(श्री महेन्द्र प्रसाद जी हमारी समिति के प्रबन्धन से भी सक्रिय रूप से जुड़े हैं।-सम्पादक)

गुरु को नमन

- सौ. डॉ. इन्दु राय (रस्तोगी)

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन मेरे अत्यंत ज्ञानी, सरल और आत्मीयता से भरपूर गुरु रहे। उनके सान्निध्य में आने पर उनके महान व्यक्तित्व की पर्तें उद्घाटित होती रहीं।

अस्सी के दशक की बात है। मुझे एम.ए. हिन्दी करने के पश्चात् पी-एच.डी. उपाधि के लिए लखनऊ विश्वविद्यालय में मेरे निर्देशक ने मेरी जैन पारिवारिक पृष्ठभूमि को देखते हुए 'बीसवीं शती के हिन्दी जैन महाकाव्य' विषय पर शोध कार्य करने को कहा। मैं जैन साहित्य से नितांत अपरिचित थी। उस समय किसी ने मुझे डॉ. ज्योति प्रसाद जैन से मिलने की सलाह दी। डॉ. साहब से मिलते ही मेरा सारा भटकाव समाप्त हो गया। वे तो जैन वाङ्मय के जीवन्त इनसाइक्लोपीडिया थे। मैने उन्हें हमेशा अपने कर्म क्षेत्र तख्त पर धवल धोती कुर्ते में अध्ययन या लेखन में तल्लीन पाया। उनके पास ढेरों डाक आती थी और डॉ. साहब हर पत्र का स्वयं लिखकर उत्तर देते थे। इसके अलावा भी अत्यंत सारपूर्ण एवं महत्वपूर्ण लेख लिखने में व्यस्त रहते थे। एक शोधार्थी के रूप में मैंने उनसे बहुत कुछ सीखा। सच तो यह है कि उनके प्रोत्साहन, मार्गदर्शन और सहयोग से ही मेरा शोध-प्रबंध पूरा हो सका। उन्हीं की प्रेरणा से उस दौरान मेरे कई लेख **अनेकांत, सन्मति सन्देश, श्रमण** आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। डॉ. साहब विद्यार्थियों को सदा उत्साहित करते थे। वे चाहते थे कि जिस जैन साहित्य की साम्प्रदायिक कहकर सदा उपेक्षा की जाती है उसका सार्वभौमिक स्वरूप पाठकों के समक्ष लाया जाए।

यह भी एक संयोग है कि आदरणीय डॉ. साहब की पुण्यतिथि ही मेरी पुत्री की जन्मतिथि है। जैन साहित्य-इतिहास के मर्मज्ञ विद्यावारिधि, इतिहास-मनीषी, आदरणीय डॉ. साहब को मेरा सश्रद्ध-सस्नेह नमन !

१/२, विराज खण्ड, गोमतीनगर, लखनऊ-२२६०१०

साहित्य समाज के गौरव रत्न

- सौ. डॉ. राका जैन

ज्ञानज्योति डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन के व्यक्तित्व ने ज्योति-निकुंज बनकर जन-जन की अन्तर्ज्योति को प्रकाशित कर दिया। वे जितने सरल स्वभावी थे उतनी ही उनकी ज्ञान ज्योति आज भी प्रज्वलित हो रही है और होती रहेगी। वे इतिहास-मर्मज्ञ थे। प्रायः इतिहास विषय इतना दुरूह होता है कि उसके रुचिकार कम होते हैं तथापि डॉ. ज्योति प्रसाद जी ने अनेक इतिहास-ग्रन्थ रच दिए। वे हमारे पूज्य बाबा जी बाबू कामता प्रसाद जी जैन के समकालीन रहे हैं। दोनों का पोस्टकार्ड पर चुनिंदे सुगठित शब्दों के साथ पत्राचार होता था। एक पोस्टकार्ड में कितना विषय समा जाता था यह वे दोनों महान विभूतियां ही जान सकती थीं।

बाबू कामता प्रसाद जी जैन की तरह जैन समाज के सुप्रसिद्ध साहित्यसेवी, इतिहास के जाने-माने मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जी से सभी साहित्य प्रेमी अच्छी तरह से परिचित हैं। उनके द्वारा जैन साहित्य, इतिहास एवं जैन विद्या का जो भंडार भरा गया है, वह इतना विशाल है कि उसका मूल्यांकन 'आज के समाज में ही नहीं, इतिहास जगत में युगों-युगों तक उल्लेखनीय रहेगा।' आपके लगभग ५०० ऐसे लेख हैं जो शोध-खोजपूर्ण हैं और पुष्ट प्रमाणों एवं सन्दर्भों से परिपूर्ण हैं।

आप केवल साहित्यिक ही नहीं बल्कि अनेक सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक संस्थाओं से भी जुड़े रहे। आप कई पत्र-पत्रिकाओं के संपादक रहे। आप ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी ग्रन्थमाला के संपादक रहे। वे साहित्य समाज के गौरव रत्न हैं और रहेंगे। ऐसे मनीषी-रत्न का स्मरण प्रेरणा स्रोत के रूप में उनकी उपस्थिति का भान कराता है। उनका यह ज्ञान-प्रवाह आगे निरन्तर बहता रहे जन-जन के द्वारा, यही कामना है।

३/६५, विकास खण्ड -३ गोमतीनगर, लखनऊ-२२६०१०

जन्मशती पर ऐतिहासिक व्यक्तित्व को नमन

- डॉ० ऋषभचन्द्र जैन

निदेशक, प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान, वैशाली

डॉ० ज्योति प्रसाद जैन भारतीय ऐतिहासिक अनुसन्धान के क्षेत्र में ख्यातिलब्ध विद्वान थे। जैन इतिहास एवं संस्कृति सम्बन्धी लेखन में उनके योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता। **भारतीय इतिहास : एक दृष्टि, प्रमुख ऐतिहासिक जैन पुरुष और महिलायें, तीर्थंकरों का सर्वोदय मार्ग, प्रकाशित जैन साहित्य** आदि उनकी कृतियां खूब चर्चित रही हैं। ऐसे विद्वान् से मेरा साक्षात्कार तो नहीं हो पाया, किन्तु उनके साथ कार्य को मूर्तरूप देने का अवसर मुझे लम्बे समय तक मिला।

बाबू सुबोध कुमार जैन 'रईस', आरा, जैन संस्कृति और धर्म के बड़े प्रेमी थे। वे निरन्तर विद्वानों के सम्पर्क में रहते थे। इसी पारस्परिक वात्सल्य के कारण उनके और डॉ० ज्योति प्रसाद जैन के बीच प्रगाढ़ आत्मीयता थी। जैन सिद्धान्त भवन और श्री देवकुमार जैन प्राच्य शोध संस्थान, आरा, से डॉ० साहब अन्तिम क्षण तक जुड़े रहे। वे **जैन सिद्धान्त भास्कर** एवं **Jaina Antiquary** के आजीवन सम्पादक रहे हैं। स्याद्वाद महाविद्यालय, वाराणसी, में मेरे अध्ययन काल से ही बाबू सुबोध कुमार जैन का मुझ पर अगाध स्नेह था। वे मेरे पठन-पाठन एवं लेखन से प्रभावित थे। परिणाम स्वरूप स्नातक परीक्षा पास करने के बाद उन्होंने मुझे जैन कन्या पाठशाला, आरा, में शिक्षक के पद पर नियुक्त कर लिया तथा जैन सिद्धान्त भवन का कार्य देखने का भी निर्देश दिया और यह भी कहा कि डॉ० ज्योति प्रसाद जैन साहब **भास्कर** का सम्पादन कर रहे हैं, अब तुम्हें भी उनके कार्य में सहयोग करना है। इस तरह मुझे अपनी रुचि का कार्य मिल गया और उन्हें अकादमिक कार्यों के लिये एक मनोनुकूल सहयोगी।

अब **जैन सिद्धान्त भास्कर** में एवं **Jaina Antiquary** में प्रकाश्य शोध निबन्धों/आलेखों को देखने-समझने का कार्य प्रारम्भ हो गया। डॉ० साहब को पत्र लिखना और सम्पादित निबन्धों को उनके पास अवलोकन हेतु भेजना, उनके यहां से निबन्ध वापस आने पर उनकी छपाई का कार्य प्रूफरीडिंग सहित देखना मेरी दिनचर्या के अंग बन गये। डॉ० साहब के संशोधनों को देख-देखकर मैंने धीरे-धीरे यह कार्य सीखने का प्रयास किया। इसलिये मैं आदरणीय डॉ० ज्योति प्रसाद जैन साहब का अत्यन्त ऋणी हूँ।

Jaina Antiquary में डॉ. साहब का एक वृहत् निबन्ध **Jaina Authors and Their Works** नाम से श्रृंखलाबद्ध छप रहा था, जिससे जैन रचनाकारों एवं उनकी रचनाओं के सम्बन्ध में मेरा ज्ञान निरन्तर आगे बढ़ने लगा। जैनाचार्यों के इतिहास की दृष्टि से **Jaina Antiquary** के वे अंक आज भी बहुत उपयोगी हैं। बाद में अन्य कई प्रसंगों में उनका परोक्ष मार्गदर्शन मेरे लिये प्रेरणास्रोत बना।

इसी बीच जैन सिद्धान्त भवन की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सचित्र पाण्डुलिपि **'रामयशोरसायनरास'** जो मुनि केशराज द्वारा रचित थी, के सम्पादन व प्रकाशन की बात आगे बढ़ी। इसके बहुत से पत्र उपलब्ध नहीं थे। बाबू सुबोध कुमार जैन और मेरे द्वारा विद्वानों, संस्थाओं और अन्य महत्वपूर्ण व्यक्तियों से पत्राचार करके उक्त ग्रन्थ के सम्बन्ध में जानकारी करने का प्रयत्न किया गया, किन्तु परिणाम हतोत्साहित करने वाला ही रहा। इसी बीच ज्ञात हुआ कि बहुत पहले **रामयशोरसायनरास** मूलरूप में गुजराती लिपि में जैन पुस्तकोद्धार फण्ड, बम्बई, से छपा था। पुस्तक खोजकर बड़े श्रम से मैंने पाण्डुलिपि के अनुपलब्ध अंश गुजराती लिपि से देवनागरी लिपि में बदलकर तैयार किये, जिन्हें सचित्र मूल पाण्डुलिपि के साथ परिशिष्ट के रूप में दिया गया है। इसमें वीरायतन, राजगिर, के सन्त मुनि समदर्शी जी एवं अन्य लोगों से भी सहयोग प्राप्त किया था। यह ग्रन्थ डॉ० ज्योति प्रसाद जैन के सम्पादकत्व में जैन सिद्धान्त भवन, आरा, से यथासमय प्रकाशित हुआ था। इस कार्य में डॉ० साहब का सतत् मार्गदर्शन मेरे लिये कार्यकारी रहा।

ऐसी महान् विभूति को उनकी जन्मशती पर मेरा शत-शत नमन !

भारत भवन, पुराना थाना के पास, वैशाली-८४४१२८

जैन इतिहास परम्परा और डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

- डॉ. विजय कुमार जैन
प्रोफेसर, केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, लखनऊ

बीसवीं शताब्दी के जैन महापुरुषों में इतिहासविद् के रूप में डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का नाम लिया जाता है। जैन इतिहास के क्षेत्र में आपकी कई रचनाएं प्रकाशित हैं तथा उनकी अभी भी बहुत सी रचनाएं अप्रकाशित हैं जैसे कि **Jainism Through The Ages** आदि।

जैन संस्कृति सर्वाधिक प्राचीन भारतीय संस्कृति है। इसके इतिहास को समझने के लिए **युग-यग में जैन धर्म** एक महत्त्वपूर्ण कृति है। पाश्चात्य इतिहासकार मानते हैं कि आर्य बाहर से आए। उनके साथ में संस्कृति के कई बिन्दु भारतीय संस्कृति में जुड़ते गए। संस्कृति के आदान-प्रदान की यह परम्परा चलती रही। आर्य बाहर से आए या नहीं आए, यह तो एक अलग प्रश्न है लेकिन इधर ज्ञात इतिहास से यह सिद्ध होता है कि बाद में भी कई आक्रमण भारतदेश एवं संस्कृति पर हुए। उनमें से क्रिश्चियन और अरब की संस्कृति एवं इस्लाम के आक्रमण को इतिहास के प्रमाणों की आवश्यकता नहीं है। इसी तरह भारतीय संस्कृति में भी परस्पर संघर्ष चलता रहा। एक-दूसरे का वजूद मिटाने के नमूने यह साबित करते हैं कि राजाओं ने या धार्मिक पुरोहितों ने इसमें संगठित होकर प्रयास किए।

जैन संस्कृति के वजूद को मिटाने के लिए भी कम प्रयास नहीं किए गए। दक्षिण भारत में जैन मन्दिरों को नष्ट करने एवं जैन धर्मावलम्बियों पर अत्याचार के सैकड़ों उदाहरण प्राप्त होते हैं; जिस तरह से भारत में बौद्ध धर्म का नामोनिशान तक नहीं छोड़ा गया उसी तरह जैन संस्कृति को नष्ट करने के भी प्रयास किए गए हों तो आश्चर्य नहीं क्योंकि आज भी जब स्वतन्त्रता के ६६ साल हो गए हैं जैन धर्म को स्वतन्त्र धर्म के रूप में मानने में भी लोगों को दिक्कत होती है। तथाकथित इतिहासविद् भगवान् महावीर को जैन धर्म का संस्थापक कह कर पहले के तीर्थंकरों की परम्परा का वजूद मिटा देना चाहते हैं, जबकि वैदिक परम्परा में भी प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के प्रमाण अच्छी तरह से प्रतिपादित हैं तथा पुराणों में भी भारतवर्ष का नाम ऋषभदेव के पुत्र भरत के कारण माना गया है। भगवान् नेमिनाथ व भगवान् पार्श्वनाथ के साक्ष्य मिल चुके हैं। २४ तीर्थंकरों का परिचय कवियों के महाकाव्यों से प्राप्त होता है, इसमें एक टकसाल शैली में सबके जीवन-चरित गुम्फित किए जाते हैं। इन ग्रन्थों की प्राचीनता न होने के कारण लोग इन महापुरुषों की प्राचीनता में सन्देह करने लग जाते हैं जबकि जनमानस में व्याप्त प्राक्-इतिहासकालीन परम्परा को झुठलाया नहीं जा सकता। यह सही है कि इन तीर्थंकरों का प्रामाणिक बाह्य साक्ष्य

आज उपलब्ध नहीं है लेकिन उनके अनुयायियों की भक्ति यह प्रमाणित करती है कि जनमानस में इनके प्रति आस्था की परम्परा चलती रही है। इनकी आराधना करने वाले भक्तों को तीर्थंकरों की संख्या बढ़ाकर कोई नम्बर नहीं लेने हैं। **इन विश्वासों एवं परम्परा की सिद्धि डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ने अपने अथक परिश्रम से की है। 'युग-युग में जैनधर्म'** एक ऐसी लघुकृति है जो सम्पूर्ण भारतीय इतिहास को समझने की कुंजी कही जा सकती है। इसमें अत्यन्त ही वैज्ञानिक ढंग से काल-गणना का परिचय कराते हुए जैनधर्म की प्राचीनता का बोध कराया गया है। यह कृति मात्र जैनधर्म के लिए उपयोगी नहीं है बल्कि सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति की प्राचीनता के लिए महत्त्वपूर्ण है। साम्प्रदायिक विद्वेष के कारण इनका सही आकलन नहीं किया जाता है। डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की **भारतीय इतिहास : एक दृष्टि** भी सम्पूर्ण भारतीय इतिहास की महत्त्वपूर्ण रचना है। इसमें सिलसिले वार तिथियों के आधार पर घटनाओं का वर्णन किया गया है जो एक साधारण व्यक्ति के लिए भी बहुत उपयोगी है।

कहने को जैन समाज एक पढ़ा-लिखा समाज है लेकिन इतिहास के क्षेत्र में बहुत पिछड़ा है। परिदृश्य में कुछ चित्र हैं, यथा -

- भगवान् महावीर स्वामी जिनका शासन चल रहा है, उनकी रचनाओं में से ही स्वयं समाज ने विवाद खड़ा कर दिया।

- अतिशयोक्ति एवं चमत्कार को इतना ज्यादा महत्त्व दिया गया कि धरातल में घटित घटनाएं कपोल कल्पित मानी जाने लगीं।

- आडम्बर एवं पूजापाठ में मूलभावना को ध्यान में न रखकर समाज को भ्रमित किया जाना।

- दिगम्बर-श्वेताम्बर के विवाद ने सम्पूर्ण जैन समाज को बहुत क्षति पहुँचाई, भले ही वह संघ भेद को लेकर हो या आगम की प्रामाणिकता को लेकर। बाद में क्षेत्रों में कब्जा करने की होड़ में कोर्ट कचहरी में चल रहे केसों से छवि बिगड़ती रही है। अनेकान्त को मानने वाले तथा अहिंसा के पुजारी जब इस तरह का व्यवहार करते हैं तो उनके आदर्शों पर प्रश्नचिह्न लगते हैं।

इन समस्याओं के समाधान के लिए **शोधादर्श** ने समय-समय पर खूब आवाज उठाई। **शोधादर्श** के प्रकाशन का प्रारम्भ भी डॉ. ज्योति प्रसाद जी ने किया जिसे स्मृतिशेष श्री अजित प्रसाद जी तथा श्री रमा कान्त जी ने आगे बढ़ाया। वर्तमान में डॉ. शशि कान्त जी के नेतृत्व में यह पत्रिका अभी भी प्रकाशित हो रही है। डॉ. ज्योति प्रसाद जी के शताब्दी वर्ष में हम चाहते हैं कि इतिहास के क्षेत्र में हमने जो भूलें की हैं उनको न दुहराएं तथा जैन इतिहास की सुरक्षा के लिये प्रयास करें, यही हमारी डॉ. ज्योति प्रसाद जी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

३/६५, विकास खण्ड -३, गोमतीनगर, लखनऊ-२२६०१०

इतिहास-मनीषी का स्मरण और उन्हें नमन

- प्रोफेसर वृषभ प्रसाद जैन

विश्वविद्यालय परामर्श मंडल से सम्बद्ध

इतिहास-मनीषी आचार्य डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन का यह शताब्दी वर्ष है और इसमें विशेष रूप से उनका स्मरण होना अप्रासंगिक नहीं है, बल्कि यह सही मायने में उनके कृत्यों का स्मरण वर्ष है। भारतवर्ष में इतिहास 'ऐसे-ऐसे हुआ' का लेखा-जोखा भर नहीं माना गया है, बल्कि 'ऐसे होता आया' का लेखा-रूप है। इन दोनों दृष्टियों में अन्तर यह है कि जहां घटनाएं केवल घटनाओं की दृष्टि से रिकार्ड होती हैं वहाँ इतिहास प्रेरक नहीं बनता या प्रेरित नहीं करता, वह तो केवल हुए की सूचना देता है, पर जहाँ ऐसे होता आया की घटनाएं हमें अपने वर्तमान को और-अधिक समृद्ध बनाने की प्रेरणा देती हैं वहां इतिहास निरंतर वर्तमान के चितेरे के रूप में काम करता है ठीक उसी तरह जैसे एक चित्रकार एक चित्र को बनाता है। मुझे लगता है श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद जी इस दूसरी दृष्टि के इतिहास-पुरुष थे।

मैं जब पहली बार उनसे मिला तो मेरी दो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं। वे तख्त पर बैठे थे। वे मेरे पितामाह इतिहासज्ञ डॉ. कामता प्रसाद जी जैन की इतिहास को सामने लाने की प्रवृत्ति और कर्म के सहयात्री थे और इस सह-यात्रा के कारण ही मेरी आदरणीय आशा मौसी जी का विवाह उनके कनिष्ठ पुत्र श्री रमा कान्त जैन जी से हुआ था, ऐसा मैंने अपने बचपन में अपनी मां स्वर्गीया श्रीमती प्रतिभा देवी जैन से सुना था। मैंने उनके चरण स्पर्श किये, उन्हें पुस्तकें भेंट की और भेंट करने के बाद मेरी उनसे उन पुस्तकों पर जो चर्चा हुई उसका कुछ अंश इस प्रकार है।

१. कुछ देर पुस्तकें पढ़ने के बाद उन्होंने पुस्तकों की विषय वस्तु पर बात की और यह बात बहुत गंभीर हुई तथा उसने आगे काम करने की एक नई दृष्टि विकसित करने में मेरी निरंतर मदद की।

२. पुस्तकें मैंने अपने पारिवारिक प्रकाशन से प्रकाशित की थीं, तो उन्होंने कहा, 'बेटा, पुस्तकों के प्रकाशन के लिए कुछ बड़े प्रकाशक ढूँढ़ लो, तुम्हें न मिलें तो मैं तुम्हारी मदद करूं, पर पुस्तक के स्वयं प्रकाशन में मत उलझो, क्योंकि स्वयं प्रकाशन में यदि तुम उलझ जाओगे तो तुम्हारा जितना लेखन साफ है और जितने विचार साफ हैं उनसे समाज या तुम स्वयं भी उतने लाभान्वित न हो पाओगे, जितना होना चाहिए। अतः मेरा सुझाव है कि प्रकाशन में अब भविष्य में मत उलझना।' कितना साफ और

सटीक सुझाव था उनका किसी एकेडेमिशियन की श्री-वृद्धि के लिए! मैने प्रकाशक को ढूँढ़ने में उनकी मदद तो न ली, पर मुझे उनकी इस बात ने बहुत प्रेरणा दी और मैंने उसके परिणाम स्वरूप अपनी **प्रतीक और प्रतीक विज्ञान** नामक पुस्तक स्वयं प्रकाशित न करके राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, से प्रकाशित करायी, जिसकी काफी चर्चा हुई और उस समय प्रकाशित होने वाले **साप्ताहिक हिंदुस्तान** ने भी उस पर लंबी समीक्षा प्रकाशित की थी।

३. उन्होंने कहा कि जब पुस्तक किसी अच्छे प्रकाशक से प्रकाशित हो जाए तो उसे उस विषय के कम से कम दस-पांच विशेषज्ञों के पास उनसे उन पर टिप्पणी करने के लिए जरूर भेजते रहना। इसका लाभ यह होता है कि तुमने जो पूर्व विचारकों के विचार लिये हैं अर्थात् उद्धृत किये हैं और जो नये विचार तुमने दिये हैं उसकी विचार-सरणि चलने लगती है। आज समाज में सबसे बड़ा ह्रास यह है कि विचार करने वाले लोग लगातार कम होते जा रहे हैं और तुम विचार करके बात आगे बढ़ाते हो।

४. उपर्युक्त बातों के साथ ही साथ उन्होंने इतिहास को प्रस्तुत करने में तथ्यों के संग्रहण और तथ्यों के विश्लेषण के बारे में भी अपनी दृष्टि दी।

इन उपर्युक्त सभी बातों से वे व्यक्ति रूप में आज नहीं हैं, पर कृतिकार के रूप में, कृतियों के लेखन के रूप में और नये रचनाकार रूप कृतियों के निर्माता के रूप में आज भी वैचारिक रूप में उपस्थित हैं, इसलिए मुझे तो हमेशा यह अनुभूति होती है कि वे केवल इतिहास की पुस्तकों के लेखक-भर नहीं थे, बल्कि वे सच्चे मायने में मनुष्यता के इतिहास के निर्माता भी थे और ऐसी मनुष्यता के इतिहास के निर्माता थे जो हर उत्तम समाज के लिए स्पृहणीय बनता रहेगा, इसलिए उनके इस शताब्दी वर्ष में मैं मन भीतर से उनको नमन करता हूं और अपनी प्रणामांजलि अर्पित करता हूँ।

बी-१/३, सेक्टर जी, जानकीपुरम, लखनऊ-२२६०२१

भारतीय इतिहास के समर्थ अन्वेषक डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

- डॉ. जयकुमार उपाध्ये
प्राकृतभाषाविभागीय सह-आचार्य
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, नयी दिल्ली

भारतीय पुरातत्व, इतिहास, कला, संस्कृति एवं सभ्यता के समुन्नयन में डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का साहित्यिक योगदान महनीय है। बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी, सिद्धहस्त लेखक, गंभीर चिंतक, सारस्वत शोध संस्थानों के संघटक, समन्वय दृष्टिकोण के प्रबुद्ध साधक, उदारहृदयी इतिहास-मनीषी विद्यावारिधि इतिहासरत्न, यशस्वी सम्पादक, बहुभाषाविद् जैसे अनेकों अलंकरणों से अभिमंडित आदरणीय डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के जन्म शताब्दी वर्ष के पावन प्रसंग पर अपार श्रद्धा और अतुल विनय के साथ विनयान्जलि अर्पण करते हुए अतीव हर्ष का अनुभव कर रहा हूं।

बाल्यकाल में आपके पिता श्री पारस दास जी जैन ने आपको उत्तम धार्मिक संस्कारों द्वारा विकसित किया। मेरठ के दिगम्बर जैन मंदिर की पाठशाला में **बालबोध** (चार भाग) का अध्ययन, दर्शनपाठ, नित्यनियमपूजन, **छहढाला** आदि की शिक्षा आपने प्राप्त की। **लघुसिद्धान्तकौमुदी** जैसे जटिल संस्कृत व्याकरण ग्रंथ का पारायण आपके पिताश्री ने कुमारावस्था में कराया था।

वस्तुतः आपका कार्यक्षेत्र वकालत, लोकप्रबोधन, काँच उद्योग, औषधि व्यापार एवं राजकीय सेवा जैसे अनेक महत्वपूर्ण विभागों में व्याप्त था। किसी महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय में अध्यापन के क्षेत्र में न रहते हुए भी शताधिक शोधार्थियों को पी-एच.डी. हेतु अनुसंधान करने वालों को आपका मार्गदर्शन प्राप्त हुआ था तथा डी.लिट्. उपाधि के लिए शोध करने वाले छात्रों के लिए आपके द्वारा प्रसूत साहित्य मार्गदर्शक था। अपने जीवन के महत्वपूर्ण ५५ वर्ष के दीर्घकाल में आपने पत्रकारिता के माध्यम से समाज प्रबोधन किया तथा तात्कालिक प्रासंगिक मार्मिक विषयों पर शोध आलेखों के माध्यम से जनजागरण किया। आपके निजी पुस्तकालय में १०,००० पुस्तकों का संकलन है जिनमें अधिकांश जैन साहित्य से संबंधित हैं। इस संग्रह में प्राचीन हस्तलिखित पोथियों एवं महत्वपूर्ण पाण्डुलिपियों का समावेश भी है। आपके लेखन, संकलन, सम्पादन, सृजन एवं शोध प्रवृत्तियों के साथ लगभग २५००० पत्र

सुरक्षित हैं। स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, समाजसेवी परोपकारी, दानी, श्रेष्ठी, विद्वान, प्रशासन के प्रमुख अधिकारी, श्रेष्ठ साहित्यकार, कवि चिंतक, इतिहासवेत्ता, पुरातत्त्ववेत्ता, स्थापत्यकला निष्णात, राजकीय संपदा, राष्ट्रीय संदर्भ जैसे सार्थक प्रवृतियों के माध्यम से प्रकाशित मौलिक सामग्री महत्वपूर्ण दस्तावेजों के साथ आपके पास मौजूद है।

आप एक अधिकार प्राप्त बहुभाषा भाषी थे। हिन्दी, इंग्लिश, मराठी, गुजराती, बंगला, अपभ्रंश, संस्कृत, प्राकृत, जर्मन, फ्रांसीसी जैसी भाषाओं के निष्णात विद्वान थे।

आप एक सफल पिता और यशस्वी दादा इसलिए हैं क्योंकि आपका पूरा परिवार आपके द्वारा उन्नत संस्कारों को प्राप्त कर शताब्दी वर्ष में भी साहित्य साधना का अनवरत कार्य जारी रखे है। उसका जीवन्त साक्ष्य **शोधादर्श** पत्रिका है। मुझे अत्यंत गर्व है कि आपकी पौत्री डॉ. अलका जैन का प्राकृत मुक्तक काव्य में लोकसंस्कृति विषय पर **वज्जालग्गम्** मुक्तक काव्य पर आधारित, शोध-प्रबंध शीघ्र प्रकाश्य है। साहित्य मनीषी डॉ. शशि कान्त जैन का मैं अत्यंत आभारी हूँ कि वे अपने पिता जी का जन्म-शताब्दी वर्ष मनाने में तत्पर हैं। उनका साहित्यिक अवदान उल्लेखनीय है। यशस्वी लेखक के रूप में इनकी पहचान साहित्य साधना के लिए प्रेरक दीपस्तम्भ जैसी है।

श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ के प्राकृतभाषा विभाग में आगामी शैक्षणिक सत्र में एक विशेष व्याख्यान डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के जन्म शताब्दी वर्ष में आयोजित कराने का मानस बनाया है। पुनः मैं इतिहास-मनीषी के साहित्यिक अवदान के आदर्शों के अनुपालन करने की विनम्र अभिलाषा व्यक्त करता हूँ। साथ में उनके द्वारा रचित समग्र साहित्य संस्कृत विद्यापीठ के प्राकृतभाषा विभागीय पुस्तकालय में संग्रहीत कर स्वयं, समस्त विभागीय प्राध्यापक एवं छात्र लाभान्वित हों, ऐसी मंगल कामना करता हूँ।

ई-४२, द्वितीय तल, साकेत, नयी दिल्ली-११००१७

आदरणीय बाबू जी की जन्मशती पर उद्‌गार

- श्री स्वराज्य चन्द्र जैन
से. नि. अधिशासी अभियन्ता, उ. प्र. लो. नि. वि.
उपाध्यक्ष, श्री जैन धर्म प्रवर्द्धिनी सभा, लखनऊ

आदरणीय परम पूज्य बाबू जी डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन की जन्मशती पर उनको नमन करते हुए मैं अपने हृदयोद्‌गार उनके श्री चरणों में अर्पित करता हूं -

तारीखें इतिहास बनाया करती हैं
नये सृजन की प्यास बढ़ाया करती हैं।
जिनमें कुछ करने का जज़्बा होता है
तिथियां उनको खास बनाया करती हैं।

तो ऐसे ही थे हमारे बाबू जी !

बाबू जी से मेरा प्रथम मिलन जनवरी १९६८ में हुआ था और यह मिलन अप्रैल १९६९ में रिश्तेदारी में बदल गया, तब से मुझे बाबू जी का आन्तरिक प्यार व आशीर्वाद मिलना प्रारम्भ हो गया।

दीपक चाहे सोने का हो या मिट्‌टी का, मूल्य उसकी ज्योति का होता है जिसे कोई अंधेरा मिटा नहीं सकता। हमारे बाबू जी का यथानाम तथाकाम रहा है। जैन साहित्य में उनका नाम हमेशा सूरज की तरह अमर रहेगा। उनकी आत्मा का प्रकाश आज भी हमारी राह को दीप्तिमान कर रहा है और बाबू जी की प्रेरणा हमारा पथ प्रदर्शन कर रही है। इसलिए -

बाबू जी को भूल जाऊँ नामुमकिन सी बात है
किसी को न हो यकीन ये और बात है।
जब तक रहेगी सांस तब तक बाबू जी रहेंगे याद,
अब ये सांस ही टूट जाये तो और बात है।

२२/६०१, एम.आई.जी., इन्दिरा नगर, लखनऊ-२२६०१६

प्रेरणादायक व्यक्तिमत्ता के धनी

- पं. काशीनाथ गोपाल गोरे

वर्ष १९५७ से ही सौभाग्यवशात् एक ही विभाग में कार्यरत रहने के कारण मैं डॉ. शशि कान्त जैन के सम्पर्क में आया। उनकी बौद्धिकता और तार्किक विचार-सरणि से मैं बहुत प्रभावित हुआ था। परन्तु बीच में मेरा स्थानान्तरण होने से संपर्क घनिष्ठ नहीं हो सका। अकस्मात् वर्ष १९७१ में मैं और डॉ. जैन के कनिष्ठ भ्राता स्व. रमा कान्त जैन एक ही विभाग में आ गये। तब से हम लोगों का साथ-साथ चाय पीने का क्रम निर्बाध गति से चलता रहा था जो वर्ष १९९४ तक रहा। इन तेईस वर्षों में हमारी मित्रता प्रगाढ़ होती गई। जैन बन्धुओं के घर कई कार्यक्रमों में, जिनमें जन्मदिन के समारोह भी हैं, मैं जाता रहा। इन कार्यक्रमों की विशेषता यह थी कि उनका रूप मुख्यतया बौद्धिक हुआ करता था। डॉ. ज्योति प्रसाद जैन (बाबू जी) की उपस्थिति उन कार्यक्रमों को विशेष ऊँचाई प्रदान करती थी। कई बार बाबू जी से सत्संग का भी लाभ मुझे प्राप्त हुआ।

मेरी मातृभाषा मराठी है। एक दिन मराठी में लिखित एक पुस्तक के बारे में बाबू जी ने चर्चा की तो मुझे उनके मराठी के ज्ञान पर बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने बताया कि जैनागम के संबंध में मराठी में भी समृद्ध साहित्य है। उनके साथ जैन दर्शन और इतिहास पर चर्चाओं में आनन्द तो आता ही था, हर बार कुछ-न-कुछ नई जानकारियां मिल जाती थीं। इस प्रकार उनका सत्संग सदैव ज्ञान वृद्धि में सहायक होता था। ज्ञानपिपासा बढ़ती जाती थी। चर्चाओं में मैं भी भाग लेता था, परन्तु प्राप्त जानकारी को अन्दर ही अन्दर रखना पड़ता था क्योंकि कुछ लिखने में डर लगता था।

एक बार चर्चाओं में बाबू जी ने पूछ लिया कि मैं कुछ लिखता हूं या नहीं। मेरे नकारने पर उन्हें आश्चर्य हुआ। मैंने जब यह बताया कि मुझे भय लगता है कि कुछ गलत न लिख जाऊं तो उन्होंने कहा कि यह भय व्यर्थ है; जब तक लिखोगे नहीं, कैसे पता चलेगा कि गलत लिखते हो या सही। बाबू जी ने यह भी कहा कि यदि लिखोगे नहीं ज्ञान मात्र "जीर्णमङ्गे सुभाषितम्" होकर रह जायेगा और उसका लाभ न तुम्हें कुछ होगा और न वह अन्य किसी के कुछ काम आ सकेगा। इसी बीच जैन धर्म के संबंध में एक संगोष्ठी होनी थी जिसमें मराठी भाषा और जैन साहित्य पर

महानिबन्ध लिखने का उन्होंने आदेश दिया। उनके मार्गदर्शन और आशीर्वाद से मैंने वह निबन्ध लिखा, जिसकी काफी सराहना हुई। बाबू जी की प्रेरणा से इस प्रकार मेरी लेखन में प्रवृत्ति हुई और मैं लिखने लगा।

यदि बाबू जी मुझे प्रेरित न करते तो कदाचित मैं कभी भी कुछ नहीं लिख पाता। उनकी जन्मशताब्दी के अवसर पर उनका पुण्यस्मरण उनके प्रेरणादायी व्यक्तित्व की याद दिलाता है। उन्हें इस अवसर पर कोटिशः नमन !

ई-५१, महानगर एक्सटेंशन, लखनऊ-२२६००६

(श्री गोरे उत्तर प्रदेश शासन में संयुक्त मुख्य निर्वाचन अधिकारी के पद से १९९४ में सेवा-निवृत्त हुये। उसके बाद उन्होंने अपने समय का उपयोग साहित्य-सृजन में लगाया। हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत में भी ललित रचनायें कीं यथा - व्यवहारसूक्ति, श्रीकलिगीता और अनिरुद्धायन (महाकाव्य)। उनके ग्रन्थों का परिचय शोधादर्श में प्रकाशित होता रहा है। -सम्पादक)

शताब्दी जन्म दिवस पर श्रद्धांजलि

- साहित्य-भूषण डॉ. परमानन्द जड़िया

जैन धर्म पर हो नहीं, मिथ्या वाद विवाद।
करते रहे प्रयास यह, डॉक्टर ज्योति प्रसाद।।
महावीर-सन्देश क्या, क्या कहता इतिहास।
इसके अनुसंधान हित, ली जीवन भर श्वास।।
विद्या विनय विवेक से, था जीवन भरपूर।
'जड़िया परमानन्द' वे रहे कलम के शूर।।
परम लक्ष्य उनका रहा एक मात्र स्वाध्याय
चरणों में झुकता रहा, उनके जन-समुदाय।।
जन्म-दिवस पर आज भी उनको नमन प्रणाम।
जहां कहीं हों अमर वे, पायें चिर विश्राम।।

वरिष्ठ साहित्यकार
जड़िया निवास, १८६/५१, खत्री टोला, मशकगंज, लखनऊ-१८

जन्म दिवस पर श्रद्धांजलि

- श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास'

आज ज्योति प्रसाद तुझ को याद हम सब कर रहे हैं।
कार्य तेरे स्मरण कर श्रद्धा से मन को भर रहे हैं।।
जिन्दगी का सफर तो हर मनुज को करना पड़ा है।
जन्म ले कर मृत्यु तक सबको यहां चलना पड़ा है।।

आत्मा है अमर किन्तु तन तो उससे छूट जाता।
सूत्र जो सम्पर्क का वह उस के कारण टूट जाता।।
न कोई विकल्प अनादि काल से यह ही कहानी।
पुरुष किन्तु तुम से मग में छोड़ जाते कुछ निशानी।।

जिस से श्रद्धा पात्र बन जाते जगत में वे सदा हैं।
मार्ग दर्शक रूप में विख्यात होते सर्वदा हैं।।
भगवान श्री महावीर ने जो ज्ञान जगती को दिया था।
ज्योति! तुमने निज हृदय उस से प्रकाशित कर लिया था।।

साहित्य सेवा में जुटे फिर ज्ञान का दीपक जलाया।
तत्व चिन्तन कर मनुज को धर्म का पथ भी दिखाया।।
इतिहास-मनीषी जगत में आप फिर माने गये थे।
"दास" विद्यावारिधि के रूप में जाने गये थे।।

हे ज्योति! चारु कान्त तव सुत शशि रमा सुन्दर द्वयं।
भक्ति रत निज जनक की शुभ कार्य कर गरिमा मयं।।
"दास" वाणी भाघ भी उनके सुखद् अभिराम हैं।
शत् शत् अभिनन्दन उन्हें बन गये वे कीर्तिधाम हैं।।

१२, सी-डी, आदर्श नगर, आलमबाग, लखनऊ-२२६००५

(६१-वर्षीय श्री 'दास' अस्वस्थता के कारण स्मरण-गोष्ठी में सम्मिलित नहीं हो सके थे। जैन धर्म-दर्शन के वह मर्मज्ञ विद्वान और कवि हैं। डॉ. साहब के प्रति उनकी विशेष श्रद्धा है।
-सम्पादक)

पुण्यतिथि पर काव्यांजलि

– डॉ. महावीर प्रसाद जैन 'प्रशांत'

अखिल प्रकृति स्तब्ध आज क्यों आहत मन है,
अंतरिक्ष भी मौन आज क्यों चिंतित मन है,
सारा जग क्यों उदासीन सा विकल विवश है,
डॉक्टर ज्योति प्रसाद जैन का पुण्य दिवस है।

ग्यारह जून अठासी का यह वही दिवस था,
नश्वर देह छोड़ने को तव प्राण विवश था,
तोड़ चला वह सारे बंधन सारा मेला,
सूक्ष्म देहधारी चेतन उड़ चला अकेला।

सबके मन में पर अब भी रहते तुम प्यारे,
देह छोड़ कर भी तुम हम से हुए न न्यारे,
तेरा सुयश आज छाया है सबके मन में,
सबके तुम आराध्य बन गये हो जीवन में।

बीस हजार लेख लिख डाले सत्य प्रकाशक,
और पचासों ग्रन्थ रच दिए ज्ञान प्रसारक,
ऐसा ज्ञान न मिल पाता जिसकी गहराई,
'विद्यावारिधि' की उपाधि थी तुमने पायी।

धार्मिक ग्रन्थों में नवजीवन प्राण भर दिया,
नयी भावनाएं दी नव इतिहास भर दिया,
'इतिहास-मनीषी' कह जनता ने प्यार दिया था,
अपना निश्छल प्रेम दिया सत्कार दिया था।

ज्ञानी थे पर तुमको अभिमान नहीं था,
अपने उच्चासन का कुछ भी भान नहीं था।
मंदिर में जब शास्त्रों का प्रवचन करते थे,
कठिन जटिल वार्ता में भी तुम रस भरते थे।

जीवन में अभिशप्त प्राण जब अकुलाता था,
तव छाया में आकर शांति सदा पाता था।

(शेष अगले पृष्ठ पर)

My Religious Guru

- Sri Dharm Vir
Retd. Engineer-in-Chief, U.P.P.W.D.
Chairman, Aman Charitable Trust

Dr. Jyoti Prasad Ji was an authority on Jain Scriptures and Ancient History of India pertaining to Jains. He commanded respect, not only in Jain community, but among scholars of History and Philosophy also, all over the country. Inspite of this, pride had not touched him - he was rather humble and very polite - a glorious example of simple living and high thinking.

I had the good fortune of learning scriptures from him. In 1970-71, our offices were in the same building. Dr. Sahib was working in State Gazetteers and I was in Technical Audit Cell; his office was on ground floor, while mine was on first floor. On my request, Dr. Sahib agreed to come to my office - we had tea and snacks together - thereafter, Dr. Sahib taught me for half an hour - first Bhaktamar and then Tattvarth Sutra. After my transfer, Dr. Sahib offered me to come to his residence and further study scriptures. He was so keen to share his knowlege with others that not only he taught scriptures, but offered tea and snacks also.

I will always remember him as my religious Guru with great respect.

A-377, Indira Nagar, Lucknow-226016

(पूर्व पृष्ठ से डॉ. प्रशांत की कविता का शेष)

भूल नहीं पाता है मन व्यवहार तुम्हारा,
ममता प्रेम भरा मन का वह प्यार तुम्हारा।
भरे हृदय से यह 'प्रशांत' करता वन्दन है
आत्मिक संत महान विश्व के अभिनंदन है।

डी- ११/६, राजेन्द्रनगर, लखनऊ-२२६००४

(८७-वर्षीय डॉ. 'प्रशांत' सम्प्रति पक्षाघात से पीड़ित हैं। यह काव्यांजलि उन्होंने गतवर्ष ११ जून को पुण्यतिथि पर समर्पित की थी। - सम्पादक)

In this wide world
We meet people in large number,
Most are forgotten
Leaving a few to remember.

- Sri Ratan Chandra Gupta

I do not know how to describe my feelings about the person for whom I had deepest regard and whose knowledge and wisdom left an indelible impression on me. I am not, and have not been, a student of history or literature, but am aware that Hon'ble Late Dr Jyoti Prasad Jain was a reputed historian, an authority on Jain history and religion. Research scholars working on various aspects of Jain history used to come to respected Babuji for guidance which he used to give gladly. His life was a lesson for others. Having worked in various professions and fields, he was endowed with rich experience of life. He had scholarly bent from his early childhood. For me he was like a father figure who treated me like his son.

I have great regard for his worthy son Dr. Shashi Kant Jain who was my colleague and also his younger brother Mr. Rama Kant Jain. Scholarly trait and amiable nature of Dr. Shashi Kant Jain greatly impressed me. He used to organize meetings and symposia on various subjects at his home which I used to attend. (One such meeting was organised at my room, where a scholarly journalist gave a talk on the history and contemporary situation in Middle East). Respected Babuji was always there to guide and give his views. His vast knowledge on a variety of subjects was outstanding. On each such occasion I felt deeper and deeper regard for the persona of respected Babuji. He was so very simple and showered his affection on all of us who used to assemble for such meetings. I felt, and still feel, like a member of the Jain family.

C-80, Sec. B, Aliganj, Lucknow-226024

[Mr. Gupta retired as Joint Secretary (Law), U.P. Government, in 1994. Since 2001 he has been organising the annual conference of the Chief Justices of the World. - Ed.]

को

सन्तति के प्रणाम

अनुज	श्री अजित प्रसाद जैन
पुत्र	श्री रमा कान्त जैन
पुत्रवधु	सौ. मंजरी जैन
भागिनेय	श्री हुकम चंद जैन
भनज-दामाद	श्री सुरेश चंद जैन
पौत्र	श्री सन्दीप कान्त जैन
	श्री राजीव कान्त जैन
पौत्री	सौ. इन्दु कान्त जैन
	सौ. अलका अग्रवाल
	सौ. शेफाली मित्तल
पौत्रवधु	सौ. सीमा 'सौम्या' जैन
	सौ. निधि जैन
प्रपौत्री	आयु. पलक जैन
पुत्र	डॉ. शशि कान्त

भाई साहब

पूज्य डॉक्टर साहब मेरे अग्रज और पितृतुल्य ज्येष्ठ थे। उनका मेरा साथ ७० वर्ष तक रहा जिसमें से ५०-५५ वर्ष तक हम लोग एक साथ ही रहे। मैं उनकी साधना का प्रत्यक्षदर्शी रहा हूं कि किस प्रकार विषम परिस्थितियों में भी केवल स्वान्तः सुखाय वह सतत् अपनी साहित्य-साधना में लगे रहे और किस प्रकार उन्होंने सफलता के उच्च शिखर प्राप्त किये। प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद कितनी कठोर साधना के पश्चात समाज ने उन्हें "विद्यावारिधि" व 'इतिहास-मनीषी" की उपाधियों से विभूषित किया, और उनकी इतनी यशोकीर्ति फैली।

भारतीय इतिहास के जैन स्रोत, जो उपेक्षित थे, की ओर उन्होंने विद्वानों का ध्यान आकर्षित किया और विद्वानों ने, इतिहासकारों ने, एक स्वर से उन स्रोतों की महत्ता को स्वीकार किया। इतिहास के बहुत से प्रश्न उनसे हल हुये। भाई साहब वस्तुतः **विद्यावारिधि** थे। कोई ऐसी समस्या नहीं थी जिस पर उनके सुलझे हुये विचार तुरन्त उपलब्ध न हो जाते हों।

जैन इतिहास, जैन संस्कृति और जैन दर्शन के ऊपर तो वह अथार्टी ही समझे जाते थे। किसी भी विश्वविद्यालय महाविद्यालय से सम्बद्ध न होते हुये भी अनेक शोध विद्यार्थियों ने उनके मार्गदर्शन में अपने शोध-प्रबन्ध पूरे किये और डिग्री प्राप्त की। लखनऊ विश्वविद्यालय के तो अनेक प्राध्यापक, यदि शोध हेतु कोई जैन विषय होता था, तो यही सलाह देते थे कि 'आप डॉक्टर साहब से जाकर मिलो, वही आपका विषय ठीक करेंगे, वही आपको सही सलाह देंगे।'

उनका मार्गदर्शन अब हमको कहां उपलब्ध होगा? अब केवल उनकी स्मृति शेष है, उनके कार्य शेष हैं। वह एक ऐसी यशोकीर्ति अर्जित कर गये हैं जिससे यद्यपि आज वह हमारे बीच सशरीर नहीं हैं परन्तु बहुत समय तक, युगों तक, अपनी कृतियों के द्वारा वह हमारे बीच में रहेंगे।

- अजित प्रसाद जैन

(डॉ. साहब के अनुज श्री अजित प्रसाद जैन, जो स्वयं अब हमारे बीच नहीं हैं, ने ये उद्‌गार डॉ. साहब के महाप्रयाण पर दिनांक २५ जून, १९८८, को आयोजित श्रद्धांजलि सभा में व्यक्त किये थे। - सम्पादक)

पिता श्री को अन्तिम नमन

जन्म दिन है आज आपका
नमन मैं हूं, कर रहा।
यादों में बसा वात्सल्य आपका
प्रतिपल हूं मैं गुन रहा।।

जन्मदाता हैं आप मेरे
शिक्षक भी आप ही।
जो कुछ हूं मैं
इसके विधाता आप ही।।

आपसे बहुत कुछ पाया
आपने बहुत कुछ सिखाया।
कैसे चुकाऊं पितृऋण को
अभी तक नहीं समझ पाया।।

आप थे विद्या के वारिधि
सरल-सादा जीवन था जिया।
संतोष का पीयूष प्याला भी
जी भरकर था आपने पिया।।

अनन्त-ज्योति ज्ञान की
आप सदा रहे जगमगाते।
इतिहास की नई लीक
आप हमें रहे समझाते।।

लेखनी से अपनी आपने
भर दिया भरती-भण्डार को।
महावीर की वाणी को
जन-जन तक रहे पहुंचाते।।

वन्दन शत-शत बार आपका
नमन करता बार-बार हूं मैं
दीजिये आशीष आप मुझको
आपका कुछ अनुसरण कर पाऊं मैं।।

- रमा कान्त जैन

(दिनांक ६ फरवरी २००६ को अपने श्रद्धेय पिता जी को प्रस्तुत विनयांजलि - अन्तिम क्योंकि २६ मई २००६ को श्री रमा कान्त जी स्वयं स्मृतिशेष हो गये। -सम्पादक)

स्मृति-पटल पर

चि. बेटे अंशु जैन 'अमर' ने कहा कि इस बार बाबा जी की पुनीत स्मृति में **शोधादर्श** का विशेषांक निकल रहा है, मैं भी कुछ लिखूँ।

इस परिवार में मैं २७ नवम्बर १९५३ को डॉक्टर साहब के ज्येष्ठ पुत्र आदरणीय शशि कान्त जी की पत्नी के रूप में आई। डॉ. साहब को हम बाबू जी कहते थे। पूज्य बाबू जी मेरे श्वसुर ही नहीं, शिक्षक और मार्गदर्शक भी थे। पूज्य बाबू जी बहुत ही सरल प्रकृति के व्यक्ति थे। समय के बहुत पाबन्द थे। अधिकांश समय वह अपना लिखने-पढ़ने में ही व्यतीत करते थे। सेवा-निवृत्त होने के बाद उनके पास बहुत से शोध-छात्र पढ़ने के लिये आते थे। उनको पढ़ाकर वह बहुत खुश होते थे। उनकी यही इच्छा रहती थी कि ज्यादा से ज्यादा लोग ज्ञानार्जन के लिए आयें। मैने भी २० साल तक अध्यापन कार्य किया। जब कभी कोई भी शंका उत्पन्न होती, वह शीघ्र ही सरल शब्दों में समाधान कर देते थे।

वह बहुत ही अनुशासन प्रिय थे। शाम के समय बच्चों के साथ बैठते थे। इतिहास के ज्ञाता थे। कहानी के रूप में सभी बातें बताते थे। इससे बच्चे बहुत जल्दी समझ जाते थे। वह रूढ़िवादी बिल्कुल नहीं थे। बच्चों से उनका कहना था कि इच्छा के विरुद्ध कुछ मत करो। उनका ही आशीर्वाद है कि उनकी फुलवारी के सभी फूल शिक्षित हैं।

अंत में यही प्रार्थना मैं भगवान से करती हूँ कि उनकी परिवार के सभी बच्चे दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की करें। स्वस्थ रहें।

वह तो चले गये, किन्तु उनकी बातें प्रत्येक समय उनकी याद दिलाती रहती हैं।

'जाना उसी का सांर्थक है, जो जाकर के भी अमर हो जाता है।' बाबू जी भी उनमें से एक थे, जो आज भी हमारे बीच जीवित हैं।

विनम्र श्रद्धांजलि निवेदित

- मंजरी जैन

(सौ. मंजरी जैन डॉक्टर साहब की ज्येष्ठ पुत्रवधु व डा. शशि कान्त जैन की पत्नी हैं तथा स्वसंचालित विद्यालय की प्रधानाध्यापिका रहीं हैं। -सम्पादक)

स्मृतियों में मामा जी

सरस्वती-पुत्र स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन पी-एच.डी., साहित्य रत्न, इतिहास-मनीषी का जन्म ६ फरवरी १९१२ ई. को मेरठ में श्री पारस दास जैन, आयकर विभाग, के गोयल गोत्रिय अग्रवाल परिवार में हुआ था। आप तीन भाई-बहन थे। सबसे बड़े आप, मझली बहन मैनावती और छोटे भाई अजित प्रसाद जैन थे। तीनों में अगाध स्नेह था।

डॉ. साहब की प्रारम्भिक शिक्षा मेरठ में हुई। शुरू से ही धार्मिक रुचि थी। सन् १९३०-३१ में साथी युवकों के साथ मिलकर 'जैन कुमार सभा' नाम से संगठन बनाया जिसका उद्देश्य बालकों में धार्मिक शिक्षा तथा तत्त्व चर्चा का प्रचार-प्रसार करना था। इसी संस्था के अन्तर्गत श्री १००८ शांतिनाथ पंचायती दिगम्बर जैन मंदिर जी मौ. तीरगरान में प्रथम तल पर पुस्तकालय-वाचनालय की स्थापना की थी जिसका समाज ने खूब लाभ लिया। उस समय डॉ. साहब इन्टर में थे। पश्चात् उच्च शिक्षा अध्ययन हेतु आगरा चले गये। वहां पर भी जैन समाज की धार्मिक गतिविधियों में भाग लेना शुरू कर दिया था। वहां महावीर जयन्ती पर रथयात्रा व कार्यक्रम नहीं होते थे। आपके प्रयास से प्रथम बार रथयात्रा निकाली गयी, यद्यपि कुछ लोगों ने विरोध भी किया। परन्तु तब से अब तक प्रतिवर्ष रथ यात्रा निकलती आ रही है।

आगरा से एम. ए., एल-एल. बी. करके वापस मेरठ आ गये थे। यहां पर आकर कांच की शीशी बनाने की फैक्ट्री लगाई। यहां यह व्यवसाय कामयाब नहीं हुआ। इसके बाद आयकर में वकालत शुरू की, कुछ समय पश्चात वह व्यवसाय भी रास नहीं आया, छल-कपट-झूठ बोलना इनके स्वभाव में नहीं था क्योंकि धार्मिक रुचिवन्त थे। अन्य छोटे मोटे व्यवसाय किये परन्तु कामयाबी हाथ नहीं आई। प्रायः देखने में आता है कि सरस्वती और लक्ष्मी की कृपा एक साथ बड़े भाग्यशाली को प्राप्त होती है, क्योंकि सरस्वती की सेवा में लगते हैं तो लक्ष्मी रूठ जाती है और अगर लक्ष्मी के भक्त हो जाते हैं तो सरस्वती की सेवा से वंचित हो जाते हैं। मामा जी के साथ भी ऐसा ही हुआ और विभिन्न व्यवसायों में कार्यसिद्धि नहीं होने पर भी उन्होंने अपना अध्ययन-लेखन का अध्यवसाय जारी रखा।

१९५५ में आप लखनऊ चले गये। परिवार वहीं पहले से रह रहा था। समस्त भारत के जैन समाज में आपका बड़ा सम्मान था। परम पू. सहजानन्द जी महाराज जब भी लखनऊ जाते थे तब डॉ. साहब के साथ अवश्य समय बिताते थे।

लखनऊ में अपने आवास काल में १९७६ में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र की स्थापना की और चारबाग में मुन्नेलाल कागजी की धर्मशाला में पुस्तकालय-वाचनालय की स्थापना की। ऊपर जैन मंदिर है। समाज को इस पुस्तकालय से ज्ञानार्जन हो रहा है। शोधार्थियों के लिये भी व्यवस्था है। इस कार्य में अनुज अजित प्रसाद जी का तथा पुत्रों का व समाज के गणमान्य व्यक्तियों का भरपूर सहयोग मिलता रहा। आपका जैन धर्म के प्राचीन इतिहास का गहन अध्ययन था। उनके समय में उन जैसा विद्वान उनके विषय का अन्य कोई नहीं था। डॉ. साहब ने विपुल साहित्य की रचना की है जिससे आज समाज लाभान्वित हो रहा है। उनकी अनुपस्थिति में उनको जीवन्त बनाये हुए उनके द्वारा रचित साहित्य है जिसकी सूची उनकी लायब्रेरी व उनके निवास चारबाग लखनऊ से प्राप्त की जा सकती है।

परम पूज्य आचार्य विद्यानन्द जी महाराज ने अपने मेरठ प्रवास के समय विशाल जनसभा के मध्य डॉ. साहब को **'विद्यावारिधि'** की उपाधि से अलंकृत किया था। आचार्य श्री डॉ. ज्योति प्रसाद जी का बहुत सम्मान करते थे। उनका अपने समय के सभी सन्त व विद्वानों में बड़ा आदर था।

अन्त में मैं श्रद्धेय मामा जी ज्योति प्रसाद जी की जन्म शताब्दी के अवसर पर कोटि-कोटि नमन-वंदन करता हूँ। मेरा बालपन उनके ही चरणों में व्यतीत हुआ है। मैं आज पुरानी स्मृतियों को मस्तिष्क पटल पर पुनः ताजा कर रहा हूँ।

- हुकम चन्द जैन
७६, ठठेरवाड़ा, मेरठ शहर

(श्री हुकम चन्द डॉक्टर साहब की बहन मैनावती के ज्येष्ठ सुपुत्र हैं। मेरठ की जैन समाज की प्रबन्धकारिणी में विशिष्ट सदस्य रहे हैं, मौ. तीरगरान के मन्दिर, पुस्तकालय और पाठशाला के प्रबन्धन और ठठेरवाड़ा के जैन औषधालय की व्यवस्था से जुड़े रहे हैं।
- सम्पादक)

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन (कुछ स्मृतियाँ तथा श्रद्धा सुमन)

आदरणीय डॉ. साहब से मेरा परिचय प्रथम बार दिनांक १३.१२.१९४६ को मेरठ में हुआ था। उन दिनों वहां निषेधाज्ञा चल रही थी। वह दिन मेरे जीवन का अविस्मरणीय दिन था और साथ-साथ बहुत ही महत्वपूर्ण दिन। जब मेरा उस महान विभूति से साक्षात्कार हुआ तो मेरा मन उत्साह और प्रसन्नता से खिल उठा, क्योंकि उस दिन मुझे उनका आशीर्वाद प्राप्त हुआ। उसके उपरान्त मेरी मुलाकात उनसे लखनऊ में हुई। उनका विद्वत्ता से चमकता हुआ चेहरा देखकर मैं बहुत प्रभावित होता था। उनका व्यक्तित्व बहुत ही प्रभावशाली था। उनकी प्रभाव पूर्ण वाणी से मैं अभिभूत हो उठता था।

सन् १९५६ में आगरा विश्वविद्यालय से उनके शोध प्रबन्ध **The Jaina Sources of the History of Ancient India** पर उन्हें पी-एच.डी. की उपाधि प्रदान की गई। आपने शिक्षण, औषधि व्यापार के साथ साथ कई सामाजिक कार्यों को अपनाया। आप गजेटियर विभाग में सम्पादक के रूप में भी रहे। उनका जीवन सदा लेखन और अध्ययन में बीता। हर समय वे पुस्तकों के पठन-पाठन में लीन रहते थे।

डॉ. साहब इतिहास, जैन धर्म एवं पुरातत्व के प्रकाण्ड विद्वान थे। उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखीं जो आज भी पूरे भारत में बड़ी रुचि के साथ पढ़ी जाती हैं। उनके लेख अनेक पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते थे। वे कई संस्थाओं से जुड़े हुए थे जिन्हें कि गिनाना मुश्किल कार्य है।

डॉ. साहब व उनके छोटे भाई श्री अजित प्रसाद जी जैन के बीच इतना प्रगाढ़ प्रेम था जैसा कि बलदेव और श्री कृष्ण में। उनके उपरान्त उनके दोनों पुत्र श्री शशि कान्त व श्री रमा कान्त, इन दोनों भाइयों में भी श्री राम और लक्ष्मण की तरह अथाह प्रेम रहा। ये दोनों भी विद्वान एवं लेखन में बहुत प्रभावशाली हैं। श्री रमा कान्त जी के लेख तो रुचिकर होते ही थे लेकिन उनकी हास्य-रस की व्यंग्यात्मक कवितायें भी काफी मनोरंजक और गुदगुदाने वाली होती थीं।

इनकी अगली पीढ़ी के बच्चे भी बड़े विद्वान हैं। मां सरस्वती की इस परिवार पर विशेष कृपा दृष्टि है। डॉक्टर साहब का परिवार इसी तरह फलता-फूलता रहे और समाज सेवा करता रहे, हम यही कामना करते हैं। इस प्रकार डॉक्टर साहब की अधूरी इच्छा को उनका परिवार पूर्ण करे और समाज को उन्हीं की तरह ज्ञान का प्रकाश बांटे। जैसा उनका नाम था उसी प्रकार का उन्होंने कार्य भी किया। उनके नाम का अर्थ है प्रकाश अर्थात् उजाला, इसलिए हम कामना करते हैं कि उनकी आने वाली पीढ़ियां इस ज्योति को प्रकाशित करके रखें और समाज का मार्गदर्शन करें।

मेरा उन्हें शत-शत नमन !

- सुरेश चन्द जैन

नोकेन, दी माल, मसूरी

(श्री सुरेशचन्द जी मसूरी के वरिष्ठतम नागरिक के रूप में मसूरी की नगरपालिका द्वारा २६-१-२०१० को सम्मानित किये जा चुके हैं। वहां के जैन मंदिर के प्रबन्धन से जुड़े हैं। डॉ. साहब की भागिनेयी सौ. कनक के पति हैं और तदनुसार उनके ज्येष्ठतम दामाद हैं।

-सम्पादक)

ज्योतिपुञ्ज डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

बीसवी सदी के प्रारंभिक वर्षों में भारतवर्ष में सामाजिक एवं धार्मिक पुनर्जागरण का जो दौर आया, उससे जैन समाज भी अछूता नहीं रहा। उस दौर में जैन धर्म परम्परा संबंधी अध्ययन एवं शोधन-संवर्धन आदि का श्रेय जिन विद्वानों को प्रमुख रूप से है उनमें हरमन जैकोबी, ब्र. सीतल प्रसाद, आचार्य जुगल किशोर मुख्तार, डॉ.ए.एन. उपाध्ये, डॉ. हीरालाल जैन, बैरिस्टर चम्पतराय जैन, बा. अजित प्रसाद जैन, पं. नाथूराम प्रेमी, पं. फूलचन्द्र सिद्धान्ताचार्य, पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री, पं. जगन्मोहनलाल शास्त्री, श्री अगरचन्द नाहटा, पं. बेचरलाल दोषी, श्री कामताप्रसाद जैन, श्री जिनेन्द्र वर्णी व डॉ. ज्योति प्रसाद जैन प्रभृति विद्वानों का नाम आदर के साथ लिया जाता है।

डॉ. ज्योति प्रसाद जी स्वभाव से ही साहित्य रसिक थे और विविध विषयों के अध्ययन में रुचि रखते थे लेकिन उनका प्रिय विषय "भारतीय इतिहास की शोध- खोज" रहा। उन्हें अपने अध्ययन के दौरान यह महसूस हुआ कि इतिहास-लेखन में ज्यादातर जैन धर्म व संस्कृति से जुड़े स्रोतों को उचित स्थान नहीं दिया गया है या यू कहें कि उनकी अनदेखी की गई है, तो उन्होंने जैन विद्या से संबंधित शोध-खोज में अपने को समर्पित करके इतिहास का समग्र रूप सामने लाने का निश्चय किया और अपनी मेधा, गहन परिश्रम, शोध-खोज एवं साधना के बल पर इस कार्य में काफी कुछ सफल भी रहे।

इनकी कृतियों यथा - **भारतीय इतिहास : एक दृष्टि, ऐतिहासिक जैन पुरुष और महिलाएँ, The Jaina Sources of the History of Ancient India** तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित उनके शोध-लेखों ने विश्व को जैनत्व के गौरवशाली अतीत के अछूते पहलुओं से परिचित करवाया और जैन धर्म की प्रतिष्ठा को बढ़ाया।

वह शोध-खोज की प्रक्रिया के अनवरत रहने को तो जरूरी मानते थे, लेकिन इस बात के पक्षधर नहीं थे कि परम्परागत आस्थाओं पर कुठाराघात हो। इस संदर्भ में मुझे उत्तर प्रदेश के देवरिया जिला में स्थित पावानगर (फाजिलनगर) को भगवान महावीर का निर्वाण स्थान के रूप में मान्यता दिए जाने सबंधी एक प्रसंग याद आ रहा है। इस संबंध में चर्चा होने पर उन्होंने कहा था कि हम नए तीर्थ बनाकर क्या पाऐंगे। पुराने तीर्थ (बिहार स्थित पावापुरी) से तो भ्रम की स्थिति उत्पन्न होने के कारण जन-आस्था कम होगी और नई प्रचारित निर्वाण स्थली से भी संशय की स्थिति के कारण जन-आस्था नहीं जुड़ पाएगी। इस प्रकार अनावश्यक भ्रम की स्थिति का निर्माण होगा जो कि समाज के हित में नहीं है। कम से कम तीर्थंकरों से संबंधित सिद्धक्षेत्रों को विवादित होने से बचाना चाहिए।

उनकी यह भी सोच थी कि नए तीर्थक्षेत्रों की स्थापना के बजाय तीर्थंकरों से सीधे जुड़े पुराने सिद्धक्षेत्रों के विकास पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए। हमारे शुद्ध वीतरागी धर्म में किसी भी प्रकार के स्खलन के विरुद्ध उन्होंने सदैव अपनी आवाज बुलंद की लेकिन एक मर्यादित दायरे में। यह उनकी विशेषता ही थी कि लगभग साठ वर्ष के सार्वजनिक जीवन में सतत लेखन/सम्पादन आदि द्वारा समाज से जुड़े रहने के बावजूद वह कभी विवादित नहीं हुए। लोगों ने सदैव उनसे मिलकर अपना समाधान प्राप्त किया। कई विद्वानों/शोधार्थियों ने उनसे मार्गदर्शन प्राप्त करके पी-एच.डी./ डी.लिट. आदि की डिग्रियां प्राप्त कीं, लेकिन उन्हें इस सब का कोई अभिमान नहीं था तथा वह अन्त तक विद्या के व्यसनी एवं जिज्ञासु ही बने रहे और स्वयं में संवर्धन/परिवर्धन करते रहे। उनकी कुछ ठोस रचनाएं अभी अप्रकाशित हैं जिन्हें यदि कोई प्रकाशक मिल सके तो कई भ्रान्तियों का निरसन करने में वे प्रकाश स्तम्भ का कार्य करेंगी। उदहारणार्थः- एक ही नाम के अथवा मिलते-जुलते नाम के जैन महानुभावों से संबंधित उनका **ऐतिहासिक व्यक्ति कोश** (जिसका प्रथम खण्ड प्रकाशित भी हो चुका है) जैन इतिहास विषयक कई गुत्थियों को सुलझाने में एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ सिद्ध हो सकता है।

वह अपने समय के शीर्षस्थ विद्वान थे। अपने देश/समाज/धर्म के प्रति तो वह पूर्ण आस्थावान थे ही, साथ ही उनका एक रूप जो बहुत कम लोगों को पता है वह यह था कि वह अपनी धार्मिक/पारम्परिक संस्कृति को अक्षुण्ण रखने के हामी थे। चाहे वह त्यौहारों को पारम्परिक रूप से मनाए जाने की बात हो या जन्म-विवाह-मृत्यु आदि पर निभाए जाने वाले पारिवारिक रीति-रिवाज हों वह इन सबके पारम्परिक रूप को यथासंभव अक्षुण्ण रखना चाहते थे, स्वयं पूर्ण उत्साह के साथ एवं दूसरे पारिवारिक सदस्यों का मार्गदर्शन करके।

डॉ. ज्योति प्रसाद जी की सन्तति के रूप में मैं स्वयं को गौरवान्वित महसूस करता हूँ। उनकी जन्म-शताब्दी के इस अवसर पर मैं अपने श्रद्धा-सुमन उनके प्रति अर्पित करता हूँ। पूर्ण विश्वास है कि उनकी आत्मा इस समय जहाँ भी होगी, दूसरों के उपकार में रत रहते हुए आत्म-कल्याण के मार्ग पर प्रशस्त होगी। डॉक्टर साहब जैसे विद्वानों की परम्परा समाज में बनी रहे और समाज उनका उचित समादर करे एवं उनके कृतित्व को याद रखे, यही एक सभ्य, उन्नतिशील समाज का गुण है।

श्रद्धावनत

- सन्दीप कान्त जैन

(श्री सन्दीप कान्त, डॉ. साहब के सुपौत्र और स्मृतिशेष रमा कान्त जी के ज्येष्ठ सुपुत्र हैं। सम्प्रति नेशनल इन्श्यौरन्स कार्पोरेशन में मैनेजर के पद पर प्रतिष्ठित हैं। जैन धर्म और साहित्य के प्रति अनुराग है। -सम्पादक)

हमारे बाबा जी जैसा मैंने देखा

पूज्य बाबा जी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्मशती के पुनीत अवसर पर **शोधादर्श** के इस अंक को उनके स्मृति अंक के रूप में समर्पित किया जा रहा है, जानकर प्रसन्नता हुई। बाबा जी इस पत्रिका के संस्थापक/सम्पादक थे।

हमारे बाबा जी मध्यम कद-काठी के हृष्ट-पुष्ट इंसान थे। उनकी दिनचर्या संयमित थी। प्रातः ५ बजे उठकर दैनिक कर्म से निवृत्त हो नियमित व्यायाम करते थे। स्नान कर, धोती कुर्ता पहन, ठीक ८ बजे मंदिर जाते थे। चारबाग मंदिर में ही स्थित तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र पुस्तकालय में लगभग एक घण्टा बैठते थे, उसका प्रबन्धन देखते थे। इस पुस्तकालय के वे संस्थापक भी थे। उनके अथक प्रयास से पुस्तकालय में जैन धर्म से सम्बन्धित लगभग सभी पुस्तकें व पत्र-पत्रिकाएं उपलब्ध थीं, अनेक जिज्ञासु एवं शोधार्थी पुस्तकालय आते थे, स्वाध्याय करते थे और बाबा जी से चर्चा कर अपनी शंकाओं का समाधान करते थे।

बाबा जी को लिखने-पढ़ने का व्यसन था। उन्होंने इतिहास एवं जैन धर्म पर अनेक पुस्तकें लिखी और अनेकों का सम्पादन किया। जैन धर्म और इतिहास में वे अथारिटी माने जाते थे। मुझे याद है, लखनऊ संग्रहालय के अधिकारी प्रायः उनके पास प्राचीन मूर्तियों की पहचान के लिए आते थे।

ड्राइंग रूम में एक तख्त और उसके सामने एक मेज हुआ करती थी। बाबा जी तख्त पर बैठकर या लेटकर पढ़ा-लिखा करते थे। मुझे याद है कि उन दिनों देश-विदेश से इतनी पुस्तकें व पत्र-पत्रिकायें आती थीं कि दिन में तीन बार डाकिया घर पर डाक डालने आता था। पत्र-पत्रिकाओं के लिफाफे को बाबा जी वेस्ट नहीं करते थे। कोई भी विचार उनके मन में आता था, या पढ़ते समय उन्हें कुछ उपयोगी लगता तो वे उसे लिफाफे पर अथवा डायरी में लिख लेते थे।

बाबा जी जैन धर्म के प्रकाण्ड विद्वान थे लेकिन वह रूढ़िवादी नहीं थे। उनका कहना था कि प्राचीन परम्पराओं की सामयिकता को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से परखना चाहिए, यदि वह युक्ति संगत हो तो पालन करो।

बाबा जी के मन में अपने पूरे परिवार के लिए एक-सा प्यार था। मुझे याद है उन्होंने अपनी षष्ठी-पूर्ति में सभी बच्चों व बड़ों को एक-एक कोट सिलवाकर दिया था। बच्चों के लिए उनके पास सदा समय रहता था। हम लोग उनसे अंग्रेजी, गणित व संस्कृत पढ़ा करते थे। व्याकरण की बारीकियों पर उनका विशेष जोर रहता था। पढ़ाते समय हमने उन्हें कभी भी गुस्सा होते हुए अथवा झुंझलाते हुये नहीं देखा। उनकी इच्छा रहती थी कि सब बच्चे, पूरा परिवार, सदा ड्राइंग रूम में उनके आस-पास रहे। ड्राइंग रूम में वाल्व तकनीक वाला एक रेडियो हुआ करता था। हम सब लोग रोज रात में ८.४५ का समाचार एवं ९.१५ पर विविध भारती पर प्रसारित हवामहल कार्यक्रम वहीं सुनते थे। सन् १९८२ से एशियाड खेल आयोजन के समय ब्लैक एण्ड व्हाइट टी.वी. खरीदा गया था जो ड्राइंग रूम में ही रखा गया था। बृहस्पतिवार को चित्रहार और रविवार को फिल्म एवं सीरियल सब घर वाले साथ बैठकर देखते थे। 'हम लोग', रामायण, महाभारत, 'मुंगेरीलाल के सपने' आदि अनेक सीरियल हम लोगों ने बाबा जी के साथ उनके तख्त पर बैठ कर देखे हैं।

होली, दीवाली, रक्षाबन्धन, दशहरा, इत्यादि सभी पर्व-त्यौहारों को विधिवत मनाने के वे ऊर्जा-केन्द्र थे। होली पर भांग घुटनी हो, दीवाली पर कण्डील बनाना हो, दीवाली की दुकान (पूजा के लिये) सजानी हो अथवा दशहरे पर कलम-दवात साफ करनी हो उनके नेतृत्व में हम सब बच्चे लगे रहते थे।

बाबा जी का संयमित दिन-चर्या में एवं प्राकृतिक चिकित्सा पर विश्वास था। सर्दी जुकाम में नमक के पानी से गरारे करते थे, दुशान्दा (आयुर्वेदिक काढ़ा) पीते थे। वे डॉक्टर के पास अथवा अस्पताल नहीं जाना चाहते थे। लेकिन अन्त समय में उन्हें एक दिन के लिये अस्पताल में रहना पड़ा और उनके शरीर में चिकित्सा हेतु मूत्र, ग्लुकोस आदि के लिए बाह्य नलियां लगायी गयीं। मुझे आज भी उस अहसास की पीड़ा है।

हमारे बाबा जी का जीवन एवं उपलब्धियां हम सब बच्चों के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। वे एक निष्काम कर्मयोगी थे जिन्होंने अपना सारा जीवन बिना किसी अपेक्षा के देश, समाज और परिवार को समर्पित किया। अंत में चंद पंक्तियां उनको समर्पित कर स्मृतियों को विराम देता हूं -

हटा, व्यर्थ है,
डटा, वह समर्थ है
पथ-निर्माण, प्रदर्शन
जीवन का अर्थ है।

दुनिया की भीड़
कोयले की खान है
जग-मग दिखलाना
हीरे की पहचान है।

घरौंदों का निर्माण
समय का नुकसान है
कुछ ठोस जो करे
वह मनु-सन्तान है।

अग्नि से विनाशे
वह दुष्ट शैतान है
अनल से तम हटाये
वह इन्सान है।

कर्म-पथ पर जो
मील का पाषाण है
आदर्श का अनुमापन
हमारे बाबा जी वह इन्सान है।

- राजीव कान्त जैन

(डॉ. साहब के सुपौत्र और डॉ. शशि कान्त के कनिष्ठ पुत्र श्री राजीव कान्त व्यवसाय से इंजीनियर हैं और प्रवृत्ति से कवि एवं साहित्यकार हैं। उनका एक काव्य संकलन 'हम हिंदी, बोलें हिन्दी' प्रकाशित हो चुका है। भारतीय रेलवे सेवा के सदस्य हैं और सम्प्रति पुणे में रेल विकास निगम लि. में जनरल मैनेजर के पद पर नियुक्त हैं। - सम्पादक)

यादों के झरोखे

न रागं न द्वेषं न मोहं न क्षोभं।
न कोपं न मानं न माया न लोभं।
न योगं न भोगं न ब्याधि न शोकं।
चिदानन्द रूपं नमो वीतरागम्।।

डॉ. साहब द्वारा रचित **वीतराग स्वरूपं** की ये पंक्तियाँ उनके व्यक्तित्व को पूर्णतया चरितार्थ करती हैं। इतिहास-मनीषी विद्यावारिधि डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी की शख्सियत विद्वत् जगत में किसी पहचान की मोहताज नहीं है। इस वर्ष ६ फरवरी को उनकी जन्म-शताब्दी का आयोजन उनके निवास स्थान **'ज्योति निकुंज'** लखनऊ में सम्पन्न हुआ। 'यथा नाम तथा गुण' शायद ही ऐसे विरले मनुष्य इस सृष्टि में होते हैं। डॉ. ज्योति प्रसाद जी ने भी अपने ज्ञान की ज्योति का प्रसाद इस दुनिया में निर्विकार भाव से वितरित किया। हमारे तो वह बाबा जी थे अतः न चाहते हुए भी कुलाभिमान स्वाभाविक रूप से आ ही जाता है। सारा बचपन उनकी छत्र-छाया में गुजरा है, अतः इस पुनीत अवसर पर यादों के झरोखे खुलने लगे हैं।

ड्राइंग रूम के एक बड़े से तख्त पर किताबों से घिरे हुये बाबा जी की तस्वीर आँखों के सामने घूम रही है। बाबा जी समय के बहुत पाबन्द थे। सबेरे साढ़े-चार अथवा पांच बजे तक वह बिस्तर त्याग देते थे, और रात में साढ़े आठ से नौ बजे के बीच सारे कार्य बन्द करके वह विस्तर पर पहुंच जाते थे। इस बीच उनके हर कार्य का समय निश्चित था - चाहे पाठ करना हो, व्यायाम करना हो, मन्दिर जाना हो, खाना-पीना हो, अथवा पढ़ना-लिखना हो, उनका रहन-सहन बहुत ही सादगी भरा था। 'सादा जीवन, उच्च विचारों' से भरा उनका जीवन था।

बाबा जी का जन्म मेरठ में हुआ था, अतः उनकी प्रारम्भिक शिक्षा मेरठ में ही सम्पन्न हुई थी किन्तु उच्च शिक्षा उन्होंने मेरठ और आगरा में रह कर प्राप्त की थी। जिस समय जैन धर्म पर आधारित विषय को उन्होंने अपनी शोध के लिए चुना, उस समय तक जैन समाज में बहुत कम ही लोगों ने जैन धर्म पर रिसर्च की थी। डॉ. साहब ने पुरातत्व विभाग के सहयोग से साक्ष्यों और स्रोतों का आलम्बन लेकर अत्यन्त प्राचीन जैन धर्म के विलुप्त हो चुके अवशेषों को पुनः समाज के सम्मुख उद्घाटित करने का महती कार्य किया और जीवन पर्यन्त समाज के विकास और

उत्थान में अपना सहयोग देते रहे। अतः, न केवल देश में वरन् विदेशों में भी उन्होंने बहुत ख्याति अर्जित की थी, जिसके कारण समय-समय पर उन्हें विभिन्न संस्थाओं द्वारा सम्मानित भी किया जाता रहा। बाबा जी के कृतित्व अथवा उपलब्धियों का विस्तृत विवेचन भाई अंशु जी ने अपने लेख में बड़ी ही कुशलता से किया है अतः मैं बाबा जी के व्यक्तित्व के कुछ पहलुओं को ही आपके सामने उजागर करने जा रही हूं।

उन्हें सभी तरह का साहित्य पढ़ना पसन्द था। उनका ज्ञान बहुत विस्तृत था। हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं पर उनका समान अधिकार था। दोनों ही भाषाओं में उनके लेख प्रकाशित होते थे। उन्हें चिन्ता करते अथवा क्रोधित होते कभी भी नहीं देखा था। हर परिस्थिति में वह बहुत ही धैर्य से कार्य करते थे। बच्चों में बच्चे और बड़ों में बड़े बन जाना, ऐसा ही घुलनशील व्यक्तित्व था उनका।

उनसे मिलने आने वालों की संख्या काफी बड़ी थी। जब भी बाहर से कोई जैन परिवार लखनऊ में आता था, वह उनसे मिलने अवश्य ही आता था। समय-समय पर मीटिंग अथवा गोष्ठियों के आयोजन हमारे निवास स्थान पर होते थे, ऐसे अवसर पर बाबा जी हम बहनों से भजन पढ़वाते थे। दिन के समय अक्सर बाबा जी ऐसे छात्रों से घिरे रहते थे जो जैन धर्म से सम्बन्धित विषयों पर रिसर्च कर रहे थे। बाबा जी अक्सर उन्हें डिक्टेशन बोलते थे अथवा किताबें निकाल कर उनमें निशान लगवाते थे।

अपनी व्यस्त दिनचर्या के बाबजूद भी वह हम बच्चों के लिये समय निकाल ही लेते थे। बचपन में जब कहानियां सुननी होती थीं तब हम सभी बच्चे बाबा जी को घेरकर बैठते थे। बाबा जी इतनी लम्बी-लम्बी कहानियां सुनाते थे कि कई बार एक ही कहानी दो या तीन दिन तक चलती रहती थी। बड़े होने पर पढ़ाई के किसी भी विषय में जब कभी भी समस्या आयी हम सभी बच्चे बाबा जी से ही समझते थे। वह कठिन विषय को भी इतनी सरल भाषा में समझाते थे कि वह एक ही बार में समझ में आ जाता था। दीपावली पर तो एक हफ्ते पहले से ही सभी बच्चों को पास बैठाकर कण्डील और हटरी बनवाते थे। बाबा जी उसे बनाने का तरीका हमें समझाते थे, फिर कहते कि जो सबसे अच्छी बनायेगा उसे इनाम दिया जायेगा। त्यौहारों पर पकवान बनवाना, होली पर ठंडाई पिसवाना आदि सभी त्यौहार वह बड़ी धूम-धाम

से मनाते थे। एक खुशमिजाज व्यक्तित्व के धनी डॉ. साहब हर पल को जीने में विश्वास रखते थे। उन्हें बच्चों के साथ शतरंज और ताश खेलनां भी पसन्द था।

देश-विदेशों से समय-समय पर पत्रकार उनका इन्टरव्यू लेने के लिये आते थे। जब रेडियो तथा दूरदर्शन पर उनकी वार्तायें प्रसारित होती थीं, ऐसे अवसर पर भी वह अत्यन्त सादा लिबास धोती और कमीज में ही रहते थे। बच्चे यदि उनसे कपड़े बदलने के लिये कहते थे, तो वह हंसकर टाल देते थे। वह कहते थे कि वह व्यक्ति तो मुझसे मिलने आ रहा है, न कि मेरे कपड़ों से। वास्तव में वे जिस मुकाम पर थे उन्हें बाह्य आडम्बर की आवश्यकता ही कहां थी ! बाबा जी ने एल-एल.बी. करने के पश्चात कुछ समय तक वकालत भी की थी किन्तु बाद में छोड़ दी थी। उनका कहना था कि इस पेशे में झूठ के बिना काम नहीं चलता है और इसके लिये मेरी अन्तरात्मा गवाही नहीं देती थी। इस प्रकार छोटे-बड़े कितने ही प्रसंग हुए और अन्जाने में कितने ही संस्कार हम बच्चों में उनके द्वारा रोपित होते चले गये।

इस अवसर पर उनकी अर्द्धांगिनी स्व. श्रीमती अनन्तमाला जी का उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है। कहते हैं कि हर सफल व्यक्ति के पीछे एक स्त्री का हाथ होता है। बाबा जी की सफलता के पीछे भी दादी जी का बहुत बड़ा हाथ था। वह रूप गुणों का भण्डार एक विदुषी महिला थीं। हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत और उर्दू उन्हें चार भाषाओं का ज्ञान था। वह त्याग, सेवा, समर्पण और सहनशीलता की साक्षात मूर्ति थीं। उन्होंने डॉ. साहब को डॉ. शशि कान्त और रमा कान्त जैसे दो गुणी और संस्कारी रत्न प्रदान कर उनकी ख्याति को और भी समृद्धिशाली बनाया। यह दादी जी के सहयोग का ही परिणाम था कि बाबा जी निश्चिन्त होकर अनवरत-रूप से साहित्य और समाज की सेवा करते हुए नित्य नये आयामों को छूते रहे। इन्ही शब्दों के साथ मैं, बाबा जी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करती हूं।

- इन्दु कान्त जैन
२१, दुली मोहल्ला, फिरोजाबाद

(सौ. इन्दु, एम.ए., डॉ. साहब की सुपौत्री और श्री रमा कान्त जी की सुपुत्री हैं। इनमें साहित्य सृजन की नैसर्गिक प्रवृत्ति है। इनकी दो कृतियां - 'दर्द का रिश्ता' और 'आत्मकल्याण के दस चरण', प्रकाशित हो चुकी हैं। जनवरी २०१२ में इन्हें श्रुतसेवा निधि न्यास, फिरोजाबाद, द्वारा 'मसि कला विशारद' की उपाधि से सम्मानित किया गया है। -सम्पादक)

यादों के झरोखों से : हमारे बाबा जी

मुझे जब पापा ने यह बताया कि बाबा जी की जन्मशती के उपलक्ष में **शोधादर्श** का विशेषांक प्रकाशित हो रहा है और मुझे भी कुछ लिखकर देना है, तो मैने जीवन के पिछले पन्नों को पलटा और जो यादें ताजा हुईं, उन्हें ही शब्दों में पिरोने का प्रयास किया है।

बाबा जी को मैने एक शिक्षक एवं परामर्शदाता तथा मार्गदर्शक के रूप में सदैव अपने पास पाया। विद्यार्थी जीवन में प्रत्येक कक्षा में अव्वल अंक लाना तथा शिक्षिकाओं की प्रशंसा पात्र बने रहने का श्रेय मैं बाबा जी को ही देती हूँ। उनमें एक विशेष गुण था कि वे हमारी हर समस्या के समाधान के लिये हर समय उपलब्ध रहते थे।

वह समय के बहुत पाबन्द थे। चाय, भोजन, दूध तथा आराम सभी का समय उनका निश्चित था। उन्हें दिन में दो बजे चाय पीने की आदत थी। यदि हम उन्हें दो बजने में पांच मिनट पर ही चाय बनाकर दे देते तो वह बहुत प्रसन्न हो जाते थे। हमने उन्हें हमेशा जिन्दादिल और प्रसन्न मुद्रा में ही देखा। हम जब भी उन्हें स्मरण करते हैं तो उनकी वही छवि हमारे सामने आती है।

उन्हें शिक्षा से बहुत प्रेम था, इसी कारण हमारे परिवार में सभी सुशिक्षित हैं। जब से मैंने होश संभाला, बाबा जी को किताबों से घिरे हुए तथा लिखते-पढ़ते हुए ही पाया। उनकी खोजी प्रवृत्ति थी। वह जीवन पर्यन्त जैन धर्म एवं दर्शन पर कार्य करते रहे, लिखते रहे और नवीन पीढ़ी का मार्ग दर्शन करते रहे। मुझे एम.ए. में प्राकृत विषय चयन करने तथा प्राकृत मुक्तक काव्य पर शोध करने की प्रेरणा भी उन्हीं से प्राप्त हुई थी।

मुझे आज भी याद है कि अपनी ७५वीं वर्षगांठ के बाद वह काफी शिथिल हो गए थे, अस्वस्थ रहने लगे थे, परन्तु डॉक्टर के पास जाने से हमेशा से ही कतराते थे। एक दिन शाम को मैं उनके पास बैठी थी, कहने लगे, बहुत काम करना है और समय बहुत कम है। मैंने उनसे कहा कि बाबा जी आप ऐसा क्यों सोचते हैं, जीने के लिये इच्छा शक्ति मजबूत होनी चाहिए। बाबा जी में इच्छा शक्ति तो सचमुच दृढ़ थी। वह एक दिन भी बिस्तर पर नहीं लेटे, ना ही किसी से अपनी कोई सेवा करवायी। अचानक ही अनन्त में लीन हो गये।

यह तो जीवन का सत्य है, जो आया है उसे एक दिन तो जाना ही है। आज बाबा जी हमारे बीच में नहीं हैं, लेकिन कभी ऐसा नहीं लगा कि वह हमारे ऊपर नहीं हैं। उनका वरद् हस्त आज भी हमें आशीर्वाद दे रहा है, ऐसा मेरा विश्वास है।

- अलका अग्रवाल

(डॉ. साहब की सुपौत्री और डॉ. शशि कान्त की ज्येष्ठ सुपुत्री सौ. डॉ. अलका, एम.ए., बी.एड., पी-एच.डी. हैं। प्राकृत साहित्य का विशेष अध्ययन है। वज्जालग्गम् पर उनका शोध-प्रबन्ध प्राकृत के लोक-साहित्य को रेखांकित करता है। शोधादर्श में प्रायः लिखती हैं। आकाशवाणी से भी वार्ता प्रसारित होती हैं। अध्यापन से जुड़ी हैं। -सम्पादक)

श्रद्धा - सुमन

एक दिवस जब एक समारोह से वापस आकर मेरे बच्चों आयु. शगुन एवं चि. मधुरिम वर्धन ने मुझसे यह जिज्ञासा व्यक्त की, कि क्या बड़े बाबा जी जिन्हें उन्होंने जीवित अवस्था में नहीं देखा था, बहुत बड़े विद्वान थे, क्योंकि समारोह में उनका बहुत बहुमान हो रहा था, तो मुझे सुखद-सी अनुभूति हुई।

मैं स्वयं को सौभाग्यशाली मानती हूँ कि मुझे बाबा जी (डॉ. ज्योति प्रसाद जैन) की पौत्र-वधू (पत्नी - श्री सन्दीप कान्त जैन) के रूप में इस परिवार से जुड़ने का अवसर मिला, यद्यपि इस बात का अफसोस भी है कि १९८९ में मेरे विवाह से पूर्व ही उनका स्वर्गारोहण हो चुका था, तथापि बाबा जी की कृतियों, उनसे संबंधित संगोष्ठियों में उनके लेखों को सुनने एवं वाचन करने का सौभाग्य मुझे मिला जिससे उनकी विद्वत्ता और शख्सियत की ऊँचाई का अहसास हुआ। वह जैन धर्म के मर्मज्ञ विद्वान थे। उन्होंने जैन संस्कृति व विद्या के संवर्धन में अपना अभूतपूर्व योगदान दिया।

मैं उनकी जन्म-शताब्दी के अवसर पर उनके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करती हूँ।

- सीमा 'सौम्या' जैन

(श्री रमा कान्त जी के ज्येष्ठ पुत्र श्री सन्दीप कान्त की पत्नी और डॉ. साहब की पौत्र-वधु सौ. सीमा 'सौम्या', एम. ए., बी. एड. हैं और अध्यापन कार्य से जुड़ी हैं। -सम्पादक)

स्मृति के पन्नों से

मुझे यह लिखते हुए अत्यधिक गर्व का अनुभव हो रहा है कि मैं एक ऐसे विद्वत् पुरुष की कनिष्ठ पौत्री हूं जिन्हें न केवल भारत में बल्कि अन्य देशों में भी अपने सार्वभौमिक ज्ञान के लिए जाना जाता है। यद्यपि आज वे हमारे बीच नहीं है किन्तु उनके सान्निध्य में बिताया हुआ प्रत्येक पल आज भी मेरे स्मृति पटल पर अंकित है।

घर में सबसे छोटी होने के कारण मुझे बाबा जी का सर्वाधिक लाड़-प्यार मिलता था। मैं बहुत कम उम्र की थी, तभी वे सेवा-निवृत्त हो गए थे। अतः मैंने उन्हें हमेशा घर पर ही देखा। बाबा जी अनुशासन, नियमितता और रौबीले व्यक्तित्व के स्वामी थे। उन्हें पठन-पाठन एवं लेखन का बहुत शौक था। यही कारण था कि उनकी बैठक किसी पुस्तकालय से कम नहीं लगती थी। वे जिस तख्त पर बैठा करते थे, वह भी किताबों से इस प्रकार घिरा रहता था कि सिर्फ उनके लेटने एवं बैठने भर की जगह उसमें शेष रहती थी। वे ज्ञान का अथाह सागर थे। जो उनके संपर्क में एक बार आ जाता था, वह उनसे जुड़-सा जाता था। अनेक छात्र-छात्राओं ने उनके मार्ग-दर्शन में अपना शोध-कार्य पूर्ण किया व पी-एच.डी. की उपाधि हासिल की। एक कन्या तो कभी उनसे मिली भी नहीं थी, केवल पत्र के माध्यम से शोध-कार्य में उनसे मदद ले रही थी। पत्राचार के दौरान ही वह उनके स्वरूप को इतने अच्छे तरीके से जान गई कि विवाह के बाद अपने पति के साथ उनसे मिलने भी आ गई। मुझे याद है जिस दिन वह आई थी, बाबा जी को बुखार था और वे अपने निर्धारित समय से पूर्व ही बैठक से अपने बिस्तर पर चले गए थे। उन्होंने उसको वहीं अपने पास बैठाकर बातचीत की। उसके आने के बाद हमें पता चला कि वह तो बाबा जी से इतनी ज्यादा प्रभावित थी कि उन्हें अपना परम पूज्य मानकर उनसे अपनी सारी बातें बांटा करती थी। यह देखकर हम सभी को ऐसा लगा कि बाबा जी से यदि कोई केवल दो-चार बार किसी भी रूप में मिल लेता है, उनके स्नेह व आशीष का बृहद्/श्रेष्ठ हस्त उस पर आ जाता है।

आजकल बच्चों को पढ़ाई में समस्या आने पर इधर-उधर ट्यूशन के लिए भागना पड़ता है। लेकिन मेरे तो बाबा जी ही मेरे सर्वश्रेष्ठ मार्ग-दर्शक थे। किसी भी विषय में किसी भी समय पर मैं अपनी समस्या उनके पास लेकर जाती थी तो वे

अपना सब काम छोड़कर पहले मेरी समस्या का समाधान किया करते थे। बच्चों की खुशी में खुश होना और उन्हें प्रोत्साहित करना, उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग था। मुझे याद है वह दिन, जब मैं अपनी दसवीं कक्षा की Mark Sheet लेकर आई थी। अंग्रेजी विषय में Distinction Marks देखकर वह ऐसे प्रसन्न हुए थे जैसे उनका ही Distinction आ गया हो।

किसी भी कार्य को करने के लिए वे सदैव प्रेरित किया करते थे। एक बार मैंने उनसे कहा, 'बाबा जी मैं Painting बनाना चाहती हूं पर पता नहीं बना पाऊँगी या नहीं।' इस पर उन्होंने कहा, 'बेटा, जिस कार्य को करने की मन में इच्छा हो उसे यदि लगनपूर्वक करो तो वह अवश्य पूरा होगा।' मैंने बाबा जी से प्रेरित होकर Painting बनानी शुरू कर दी और पूरी होते ही सर्वप्रथम उनको दिखाई। उन्होंने मेरी इतनी प्रशंसा की कि मेरा तो खून तभी दुगुना हो गया।

बाल्यकाल में मुझे बहुत सी बातें महसूस नहीं होती थीं किन्तु बड़े होने के बाद आज जब उन बातों को याद करती हूं तो लगता है कि सच में बाबा जी एक प्रतिभाशाली, स्नेही और उत्साहवर्धक व्यक्ति थे। उनके पास जो कुछ भी था, वे उसे बांटने में विश्वास रखते थे, न कि समेटने में। यही कारण है कि वे एक जगत-प्रसिद्ध विद्वान के रूप में आज भी जाने जाते हैं।

- शेफाली मित्तल

(सौ. शेफाली, एम.ए., बी.एड्., डॉ. साहब की सुपौत्री, डॉ. शशि कान्त की कनिष्ठ सुपुत्री है। कम्प्यूटर विज्ञान में विशेष अभिरुचि है। सामाजिक चिन्तन विषयक लेख शोधादर्श में प्रकाशित होते रहते हैं। - सम्पादक)

ज्ञान की अनन्त-ज्योति : आदरणीय बाबा जी

विवाह के उपरान्त जब मैंने अपनी ससुराल "**ज्योति निकुंज**" में प्रवेश किया तो देखा कि घर के ड्राइंगरूम में जहां निगाह डालो वहां किताबें ही किताबें और किताबों से भरी अल्मारियां ही थीं। मेरे मन में यह जानने की उत्सुकता हुयी कि आखिर ये किताबें किसकी हैं और किसको इनका शौक है? मेरे पति श्री अंशु जैन ने बताया कि ये किताबें हमारे पूज्य बाबा जी डॉ० ज्योति प्रसाद जैन जी द्वारा संग्रहीत हैं, जो जैन धर्म एवं इतिहास के एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान थे। बाद में मेरे पितातुल्य श्वसुर 'सम्पादक सरताज' श्री रमा कान्त जैन जो स्वयं एक विद्वान, लेखक व आशुकवि थे, ने भी बताया कि "बेटा, भाई साहब (अपने पिताजी को वे इसी नाम से संबोधित करते थे) को लिखने-पढ़ने का शौक ही नहीं, वरन् व्यसन था। नौकरी आदि तो उन्होंने सिर्फ अपने परिवार के पालन-पोषण के लिये की थी, परन्तु उनका झुकाव तो सदैव लिखने-पढ़ने में ही था। इन किताबों में से कई किताबें तो उन्होंने स्वयं लिखी हैं और अधिकांश किताबों में उनके लेख, सम्पादकीय, आमुख, समीक्षाएं आदि प्रकाशित हुये हैं।"

परिवार में रहते हुये समय बीतने के साथ-साथ मुझे यह भी महसूस हुआ कि आदरणीय बाबा जी न केवल स्वयं एक बहुत बड़े विद्वान थे, वरन् उन्होंने अपनी सन्तति - पुत्र, पौत्र, पौत्री सभी को लिखने-पढ़ने की कला विरासत में दी है। उन्होंने लड़का-लड़की में कोई भेद न करते हुये अपनी पौत्रियों को भी पढ़ने-लिखने की प्रेरणा दी, इसीलिये उनकी तीनों पौत्रियां पोस्ट-ग्रेजुएट हैं। आदरणीय बाबा जी के दोनों पुत्र डॉ० शशि कान्त जैन एवं 'सम्पादक सरताज' श्री रमा कान्त जैन भी ख्याति प्राप्त विद्वान व लेखक हैं।

आदरणीय बाबा जी डॉ० ज्योति प्रसाद जैन की जन्मतिथि (६ फरवरी) और पुण्यतिथि (११ जून) को **ज्योति निकुंज** में आयोजित होने वाली स्मरण गोष्ठियों में अनेक विद्वानों व साहित्यकारों को उनके लेखन एवं व्यवहार के बारे में प्रशंसा करते हुये सुना। प्रायः व्यक्ति के मरणोपरान्त लोग उस व्यक्ति को भूल जाते हैं परन्तु कुछ व्यक्तियों को लोग उनके कार्य, आचरण एवं काबिलियत के कारण सालों-साल तक याद रखते हैं। हमारे बाबा जी को लोग आज भी याद करते हैं, यह हमारे परिवार के लिये अत्यन्त गौरव की बात है।

आदरणीय बाबा जी का लेखन-कला एवं साहित्य से लगाव उनका नैसर्गिक गुण था, परन्तु एक महिला होने के नाते मैं कह सकती हूं कि उनकी इस सफलता के पीछे उनकी धर्मपत्नी श्रीमती अनन्त माला जैन जी, जो स्वयं एक सुशिक्षित एवं धार्मिक महिला थीं, का बहुत बड़ा योगदान निश्चित रूप से था। हमारी दादी जी ने अपने परिवार एवं बच्चों की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेकर बाबा जी को निश्चिन्त होकर चिन्तन-लेखन कार्य करने में पूर्ण रूप से सहयोग दिया एवं उन्हें **'अनन्त ज्योति'** बनाने में सराहनीय योगदान दिया, जिसको नकारा नहीं जा सकता है। उनके त्याग, धैर्य एवं सादगीपूर्ण स्नेहिल स्वभाव के बगैर आदरणीय बाबा जी की सफलतायें एवं उपलब्धियां शायद संभव नहीं हो पातीं।

आदरणीय बाबा जी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म शताब्दी पर **शोधादर्श** पत्रिका के निकल रहे विशेषांक के लिये लिखते हुये मुझे अत्यन्त हर्ष और गौरव का अनुभव हो रहा है।

आदरणीय बाबा जी ने हम सभी परिवार के सदस्यों में ज्ञान की जो ज्योति जलायी है, उसे भविष्य में भी **"अनन्त ज्योति"** के रूप में प्रज्ज्वलित बनाये रखने का हम लोग हमेशा प्रयास करते रहेंगे।

- निधि जैन

(श्री रमा कान्त जी के कनिष्ठ पुत्र श्री अंशु जैन 'अमर' की पत्नी, डॉ. साहब की पौत्रवधू सौ० निधि, एम०ए०, हैं और अध्यापन कार्य से जुड़ी हैं। -सम्पादक)

अनन्त-ज्योति : मेरे प्रपितामह

जन्म के पश्चात् मृत्यु जीवन का शाश्वत यथार्थ है। जन्म लेकर एक शिशु जीवन के विभिन्न मौसमों सुख-दुख से जूझता हुआ एक बीज की भाँति अपने जीवन-चक्र को पूर्ण कर एक हरे-भरे विशाल वृक्ष की भाँति अपने शिखर तक पहुँचता है। अब यह व्यक्ति-व्यक्ति पर निर्भर करता है कि वह अपने जीवन की चमचमाती धूप सी सफलता को अहंकार रूपी तूफानी बारिश पड़ने पर धूमिल होने दे या फिर उसे एक सुन्दर इन्द्र-धनुष का आकार दे।

दूसरी तरफ 'मृत्यु' के बाद क्या होगा, इसका निश्चित जवाब शायद आज तक कोई नहीं दे पाया है। यह यक्ष प्रश्न एक बार महान कवि श्री बालकृष्ण राव जी ने भी अपनी कविता 'फिर क्या होगा उसके बाद', में उठाया था परन्तु उनको भी इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिल पाया था। मैं इस अल्पायु में इस प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ हूँ, किन्तु जिज्ञासा अवश्य है।

हाँ, एक व्यक्ति अवश्य हैं जिनके विषय में मैं कह सकती हूँ कि उनकी मृत्यु के पश्चात क्या हुआ होगा। वे कोई और नहीं, हमारे जैन समाज के महान विद्वान व इतिहासकार मेरे प्रपितामह डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी हैं। यद्यपि मैंने उनको नहीं देखा, घर पर बाबा जी, पापा जी व समाज के लोगों से जो कुछ भी जाना, उसके आधार पर मैं सोच सकती हूँ कि तब क्या हुआ होगा।

अब आप कहेंगे कि मृत्यु उपरान्त लोग दुःख में डूब गये होंगे, खूब रोना-धोना हुआ होगा, ये तो स्वाभाविक प्रतिक्रिया है। उनकी मृत्यु से परिजनों, मित्रगण, करीबी व समाज के लोगों को गहरा आघात पहुँचा था, क्योंकि इस संसार रूपी आसमान से एक जगमगाता सितारा कहीं खो जो गया था। पापा बताते हैं कि उनके पार्थिव शरीर को दो दिन दर्शन के लिये रखा गया था और सुन्दर विमान बनाकर गाजे-बाजे के साथ अन्तिम संस्कार के लिए ले जाया गया था। शव-यात्रा और श्रद्धांजलि-सभा में सैकड़ों लोग शामिल हुए थे। तेरहवीं पर भी अच्छा-खासा भोज आयोजित किया गया था। समाज का शायद ही कोई विद्वान और संस्था होगी, जिसने किसी-न-किसी रूप में अपनी श्रद्धांजलि उन्हें अर्पित न की हो।

वे असाधारण व्यक्ति थे। उनकी मृत्यु के उपरान्त दुःख के साथ-साथ हमें यह सुखद अहसास भी हुआ कि मृत्यु जैसे ध्रुव सत्य को भी हम अपने महान कर्मों से

पराजित कर अपनी कीर्ति अमर कर सकते हैं। उनकी कलम से निःसृत शब्द और उनकी वाणी आज भी इतिहास के पन्नों में अमर है। उन्होंने मृत्यु को झुठला कर आज भी हमारे दिलों में जीवन्त रूप में घर कर रखा है। उनके आदर्श हमें गलत कार्य करने पर कचोटते हैं और कुछ अच्छा करने की हमेशा प्रेरणा देते हैं। उनकी मृत्यु पर उनका यशोगान चरम पर पहुँच गया था और उनके संस्कार हमारे हृदयों तक।

जैन समाज को अपने विद्या वारिधि में डुबोकर उन्होंने अपना जीवन धन्य कर लिया था और ज्ञान की ज्योति से उन्होंने नवजीवन, विद्या निर्माण की एक 'अनन्त ज्योति' हम सभी के हृदय में प्रज्ज्वलित कर दी थी, जो आज भी हम सभी का प्रकाश पुँज की तरह मार्ग-दर्शन कर रही है।

आदरणीय प्रपितामह के बारे में उनकी जन्म-शताब्दी के अवसर पर लिखते हुए मुझे कबीर दास जी का निम्नलिखित दोहा याद आ रहा है, जो उन पर अक्षरशः सटीक बैठता है -

जब तू आया जगत में
जग हंसा तू रोय।
ऐसी करनी कर चलो
तू हंसे जग रोय।।

- पलक जैन

(आयु. पलक, श्री अंशु जैन की पुत्री, श्री रमा कान्त की सुपौत्री और डॉ. साहब की प्रपौत्री है। बाल सुलभ जिज्ञासा और विचारणा में भी एक बौद्धिक मनस्विता की झलक है। वह कक्षा १० की छात्रा है। - सम्पादक)

Remembrance on Centenary
Itihasa-Manishi Dr. Jyoti Prasad Jain

It is our privilege to celebrate the centenary of Itihasa- Manishi Dr. Jyoti Prasad Jain. He was born on 6th February 1912 A. D. and thus his centenary falls on 6th February this year. He originally belonged to Meerut but he adopted Lucknow as his home, and here he left for heavenly abode on June11, 1988.

Dr. Jain was a scholar of international repute and an acknowledged authority on Indology with particular reference to Jainology. His field of specialization covered history, culture, literature, art, religion and philosophy. **The Jaina Sources of the History of Ancient India**, his *magnum opus*, is the only authentic work on the subject. Another important work, **Bharatiya Itihasa : Ek Dristi**, (in Hindi), gives a new dimension to the study of Indian History by doing justice to South India and to sources other than the Buddhist and Brahmanical. His **Religion and Culture of the Jains** is an epitome on Jainism, simple and lucid in style but comprehensive in treatment. Multiple editions of these works have been published.

Dr. Jain had been associated with many research journals. He himself started the **Shodhadarsha** which continues to carry on his legacy of objective research.

Having made Lucknow proud by his scholarly contribution to the study of history and culture, he was honoured as Itihasa-Manishi, the Historian *par excellence*, at Lucknow on February 12, 1979. Earlier, in 1974, he was conferred the title of Vidya-Varidhi for his encyclopaedic knowledge, at Meerut, and later, on December 14, 1986, he was honoured by the Ahimsa International at Delhi.

Thorough as a scholar, objective as a researcher and progressive as a thinker, Dr. Jain's contribution to the fund of knowledge will always remain a source of inspiration. His objective approach and comprehensive vision will always guide to study history in proper perspective. Remembering this quiet and selfless devotee of knowledge on his centenary, we members of his progeny pay our humble homage and resolve to pursue the path shown by him.

- Shashi Kant

भावांजलि सन्देश

श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा

श्रद्धेय इतिहास-मनीषी डॉ. श्री ज्योति प्रसाद जी जैन की जन्म-शती पर स्मरण-गोष्ठी आयोजित करने के लिए आप बधाई के पात्र हैं। मैं उन हजारों व्यक्तियों में से एक हूँ जिन्होंने स्वनाम-धन्य डॉ. ज्योति प्रसाद के विचारों और लेखन से जीवन में बहुत कुछ पाया है और इस कारण उनके प्रशंसक हैं।

मैं अपनी आयु के ६४वें सोपान से डॉ. श्री ज्योति प्रसाद जी को हृदय की गहराइयों से श्रद्धा सुमन अर्पित करता हूँ और जीवन में उनसे जो पाया है उसके लिए उन्हें शत-शत नमन !

से. नि. संयुक्त सचिव, उ. प्र. शासन
१६-सी, शान्ति मार्ग, महानगर एक्स., लखनऊ

श्री जमनालाल जैन

वयोवृद्ध विद्वान श्री जमनालाल जैन (जन्म १८-१२-१९२२) ने अपने सुपुत्र डॉ. अभय कुमार जैन के माध्यम से यह संदेश भिजवाया है कि शारीरिक अशक्तता के कारण वह स्वयं कुछ लिखने में अपने को असमर्थ पा रहे हैं परन्तु डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के प्रति उनकी श्रद्धांजलि निवेदित है। जैन धर्म के सम्बन्ध में अंग्रेजी में एक पुस्तिका लिखने का उन्होंने अपना अभिप्राय डॉ. साहब को अक्टूबर १९८१ में सूचित किया था। तदनुसार डॉ. साहब ने २७ अक्टूबर १९८१ को **Essence of Jainism** शीर्षक से एक ४८-पृष्ठीय पुस्तिका लिखकर उन्हें भेज दी थी। जनवरी १९८२ में इसका प्रकाशन श्री जमनालाल ने अपने शुचिता पब्लिकेशंस के माध्यम से किया था। इस पुस्तिका में तीन अध्याय हैं -१- Essence of Jainism - इसमें जैन धर्म का संक्षिप्त परिचय दिया गया है, २. Tirthankara Mahavira - इसमें भगवान महावीर के जीवन और शिक्षाओं का परिचय दिया गया है, ३. Excerpts from the Jina`s Teachings - जैन धर्म की शिक्षाओं से सम्बन्धित १२ सूत्र, तथा जिनेन्द्र की प्रार्थना का स्वरूप, दिये गये हैं। श्री जमनालाल ने अपने प्रकाशकीय वक्तव्य में निम्नलिखित उद्‌गार व्यक्त किये थे, और इन्हीं के माध्यम से अब अपने श्रद्धा सुमन निवेदित किये हैं -

We are glad to publish this short and valuable booklet on Jainism by Vidyavaridhi Dr. Jyoti Prasad Jain, M.A.,LL.B.,Ph.D. He has given in a nutshell essence of Jainism in this introductory book especially for those who want to acquaint themselves with Jainism at a glance. Our foreign visitors will surely welcome our venture.

The philosophy and ethics of Jainism is so wide and deep that it is not an easy matter to cull it within such a small space. Dr. Jyoti Prasad Jain has done it very efficiently. We are very thankful to him for this act of kindness.

We hope that this small booklet will inspire and develop in our readers a feeling of non-violence and love. The very foundation of Jainism is, as Lord Mahavira says, 'Venerabnle is he who vieweth all creatures as his own self and seeth them all alike.'

सर्वोदय कार्यकार्ता, सामाजिक चिंतक, पत्रकार
अभय कुटीर, सारनाथ, वाराणसी

श्री बिशम्भर दयाल अग्रवाल

आपने दिनांक ६.२.१२ को स्वनाम-धन्य डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्मशती पर प्रकाशित **स्मृतिका** देने की कृपा की। चिरंजीव नलिन कान्त द्वारा सामग्री का चयन व सम्पादन प्रशंसनीय है। डॉक्टर साहब की वार्ता सुनने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ।

आयुष्मति बिटिया इन्दु कान्त की पुस्तक **आत्मकल्याण के दस चरण** को मैंने आद्योपान्त पढ़ा। अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए लेखन का कार्य करना स्वयम् में प्रशंसनीय है। अत्यन्त सरल भाषा में गूढ़ बात को समझाने में उसका गहन अध्ययन परिलक्षित है। दामाद महोदय आयुष्मान् महेशचन्द्र जी का बहुमूल्य सहयोग स्पष्ट है। प्रिय भाई रमा कान्त द्वारा इन्दु कान्त को दी गई कलम निर्बाध गति से चलती रहे यही ईश्वर से प्रार्थना है। प्रस्तुत पुस्तक गागर में सागर है।

आयुष्मान् अंशु का भाषण धारा प्रवाह रूप में सुनकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। आपके निर्देशन में ज्योति निकुंज से निरन्तर माँ सरस्वती की कृपा से ज्ञान की धारा प्रवाहित होती रहे, यही मेरी शुभ कामना है।

से.नि. उप सचिव, उ.प्र. शासन
विष्णु सदन, ३६०, राजेन्द्र नगर, लखनऊ

श्री मिलाप चंद डंडिया

हमेशा की भाँति **शोधादर्श** का ७४वाँ अंक शोध का खजाना है ही पर **डॉ. ज्योति प्रसाद जैन स्मृतिका** इस अंक के साथ बोनस स्वरूप है।

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का जीवन शोध कार्यों को समर्पित था। उन्होंने मंथन कर जो मोती दिए उसके लिये समस्त जैन समाज सदैव उनका ऋणी रहेगा। **स्मृतिका** में प्रकाशित आकाशवाणी से प्रसारित उनकी वार्ता 'नदिया एक, घाट बहुतेरे' यह इंगित करती है कि वे आम आदमी के भी विद्वान थे, न कि केवल विद्वानों के ही विद्वान।

सबसे अधिक आह्लाद का विषय तो यह है कि डॉ. साहब की सन्तति और वह भी तीसरी पीढ़ी तक उनके ही नक्शे कदम पर चल रही है और उनके पोते-पोतियों तक ने अपना जीवन जैन शोध व साहित्य को समर्पित किया हुआ है। वे सब प्रणम्य हैं।

यह धारा आगे भी निरंतर बहती रहे, यही कामना है।

वरिष्ठ पत्रकार; अध्यक्ष, जैन संस्कृति रक्षा मंच
सी-५, चिकित्सालय मार्ग, बापूनगर, जयपुर

इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म-शती पर स्मरण-गोष्ठी

दिनांक ६ फरवरी २०१२ ई. को ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ में श्रद्धेय इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म शताब्दी पर स्मरण गोष्ठी का आयोजन किया गया। केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ के प्रो. डॉ. विजय कुमार जैन ने अध्यक्षता की। पूर्व प्रमुख अभियन्ता श्री धर्मवीर, वरिष्ठ साहित्यकार श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश' और वयोवृद्ध साहित्यकार साहित्य-भूषण डॉ. परमानन्द जड़िया विशिष्ट अतिथि थे। श्रद्धेय डॉ. साहब के सम्पर्क में आये विद्वत्जनों और धर्मप्रेमियों ने गोष्ठी में सहभागिता की। आयोजन ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट के द्वारा किया गया। तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., और जैन मिलन लखनऊ सहभागी थे। संचालन श्री नलिन कान्त जैन ने किया।

मंगलाचरण के रूप में सर्वसौ. इन्दु, मोहिनी, सीमा और निधि ने सर्वप्रथम श्री रमा कान्त जैन द्वारा रचित **'सरस्वती वन्दना'** का पाठ किया -

विनती इतनी अम्ब मेरी
इतना तू उपकार कर दे
जगत ज्योतिर्मय कर सकूं मैं
लेखनी में धार धर दें।

तत्पश्चात् श्रद्धेय डॉ. साहब द्वारा रचित **'वीतराग स्वरूपम्'** का सस्वर पाठ किया।

तदोपरान्त गोष्ठी के अध्यक्ष प्रो. विजय कुमार जैन ने श्रद्धेय डॉ. साहब के चित्र पर माल्यार्पण कर अपने श्रद्धा सुमन अर्पित किये तथा विशिष्ट अतिथियों एवं समागत जनों ने चित्र पर पुष्प अर्पित किये।

आयोजन के प्रास्ताविक के रूप में **डॉ. शशि कान्त** ने अपने उद्गार व्यक्त करते हुये बताय कि उन्हें अपने परम श्रद्धेय पिता जी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी की जन्मशती पर अपनी विनय और श्रद्धा अर्पित करने का सुयोग प्राप्त हुआ है। डॉ. साहब के जीवन में सादगी को दृष्टिगत रखते हुये आयोजन सादे तरीके से

व्यवस्थित किया गया है और इसमें डॉ. साहब के स्नेही जनों की सहभागिता आमंत्रित की गई है। इस सन्दर्भ में वयोवृद्ध श्री प्रकाशचंद जैन 'दास', डॉ. महावीर प्रसाद जैन 'प्रशांत' और श्री नरेश चंद्र जैन का उल्लेख प्रासंगिक है क्योंकि वे अस्वस्थता के कारण नहीं आ सके। श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा और श्री मगनलाल जैन भी वृद्धावस्था के कारण नहीं आ सके, तथापि उन्होंने अपनी श्रद्धांजलि भेजी है। श्रद्धेय डॉ. साहब की स्मृति को संजोने की दृष्टि से उनके पौत्र श्री नलिन कान्त जैन द्वारा **स्मृतिका** का सम्पादन किया गया है जो इस गोष्ठी में उपलब्ध कराई जा रही है। श्रद्धेय डॉ. साहब की पौत्री श्रीमती इन्दु कान्त जैन की कृति **आत्मकल्याण के दस चरण** भी आज सुलभ कराई जा रही है। कार्यक्रम के प्रारंभ में २४ जनवरी १९८८ को आकाशवाणी लखनऊ से प्रसारित डॉ. साहब की वार्ता को कैसेट के माध्यम से उनकी वाणी में हम सुनेंगे और तत्पश्चात् इतिहास की उपयोगिता के सम्बन्ध में उनके चिन्तन-प्रसून का वाचन भी हम सुन सकेंगे। इस स्मरण गोष्ठी में सहभागिता कर रहे सभी स्नेही मित्रों के प्रति श्रद्धेय डॉ. साहब की सन्तति अनुग्रहीत है।

डॉ. साहब की वाणी में आकाशवाणी लखनऊ से २४ जनवरी १९८८ को **'नदिया एक, घाट बहुतेरे'** कार्यक्रम के अन्तर्गत **प्रसारित वार्ता** सुनी गई। इसके माध्यम से डॉ. साहब ने बताया कि जैन धर्म के तात्विक, सैद्धांतिक या दार्शनिक तत्वों की चर्चा न करके उसकी कतिपय विशेषताओं का जो उसके प्रत्येक स्वर में मुखर होती हैं, उल्लेख किया जाना उचित होगा। ये विशेषताएं हैं आत्मौपम्य, अहिंसा, अपरिग्रह, आत्म-पुरुषार्थ और अनाग्रह। यह पंच-सूत्री स्वर जैन धर्म और संस्कृति में सदैव गुंजायमान होता रहा है। 'नदिया एक, घाट बहुतेरे' की उक्ति को चरितार्थ करने वाले सद्धर्म के रूप में जैन धर्म अपना उल्लेखनीय स्थान रखता है। **स्मृतिका** में उक्त वार्ता मूल रूप में प्रकाशित है।

इतिहास की उपयोगिता के सम्बन्ध में श्रद्धेय डॉ. साहब के **चिन्तन-प्रसून** का वाचन सौ. सीमा जैन द्वारा किया गया। किसी व्यक्ति, समाज या जाति की मान-मर्यादा उसके इतिहासबद्ध पूर्व-वृतान्त पर बहुत कुछ निर्भर करती है। इतिहास के ज्ञान के बिना यदि जातीय जीवन में चेतना, स्फूर्ति, स्वाभिमान और आशा का तिरोभाव हो जाता है तो इतिहास का सम्यक् ज्ञान सोतों को जगा देता है।

श्रद्धेय डॉ. साहब के पौत्र **श्री अंशु जैन 'अमर'** ने डॉ. साहब का पुनीत स्मरण करते हुये उनके जीवन और कृतित्व पर विस्तृत प्रकाश डाला और बताया कि

इतिहास विषय के छात्र के रूप में उन्होंने देखा कि भारतीय इतिहास के निर्माण में प्रायः जैन स्रोतों की उपेक्षा की गई है। अतः उन्होंने जैन साहित्य व इतिहास के पुनर्निर्माण का महती एवं सफलीभूत प्रयास किया। अपनी साहित्य-साधना से उन्होंने जैन स्रोतों के माध्यम से भारतीय इतिहास के अनेकों विस्मृत तथ्यों व अध्यायों को उद्घाटित एवं आलोकित किया। वह **जैन संदेश शोधांक** तथा **शोधादर्श** नामक प्रतिष्ठित शोध पत्रिकाओं के जनक थे। उन्हें इतिहास-रत्न, विद्यावारिधि और इतिहास-मनीषी की उपाधियों से समाज द्वारा विभूषित किया गया। वे युवा पीढ़ी को शोध-खोज व लेखन के लिए सदैव प्रेरित करते रहे। उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि भारतीय इतिहास के जैन व जैनेतर विविध स्रोतों का अधिकाधिक शोध करके कदाग्रह-निरपेक्ष और तथ्य-सापेक्ष सुदपयोग करते हुये भारतीय इतिहास और संस्कृति के विविध पहलुओं को समृद्ध किया जाये।

तीर्थकर महावीर स्मृति केंद्र समिति, उ.प्र., के अध्यक्ष एवं लखनऊ श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन सभा के मुख्य संरक्षक **श्री लूणकरण नाहर जैन** ने अपने संस्मरण में बताया कि श्रद्धेय डॉ. साहब से उनका परिचय सन् १९८१ में हुआ जब तरुण तपस्वी लाभचन्द्र महाराज लखनऊ में चातुर्मास के लिये पधारे थे। प्रवचन के बाद डॉ. साहब से रोजाना ही मिलना होता था। उसके बाद भी जैन मिलन की बैठकों में डॉ. साहब के विद्वत्तापूर्ण प्रवचनों से लाभान्वित होता रहा। उनके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये उन्होंने कहा-

जो इतिहास-मनीषी, विद्यावारिधि प्रज्ञावान विद्वान थे,
जैन जगत के जग-मग तारे, डॉ. ज्योति प्रसाद जी महान थे
जन्मशती शुभ आई आपकी, हम सब मिल गुणगान करें,
चरणों में झुककर विद्वत्वर के शत-शत बार प्रणाम करें।

श्री भगवान भरोसे जैन, सेवा-निवृत्त संयुक्त सचिव, उ.प्र. शासन, ने श्रद्धेय डॉ. साहब का स्मरण करते हुये बताया कि उनका डॉ. साहब से प्रथम परिचय १९६२ में हुआ था। उस समय डॉ. साहब जिला गजेटियर कार्यालय में कार्यरत थे और वह स्वयं डी.ए. कमीशन के कार्यालय में थे और संयोग से यह दोनों कार्यालय एक ही भवन में थे, अतः उनसे धर्म चर्चा का सुयोग प्राप्त हुआ। जैन मिलन की बैठकों में भी उनके विद्वत्तापूर्ण प्रवचन सुनने का सुअवसर प्राप्त हुआ। डॉ. साहब से घनिष्ठ परिचय १९७२ के बाद स्वर्गीय श्री अजित प्रसाद जैन 'बब्बे जी' के यहां

साप्ताहिक गोष्ठी में हुआ जहां वह प्रवचन करते थे और शंका-समाधान भी करते थे। शंका-समाधान की उनकी शैली बहुत सहज थी। वह कहते थे कि कभी आवेश में आकर अपनी बात नहीं कहनी चाहिए; जो भी करो, विवेक के साथ करो। उनके निवास **'ज्योति निकुंज'** पर भी साप्ताहिक गोष्ठी हुआ करती थी। डॉ. साहब के प्रति श्रद्धांजलि स्वरूप उन्होंने निम्नलिखित पद का सस्वर पाठ किया -

जिन्दगी बन्दे तेरी यह बर्फ सम ढल जायेगी
यत्न चाहे कल करो, यह न रहने पायेगी,
काम कर दुनिया में ऐसा जिससे तेरा नाम हो,
मरने के बाद दुनिया गीत तेरा गायेगी।

श्री धर्मवीर, सेवा-निवृत्त प्रमुख अभियंता, लोक निर्माण विभाग, उ.प्र., ने अपने संस्मरण अभिव्यक्त करते हुये बताया कि डॉ. साहब से उनका परिचय १९६५ में हुआ जब वे सिंचाई विभाग में टेक्निकल आडिट सेल में टेक्निकल एक्जामिनर थे और डॉ. साहब गजेटियर विभाग में थे और ये दोनों ही कार्यालय एक ही भवन में थे। जितने समय वह टेक्निकल आडिट सेल में कार्यरत रहे उनका सम्पर्क डॉ. साहब से होता रहा और उनसे उन्हें धर्म ग्रन्थों के अध्ययन की प्रेरणा मिली और मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। उसके बाद चारबाग मंदिर में डॉ. साहब के शास्त्र प्रवचनों ने भी प्रभावित किया। डॉ. साहब उनके धर्मगुरु थे और उनकी स्मृति निरंतर बनी रहती है। जन्मशती पर उनको श्रद्धापूर्वक नमन !

श्री स्वराज्य चन्द्र जैन, उपाध्यक्ष, जैन धर्म प्रवर्धिनी सभा, लखनऊ, ने अपनी भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये निम्नलिखित पंक्तियां प्रस्तुत कीं -

तारीखें इतिहास बनाया करती हैं,
सृजन की प्यास बनाया करती हैं,
जिनमें कुछ करने का जज़्बा होता है,
तिथियां उन्हें खास बनाया करती हैं।

श्रद्धेय डॉ. साहब की प्रपौत्री **बेबी पलक** ने अंग्रेजी में अपने प्रपितामह का परिचय दिया और इतिहास एवं जैन धर्म व संस्कृति के क्षेत्र में उनके द्वारा किये गये शोधात्मक एवं तथ्यपरक अवदान का स्मरण किया। उनके प्रति इस जन्मशती पर सच्ची श्रद्धांजलि उनके द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चलने से ही होगी।

श्री रतन चंद्र गुप्ता, सेवा-निवृत्त संयुक्त सचिव, उ.प्र. शासन, ने श्रद्धेय डॉ. साहब का स्मरण करते हुये बताया कि उन्हें डॉ. साहब का पितृतुल्य स्नेह प्राप्त था। डॉ. साहब के व्यक्तित्व और कृतित्व ने तथा उनके स्नेह ने निरंतर ही गौरव की अनुभूति प्रदान की।

डॉ. साहब की पौत्री **सौ. इन्दु कान्त जैन** की कृति **आत्मकल्याण के दस चरण** का लोकार्पण प्रो. विजय कुमार जैन द्वारा किया गया। इन्दु ने बाबा जी के साथ बिताये गये अपने बचपन के संस्मरण सुनाते हुये बताया कि बाबा जी अपने पौत्र-पौत्रियों के साथ हिल-मिल कर रहते थे। उनके नियमित जीवन का प्रभाव हम सभी बच्चों पर पड़ा। उनकी अध्ययन की प्रवृत्ति और सहित्य साधना ने हम सभी को बहुत प्रभावित किया। तीन वर्ष पहले मैने कुछ कहानियां लिखने का प्रयास किया जिसके लिए मुझे पिता जी स्वर्गीय रमा कान्त जी से बराबर प्रेरणा मिली और उसी के फलस्वरूप **दर्द का रिश्ता** के रूप में एक लघु कथा संकलन लिखा जा सका। उसका प्रकाशन तो पिता जी के जीवन काल में नहीं हो सका परन्तु उसका लोकार्पण उनकी प्रथम पुण्य तिथि पर २६ मई २०१० को हो सका। फिरोजाबाद में प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी ने उस कथा संकलन को देखकर मुझे धार्मिक विषय पर भी लिखने के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित किया। उसी के फलस्वरूप दस लक्षण धर्म के विषय को लेकर **आत्मकल्याण के दस चरण** की प्रस्तुति की गई।

सौ. डॉ. राका जैन ने अपनी भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये कहा कि उनकी ज्ञान ज्योति अनमोल बन गई है। एक भावपूर्ण गीत भी उन्होंने प्रस्तुत किया-

दुनिया सब माटी का ग्राहक, माटी का ही मोल है।
जो माटी का मोल कर रहा, वह प्राणी बेमोल है।
दुनिया सब--------
लोहा माटी, सोना माटी, यह माटी के खेल हैं,
ज्योतिर्मय छाया भी माटी, माटी के बहुमेल हैं।
चमक दमक माटी की बजती, माटी का ही ढोल है।।

श्री विष्णुदत्त शर्मा ने बताया कि श्रद्धेय डॉ. साहब स्वतंत्रता सेनानी भी थे और उनके स्वयं के पिता जी पं. चतुर्भुज शर्मा और वह स्वयं भी स्वतंत्रता सेनानी रहे हैं। डॉ. साहब के सम्बन्ध में उनके दोनों पुत्रों से ही जानकारी मिली। इस बात का उन्हें अफसोस रहा कि वह स्वयं डॉ. साहब से नहीं मिल सके।

वरिष्ठ साहित्यकार **श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश'** ने अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुये कहा कि डॉक्टर ज्योति प्रसाद जैन जी का व्यक्तित्व विशिष्ट था।

साहित्य-भूषण डॉ. परमानन्द जड़िया जी ने अपनी श्रद्धांजलि में कहा कि डॉ. साहब ने अपनी संतति को बौद्धिकता के जो संस्कार दिये हैं वे स्पृहणीय हैं।

हास्य-व्यंग्य कवि **श्री अनिल कुमार 'बांके'** ने अपनी भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये कहा कि डॉक्टर साहब से साक्षात् परिचय का सौभाग्य नहीं प्राप्त हो सका था परन्तु उनके बारे में स्व. रमा कान्त जी तथा परिवार के अन्य सदस्यों से जो परिचय मिलता रहा उससे वे सदा ही श्रद्धा विगलित होते रहे।

सौ. इन्दु और सौ. सीमा ने भावपूर्ण भजन प्रस्तुत किया -

दिन-रात मेरे स्वामी, मैं भावना यह भाऊं,
अन्त समय नाम तेरा ध्याऊं।

प्रो. विजय कुमार जैन ने अपने अध्यक्षीय सम्बोधन में यह उल्लेख किया कि श्रद्धेय डॉ. साहब की धर्म, समाज और साहित्य के प्रति की गयी सेवाओं की अपेक्षा से उनकी जन्मशती का समारोह पूर्वक आयोजन करने का दायित्व जैन समाज का था। परन्तु उसका निर्वहन उनके परिवार-जन द्वारा ही किया जा रहा है। डॉ. साहब की तीसरी पीढ़ी में भी उनके द्वारा प्रदत्त बौद्धिक संस्कार गतिमान हैं। उनके परिवारजनों द्वारा किया गया यह आयोजन यह रेखांकित करता है कि डॉ. साहब चिरस्मरणीय रहेंगे। यद्यपि वह लखनऊ १९८७ में ही आ गये थे, उन्हें डॉ. साहब के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हो सका। उनका प्रथम परिचय कुछ समय पूर्व ही हो गया था जब उन्होंने **जैन सिद्धान्त भास्कर** में प्रकाशनार्थ एक लेख डॉ. साहब को भेजा था। डॉ. साहब के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि उनकी अप्रकाशित रचनाओं को यथा-शीघ्र प्रकाशित किया जाये और उनके लेखों का संकलन भी प्रकाशित किया जाये। डॉ. साहब इतिहास और जैन-धर्म के क्षेत्र में कार्यरत शोधार्थियों और विद्यार्थियों के लिए सदैव ही प्रेरणा के स्रोत बने रहेंगे।

अन्त में, डॉ. साहब के पौत्र **श्री सन्दीप कान्त जैन** ने अध्यक्ष महोदय, विशिष्ट अतिथिगण, श्रद्धा सुमन अर्पित करने वाले स्नेहीजन और सभी समागत मित्रों के प्रति ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट की ओर से आभार व्यक्त किया कि उन्होंने अपना अमूल्य समय देकर इस आयोजन में सहभागिता कर श्रद्धेय बाबा जी की जन्मशती पर आयोजित इस स्मरण-गोष्ठी को सफल बनाया।

- अंशु जैन 'अमर'

श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद जैन और उनकी सन्तति के विशिष्ट प्रकाशन

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

The Jaina Sources of the History of Ancient India (100 BC-AD 900)

It was presented as a thesis for Ph.D. It is the first comprehensive work dealing with the Jaina sources of the history of Ancient India. Besides indicating the source material, it finally determines the dates of Mahavira's Nirvana, Vikrama Era, Saka Era and Earlier Saka Era. It also dwells upon the importance of the Sarasvati Movenent, that is, the movement for redaction of scriptures among the Jains.

It was first published in 1964 and its revised edition has been published in 2005.

It can be had from Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd., Post Box 5715, 54, Rani Jhansi Road, New Delhi-110055.

Jainism, The Oldest Living Religion

It was first published by the Jaina Cultural Research Society, Varanasi, in 1951. Its 2nd edition was published in 1988 by P.V. Research Institute, now Parshwanath Vidyapeeth, I.T.I. Road, Karaundi, Varanasi-221005, and can be had from there.

It was translated in Gujrati by Hemant J.Shah in 1979. It has also been translated in Hindi by Pulak Goyal and published in 2011, which can be had from Rich Marketing, 1535, Sarasvati Colony, Cherital Ward, Jabalpur-482002.

Religion And Culture Of The Jains

It is a handy compendium of Jainism for the general reader who wants to acquaint himself with the genesis, history, tradition, philosophy, way of life, art, literature and other cultural aspects of this ancient but still flourishing religion of India.

It was first published in 1975 on the 2500th anniversary of Mahavira`s Nirvan. Since then its editions have been brought out in 1977, 1983, 1999 and 2006.

It can be had from the Bharatiya Jnanpith, 18, Institutional Area, Lodi Road, New Delhi-110003.

भारतीय इतिहास : एक दृष्टि

प्राग्ऐतिहासिक काल से १९४७ में स्वतंत्रता प्राप्ति तक का भारत का समग्र इतिहास इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि सभी ऐतिहासिक स्रोतों का संज्ञान लेकर और भारत के सभी प्रदेशों को दृष्टि में रखते हुये एक प्रवाहपूर्ण विवरण प्रस्तुत किया जाये। इसका पहला संस्करण १९६१ में प्रकाशित हुआ था और शीघ्र ही १९६६ में इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित हुआ। तत्पश्चात् १९९९ और २००४ में इसके अनुवर्ती संस्करण प्रकाशित हुये।

इसे भारतीय ज्ञानपीठ, १८, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली-११०००३ से प्राप्त किया जा सकता है।

प्रमुख ऐतिहासिक जैन पुरुष और महिलाएं

इसमें महावीर युग (६००-५०० ईसा पूर्व) से आधुनिक युग १९४७ ई. तक के उन व्यक्तियों का परिचय और राष्ट्र एवं समाज के प्रति उपलब्धियों का विवरण दिया गया है जो जैन धर्म के अनुयायी थे। जैन धर्मानुयायियों के कृतित्व के सम्बन्ध में प्रायः जन सामान्य में अज्ञान है और कुछ भ्रान्त धारणायें भी हैं जिनका निरसन इस पुस्तक के माध्यम से होता है। इसका प्रकाशन प्रथमतः १९७५ में हुआ था और दूसरा संस्करण २००० में प्रकाशित हुआ।

इसे भी भारतीय ज्ञानपीठ से प्राप्त किया जा सकता है।

युग-युग में जैन धर्म

८६-पृष्ठीय इस पुस्तक में जैन धर्म का ऐतिहासिक परिचय संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है। जैन धर्म और दर्शन, अनुश्रुतिगम्य इतिहास, ऐतिहासिक काल में जैन धर्म, जैन इतिहास के साधन स्रोत, जैन कला, और भारतीय संस्कृति को योगदान, शीर्षकों के अन्तर्गत, विषय का विवेचन, सरल भाषा और सहज शैली में किया गया है। सहायक ग्रन्थ सूची भी दी गई है ताकि जिज्ञासु पाठक उन ग्रन्थों के माध्यम से अपनी जिज्ञासा का निवारण कर सकें।

डॉ. साहब के देहावसान के उपरांत २००२ में इसका प्रकाशन हो सका। अंग्रेजी में इसी विषय पर अधिक परिवर्धित संस्करण **Jainism through the Ages,** जिसका प्रणयन १९८१ में कर लिया गया था, अभी प्रकाशन की प्रतीक्षा में है।

युग-युग में जैन धर्म पुस्तक प्राच्य श्रमण भारती, १२/१, प्रेमपुरी, निकट जैन मंदिर, मुजफ्फरनगर-२५१००१ से प्राप्त की जा सकती है।

भगवान महावीर स्मृति ग्रन्थ

भगवान महावीर के २५००वें निर्वाण महोत्सव के उपलक्ष में "श्री महावीर निर्वाण समिति, उत्तर प्रदेश" द्वारा इस ग्रन्थ का प्रकाशन १९७५ में किया गया था। इसका सम्पादन और अधिकांश लेखन श्रद्धेय डॉ. साहब द्वारा किया गया था। यह सात खण्डों में व्यवस्थित है। खण्ड एक में महावीर वचनामृत, खण्ड दो में महावीर स्तवन (इसमें प्राकृत, अपभ्रंश, संस्कृत और हिन्दी भाषा में उपलब्ध रचनाएं दी गई हैं), खण्ड तीन में महावीर युग, जीवन और देन, खण्ड चार में जैन धर्म, दर्शन और संस्कृति, खण्ड पांच में शाकाहार, खण्ड छह में उत्तर प्रदेश और जैन धर्म, और खण्ड सात में श्री महावीर निर्वाण समिति के गठन, कार्यकलाप एवं उपलब्धियां, सम्बन्धी विविध सामग्री संचयित है। यह ग्रन्थ संदर्भित सभी विषयों पर प्रामाणिक सामग्री उपलब्ध कराता है परन्तु इसका खण्ड छह उत्तर प्रदेश में जैन धर्म के महत्व को विशेष रूप से रेखांकित करता है।

इस ग्रन्थ को 'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६००४' से प्राप्त किया जा सकता है।

श्री रमा कान्त जैन (डॉ. साहब के सुपुत्र)

हिन्दी भारती के कुछ जैन साहित्यकार

श्री रमा कान्त ने इस पुस्तिका में बनारसीदास, द्यानतराय, भूधरदास, दौलतराम कासलीवाल, बुधजन, कवि दौलतराम, नाथूराम प्रेमी और फूलचंद 'पुष्पेन्दु' का परिचय हिन्दी साहित्य को दिये गये उनके अवदान के परिप्रेक्ष्य में सरल सुबोध शैली में प्रस्तुत किया है। बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध की हिन्दी कवियित्रियों मैनावती, लज्जावती, कमलादेवी, कुन्थकुमारी, सुन्दरदेवी, छन्नोदेवी, चन्द्रप्रभादेवी, रूपवती देवी 'किरण', मणिप्रभा देवी, प्रेमलता 'कौमुदी' और कुसुम कुमारी का परिचय भी दिया है जो अन्यत्र उपलब्ध नहीं है।

इसका प्रकाशन १९९५ में जैनविद्या संस्थान द्वारा किया गया। इसे जैन विद्या संस्थान, दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी, श्रीमहावीरजी-३२२२२० से प्राप्त किया जा सकता है।

गिलास आधा भरा है

इसमें १६ ललित निबन्ध संकलित हैं जो निबन्ध लेखक के जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण को रेखांकित करते हैं। इसका प्रकाशन डॉ. साहब की ११वीं पुण्य तिथि पर ११ जून १९९९ को किया गया था। इसे 'ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट, ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६००४' से प्राप्त किया जा सकता है।

सौ. इन्दु कान्त जैन (श्रद्धेय डॉ. साहब की सुपौत्री)

दर्द का रिश्ता

यह १६ लघु कथाओं का संकलन है। ये सभी कहानियां मानवीय संवेदनाओं पर आधारित हैं। जिन सामाजिक परिस्थितियों और व्यक्तिगत मनोभावनाओं को इन कहानियों में इंगित किया गया है, उनसे पाठक एक प्रकार की जागृति का भी अनुभव कर सकते हैं और समाज में रिश्तों की गरिमा एवं नजाकत के बारे में भी सचेत हो सकते हैं। पाठकों ने इस कथा-संकलन की भूरि-भूरि प्रंशसा की है।

इसका प्रकाशन सौ. इन्दु के पिता श्री रमा कान्त जैन की प्रथम पुण्यतिथि पर २६ मई २०१० को किया गया था। इसे श्री महेश चन्द्र जैन, वर्धमान पैलेस, आगरा गेट, फिरोजाबाद-२८३२०३ से प्राप्त किया जा सकता है।

आत्मकल्याण के दस चरण

जैन धर्म में दशलक्षण पर्व के अन्तर्गत श्रावकों के लिए दस धर्मों के पालन किये जाने का विधान है। इन दस धर्मों को सहज रोचक शैली में लेखिका द्वारा प्रस्तुत किया गया है। इसका प्रकाशन ८ जनवरी २०१२ को अक्षराभिषेकोत्सव के अन्तर्गत किया गया था। पुस्तक की सरल-सुबोध शैली की पाठकों ने सराहना की है।

इसे श्रुतसेवा निधि न्यास, १०४, नई बस्ती, फिरोजाबाद-२८३२०३ से प्राप्त किया जा सकता है।

श्री राजीव कान्त जैन (श्रद्धेय डॉ. साहब के सुपौत्र)

हम हिंदी, बोलें हिन्दी

श्री राजीव कान्त व्यवसाय से इन्जीनियर हैं और इण्डियन रेलवे सर्विस ऑफ सिग्नल एण्ड टेलीकॉम इंजीनियर्स के सदस्य हैं, तथा सम्प्रति रेलवे विकास निगम लि. पुणे, में जनरल मैनेजर के पद पर नियुक्त हैं। बाल्यकाल से ही उनकी साहित्य में अभिरुचि रही है। यह उनका प्रथम कविता संकलन है जिसे संसदीय राजभाषा समिति द्वारा राजकोट में दिनांक ३ अक्टूबर २००१ को लोकार्पित किया गया था। यह काव्य संग्रह उनके सहकर्मियों में बहुत लोकप्रिय रहा। फिलहाल यह अनुपलब्ध है।

सोन चिरैया फिर चहकेगी

यह श्री राजीव कान्त का वृहत् काव्य संग्रह है जिसमें उपरोक्त रचनाएं भी सम्मिलित हैं। साहित्य मर्मज्ञों ने उसकी समीक्षा एवं सराहना की है। यदि कोई प्रकाशक इसे प्रकाशित करना चाहें तो वे श्री राजीव कान्त जैन से ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६००४ के पते पर सम्पर्क कर सकते हैं।

साहित्य के अतिरिक्त अपने टेक्निकल विषय पर भी उनके शोधपरक लेख टेक्निकल मैग्जीनों में प्रकाशित होते रहते हैं।

सौ. डॉ. अलका अग्रवाल (डॉ. साहब की सुपौत्री)

प्राकृत काव्य में लोक संस्कृति

डॉ. अलका ने संस्कृत-प्राकृत विषय में एम.ए. करने के उपरान्त प्राकृत के मुक्तक काव्य **वज्जालग्गम्** को अपनी शोध का विषय बनाया। इस विषय पर प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध पर उन्हें लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच.डी. की उपाधि प्रदान की गई। अपनी शोध के दौरान उन्होंने यह देखा कि इस मुक्तक काव्य में लोकोक्तियों का भण्डार है और यह लोक संस्कृति का परिचायक एक काव्य संकलन है। यह पुस्तक सम्प्रति प्रकाशनाधीन है।

डॉ. शशि कान्त (डॉ. साहब के ज्येष्ठ पुत्र)

The Hathigumpha Inscription of Kharavela and The Bhabru Edict of Asoka

Shashi Kant's study examines afresh these inscriptions - not just for their thematic similarity, but essentially for their crucial historicity. Going into their tenor and context, it is the first ever decipherment/ interpretation of the two rare documents, with the whole Jain and Buddhist traditions in the background. In its second enlarged edition a new section has been added bearing on the genesis of the Prakrit languages and the ancient Indian scripts.

It was first published in 1971. 2nd enlarged edition was published in 2000. It can be had from D.K. Printworld (P) Ltd., 'Sri Kunj', F-52, Bali Nagar, New Delhi-110015.

Political and Cultural History of Mid-North India

It deals with the history of the terrain around the confluence of the Ganga and Yamuna, conventionally known as the Vatsa Janapada with its base at Kaushambi, from the palaeolithic age to the 13th century A.D. It was presented as thesis for Ph.D. in the Department of Ancient Indian History and Archaeology at the Lucknow University in 1969 and was also approved for publication by the Indian Council of Historical Research. It was published in 1987, and has now run out of print.

In the meantime further research has appeared, and the presentation has been reviewed and recast elucidating certain crucial points. The 2nd revised edition is under publication.

- नलिन कान्त जैन

चित्र वीथिका

इतिहास-मनीषी विद्यावारिधि
डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

जन्म ६ फरवरी १९१२ ई.

निधन ११ जून १९८८ ई.

पारिवारिक

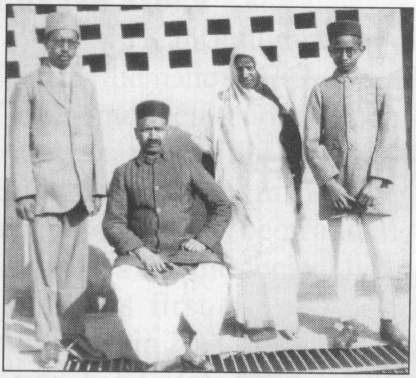

बायीं ओर खड़े हुये, पिता बा. पारस दास जैन, माता श्रीमती राम कटोरी जैन, अनुज अजित प्रसाद - मेरठ में, १९३३ में

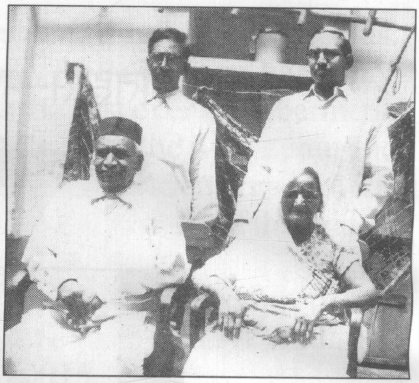

अपने माता-पिता और अनुज के साथ, लखनऊ में, जून १९५६ में

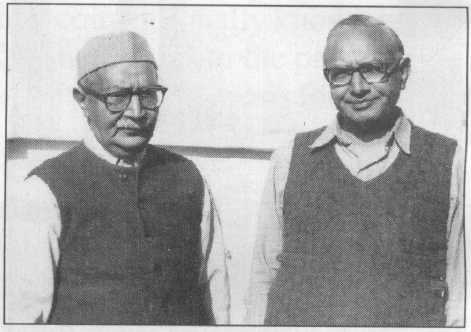

अनुज के साथ १९७६ में

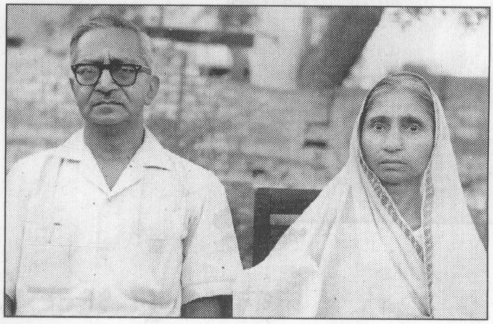

पत्नी श्रीमती अनन्त माला के साथ युवावस्था में

पत्नी के साथ वृद्धावस्था में

पुत्र-द्वय रमा कान्त और शशि कान्त के साथ षष्ठी-पूर्ति (६-२-१९७२) पर

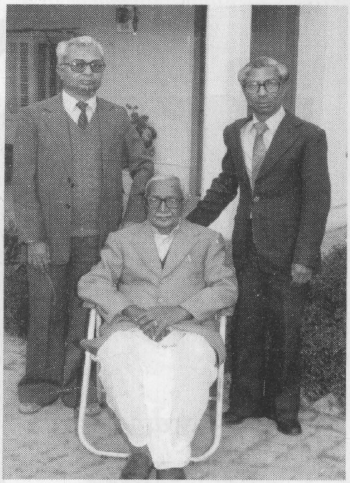

शशि कान्त और रमा कान्त के साथ अमृत महोत्सव (६-२-१९८७) पर

११-६-१९८९ को प्रथम पुण्यतिथि - जो सन्तति छोड़ गये -
बायें से - अंशु (पौत्र), शेफाली (पौत्री), शिरीष (पौत्र), रागिनी (पौत्रवधु),शशि कान्त (पुत्र), मंजरी (पुत्रवधु), रमा कान्त (पुत्र), आशा (पुत्रवधु), नलिन (पौत्र), मोहिनी (पौत्रवधु), राजीव (पौत्र), अलका (पौत्री), सन्दीप (पौत्र), इन्दु (पौत्री)
आगे खड़े हुये - प्रपौत्र शिशिर, अशीत व मलय, प्रपौत्री मेहा

साहित्य साधना

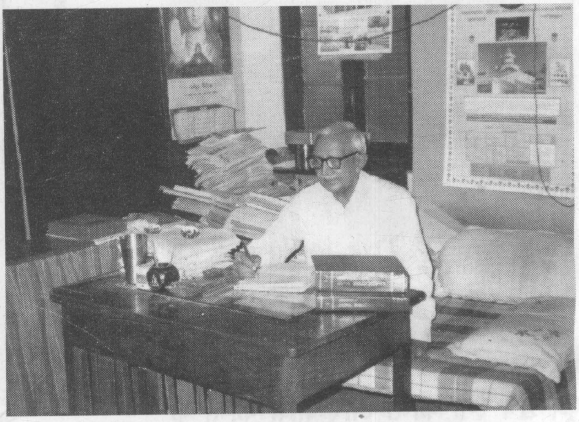

ड्राइंग रूम - अध्ययन कक्ष में लिखते-पढ़ते

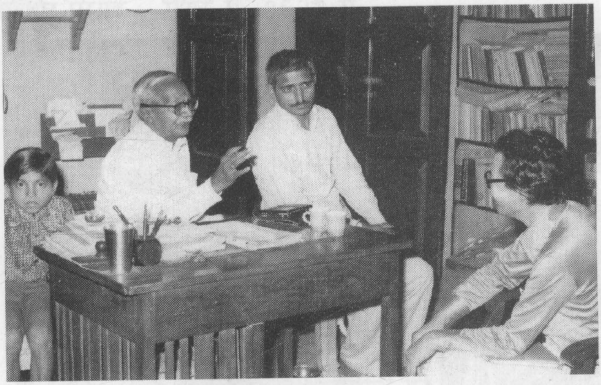

जपान से आये शोधकर्ता विद्वान के साथ चर्चा करते हुये (राज्य संग्रहालय लखनऊ के सहायक निदेशक डॉ. शैलेन्द्र रस्तोगी, साथ में)

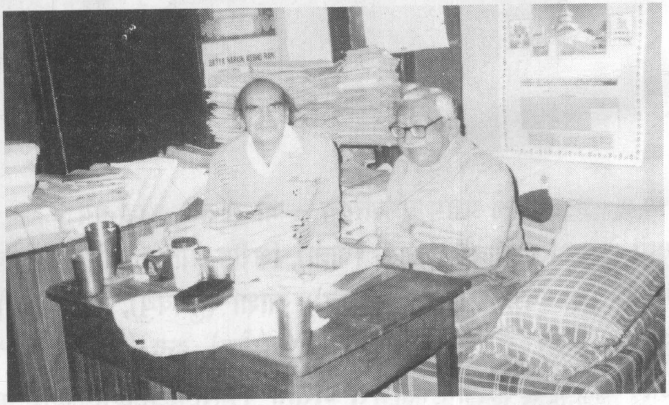

जयपुर से आये विद्वान डॉ. नरेन्द्र भानावत के साथ १-१-१९८८ को चर्चा-निमग्न

प्रोत्साहन और उद्‌बोधन

कान्त बाल केन्द्र के शिशुओं द्वारा बाल रवीन्द्रालय में १५-१-१९७२ को मकर संक्रान्ति कार्यक्रम में दर्शक - बायें से - डॉ. अमर पाल सिंह, डॉ. साहब, आकाशवाणी के सुप्रसिद्ध संगीतकार श्री गोरा सेन, श्री अजित प्रसाद जैन

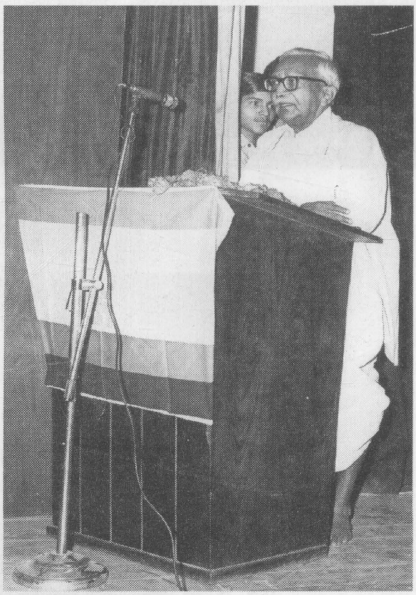

बाल रवीन्द्रालय में युवा जैन मिलन द्वारा महावीर जयन्ती पर १९८३ में आयोजित सभा को उद्‌बोधन करते हुये

सम्मानित और सम्मान-प्रदायी

१२-२-१९७९ को अनन्त-ज्योति विद्यापीठ के तत्वावधान में प्रथम विद्वत् सम्मान समारोह में डॉ. साहब को इतिहास-मनीषी अलंकरण से सम्मानित कर, अध्यक्ष डॉ. नी.पु. जोशी इतिहास-मंजूषा भेंट करते हुये (संयोग से यह उनके वैवाहिक जीवन की स्वर्ण जयन्ती भी थी)

प्रो. डॉ. रामकुमार दीक्षित को भी इतिहास-मनीषी अलंकरण से सम्मानित कर डॉ. जोशी उन्हें इतिहास-मंजूषा भेंट करते हुये

डॉ. साहब द्वारा आभार - आशीर्वाद

१२-२-१९८२ को द्वितीय विद्वत् अभिनन्दन समारोह में प्रो. चरण दास चटर्जी को इतिहास-मनीषी अलंकरण से सम्मानित कर श्रीफल भेंट करते हुये, साथ में डॉ. अमर पाल सिंह

१०-५-१९८७ को तृतीय विद्वत् अभिनन्दन समारोह में जस्टिस कैलाशनाथ गोयल को तिलक लगा कर अध्यक्ष पद के लिए आमंत्रित करते हुये

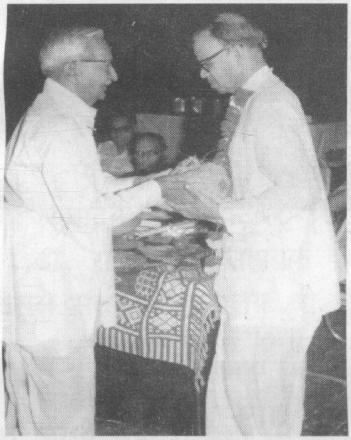

डॉ. नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी को इतिहास -मनीषी अलंकरण से सम्मानित करते हुये

प्रो. डॉ. बैज नाथ पुरी को इतिहास-मनीषी अलंकरण से सम्मानित करते हुये

सभा को अपना शुभ सन्देश और आशीर्वाद प्रदान करते हुये

श्रद्धांजलि सभा (२५-६-१९८८)

अनुज श्री अजित प्रसाद जैन
श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये

पुत्र रमा कान्त श्रद्धांजलि
अर्पित करते हुये

मित्रवर पत्रकार-शिरोमणि
श्री ज्ञान चंद जैन
श्रद्धांजलि अर्पित करते
हुये

अध्यक्ष पद्मभूषण अमृतलाल नागर
श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुये

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.
प्रतिवेदन वर्ष २०११-१२

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, का गठन सन् १९७६ ई. में २४वें तीर्थंकर भगवान वर्धमान महावीर स्वामी का २५००वां निर्वाण महोत्सव वर्ष मनाने के लिए राज्य सरकार द्वारा गठित श्री महावीर निर्वाण समिति, उ.प्र. की उत्तराधिकारी संस्था के रूप में जैन धर्म की सभी आम्नायों के महानुभावों के सहयोग से किया गया था तथा गठन के तुरन्त बाद ही उसे सोसायटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम के अन्तर्गत रजिस्टर्ड करा लिया गया था जिसका नियमानुसार नवीनीकरण यथासमय कराया जाता रहा है।

समिति का २०१०-११ का प्रतिवेदन **शोधादर्श-७३** (जुलाई २०११) के पृष्ठ ५०-५३ पर प्रकाशित है। यहां वर्ष २०११-१२ (१ अप्रैल, २०११ से ३१ मार्च, २०१२) का प्रतिवेदन प्रस्तुत है।

आलोच्य वर्ष में समिति की प्रवृत्तियों की प्रगति निम्नवत रही -

१. तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र शोध पुस्तकालय

पुस्तकालय की स्थापना वर्ष १९७६ की श्रुतपंचमी को की गई थी और इसका विधिवत उद्घाटन २३ अक्टूबर १९७६ को प्रदेश के तत्कालीन ग्राम्य विकास मंत्री माननीय डॉ. रामजीलाल सहायक के कर कमलों से सम्पन्न हुआ था। पुस्तकालय और उससे संलग्न वाचनालय श्री मुन्नेलाल कागजी जैन धर्मशाला ट्रस्ट, चारबाग, लखनऊ, द्वारा धर्मशाला के प्रथम तल पर उपलब्ध कराये गये एक कक्ष में प्रारंभ किया गया था, जो मई २००१ से धर्मशाला के द्वारा भूतल पर किराये पर उपलब्ध कराये गये दो कक्षो में चल रहा है।

समिति के सदस्यों के अतिरिक्त पुस्तकालय के सदस्य भी हैं जिनकी संख्या इस वर्ष ७७ रही। लखनऊ में चारबाग ही नहीं वरन् आसपास की कॉलोनियों के जैन परिवार तथा अनेक जैनेतर जिज्ञासु महानुभाव भी पुस्तकालय के सदस्य हैं। कुछ सदस्य लखनऊ के बाहर के भी हैं।

पुस्तकालय में जैन धर्म, दर्शन, संस्कृति आदि के अध्ययन हेतु जैन धर्म की सभी आम्नायों का साहित्य तथा शोधार्थियों द्वारा तुलनात्मक अध्ययन के लिए अन्य भारतीय धर्मों, दर्शनों एवं संस्कृति से सम्बन्धित महत्वपूर्ण साहित्य संग्रहीत है। अपने विशिष्ट संकलन के लिये इन विषयों के शोधार्थी पाठकों में यह पुस्तकालय विशेष लोकप्रिय है तथा लखनऊ व कानपुर विश्वविद्यालय से सम्बद्ध अनेक शोध छात्र इससे

लाभ उठाते हैं। सामान्य रुचि के पाठकों के लिए लौकिक एवं सामान्य ज्ञानवर्धक साहित्य भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है।

वर्ष २०११-१२ में पुस्तकालय में ३६६ पुस्तकों की वृद्धि हुई। राजा राममोहनराय पुस्तकालय कोलकाता से प्रदेश सरकार के शिक्षा विभाग (पुस्तकालय कोष्ठक) के माध्यम से पुस्तक अनुदान के रूप में ३१७ पुस्तकें प्राप्त हुईं। १० पुस्तकें श्री लूण करण नाहर जैन से, ६ पुस्तकें श्री पार्श्व कुमार जैन से तथा शेष ३६ पुस्तकें समीक्षा के बाद डॉ. शशि कान्त से भेंट स्वरूप प्राप्त हुई।

पुस्तकालय अनुदान के रूप में २ स्टील बुक रैक भी प्राप्त हुए। शोध पुस्तकालय के वाचनालय में प्रायः १०० धार्मिक, सामाजिक, सामयिक एवं शोध पत्र-पत्रिकाएं साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक, चातुर्मासिक, षट्मासिक और वार्षिक समिति की शोध-पत्रिका **शोधादर्श** के परिवर्तन में प्राप्त होती हैं।

पुस्तकालय-वाचनालय से प्रतिदिन प्रायः ५० पाठक लाभ उठाते हैं। पुस्तकालय-वाचनालय का समय प्रातः ६.०० से अपराह्न २.०० बजे तक है। शनिवार और सार्वजनिक अवकाश पर पुस्तकालय-वाचनालय बन्द रहता है।

पुस्तकालय-वाचनालय का कार्य पूर्ववत पुस्तकालय व्यवस्थापिका श्रीमती हेमा सक्सेना, एम.ए., द्वारा सुचारू रूप से देखा जाता रहा।

२. शोधादर्श

जैन विद्या की शोध को समर्पित चातुर्मासिक शोध-पत्रिका **शोधादर्श** का प्रकाशन फरवरी १९८६ में समिति द्वारा प्रथम अंक के प्रकाशन से प्रारंभ किया गया था। इसके आद्य-सम्पादक इतिहास-मनीषी विद्यावारिधि डॉ. ज्योति प्रसाद जैन थे। जून १९८८ में उनके स्वर्गवास के उपरान्त अंक ७ से प्रधान सम्पादक के दायित्व का निर्वहन डॉ. शशि कान्त ने किया। अंक ३० नवम्बर १९९६ से अंक ५६ तक प्रधान सम्पादक के कार्यभार का सम्पादन श्री अजित प्रसाद जैन ने किया। उनके निधन के उपरान्त अंक ५७ (नवम्बर २००५) से अंक ६७ (मार्च २००९) तक श्री रमा कान्त जैन ने इसके सम्पादन के दायित्व का निर्वहन किया।

अंक ६८ (नवम्बर २००९) से **शोधादर्श** के सम्पादन का दायित्व मेरे द्वारा निर्वहन किया जा रहा है।

इस वर्ष प्रकाशित अंक ७२, ७३ और ७४ में २४४ पृष्ठों में प्रकाशित ज्ञानप्रद व उपयोगी पठनीय सामग्री की प्रबुद्ध पाठक वृन्द द्वारा व्यापक सराहना की गई। पत्रिका की लोकप्रियता में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है तथा आज यह पत्रिका देश की उच्च स्तरीय धार्मिक-सांस्कृतिक शोध-पत्रिकाओं में अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

३. तीर्थंकर छात्र सहायता कोष

इस वर्ष आर्थिक दृष्टि से निर्बल ३० छात्र और २४ छात्राओं, अर्थात् ५४ विद्यार्थियों, को अध्ययन जारी रखने हेतु आंशिक सहायता प्रदान करने पर रु. ३०,१५७/- का व्यय किया गया। उप मंत्री श्री महेन्द्र प्रसाद जैन ने इस कार्य के सम्पादन में बहुमूल्य योगदान किया।

४. महावीर जन कल्याण निधि

इस वर्ष आठ असहाय महिलाओं को सहायता प्रदान करने पर रु. ४,१७५/-का व्यय किया गया।

५. अन्य प्रवृत्तियां

जिला विद्यालय निरीक्षक, लखनऊ, और पुस्तकालय प्रकोष्ठ उ.प्र. शासन, को वर्ष २०१०-११ के पुस्तकालय अनुदान हेतु निर्धारित प्रपत्र पर प्रार्थना पत्र यथासमय भेज दिया गया। वित्तीय वर्ष २०१०-११ (असेसमेन्ट वर्ष २०११-१२) का इन्कम टैक्स रिटर्न भी यथासमय जमा कर दिया गया। रजिस्ट्रार, सोसायटीज, उ.प्र., लखनऊ, को यथावश्यक सूचना प्रेषित की जाती रहीं।

पुस्तकालय भवन के किराये का एग्रीमेन्ट मई २००१ से १० वर्ष के लिए किया गया था। उस एग्रीमेन्ट को मई २०११ से आगामी १० वर्ष के लिए बढ़वा लिया गया है।

६ जून २०११ को पुस्तकालय के स्थापना दिवस और श्रुतपंचमी पर्व पर गोष्ठी की गई।

संस्थापक-महामंत्री स्मृतिशेष श्री अजित प्रसाद जैन का २५ जून २०११ को उनकी पुण्य तिथि पर और १ जनवरी २०१२ को उनकी जन्म-जयंती पर स्मरण किया गया।

६. लेखे की स्थिति

समिति के लेखों का आडिट इस वर्ष भी श्री आलोक जिन्दल, चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट, द्वारा किया गया और उनके माध्यम से आयकर कार्यालय को आवश्यक विवरणी यथासमय प्रस्तुत की जाएगी।

शासन से प्राप्त उपर्युक्त पुस्तक अनुदान तथा कतिपय दातारों से भेंट स्वरूप प्राप्त साहित्य के अतिरिक्त कुल प्राप्तियां वर्ष में रु. १,५५,७२८.२३ पैसे रहीं (इसमें रु. २००/- पुस्तकालय सिक्योरिटी राशि भी है जो रिफन्डेबिल है) तथा व्यय रु. ३,१७,२४१.१० हुआ। प्राप्ति-व्यय की विवरण तालिका संलग्न है। इसमें पुस्तकालय-वाचनालय का मासिक किराया सम्मिलित नहीं है क्योंकि उसका समायोजन श्री मुन्नेलाल कागजी जैन धर्मशाला ट्रस्ट को दी गई अग्रिम धनराशि से होता है।

मई २००१ से भवन का किराया रु. ८००.०० मासिक की दर से रु. १,००,०००.०० की अग्रिम राशि से समायोजित किया जाता रहा है। अप्रैल २०११ तक का किराया समायोजित करने के बाद रु. ४०००.०० की राशि शेष रही। पुनः मई २०११ से १० वर्ष के किराये के अग्रिम के रूप में रु. २,००,०००.०० की धनराशि मुन्नेलाल कागजी जैन धर्मशाला ट्रस्ट को दी गई है। मासिक किराया मई २०११ से रु. १६००/- हो गया। तदनुसार वर्ष २०११-१२ में रु. ८००+१७,६००, तदनुसार कुल रु. १८,४००/- की धनराशि मासिक किराये के रूप में समायोजित की गई।

७. आजीवन सदस्यता

सभी संस्थाओं द्वारा अपने सदस्यता शुल्क में वृद्धि की गई है। वर्तमान परिस्थिति में यह निश्चय किया गया कि इस समिति का आजीवन सदस्यता शुल्क भी अल्पतम रु. ५,१००/- निर्धारित किया जाये।

८. चिर वियोग

इस वर्ष में समिति के सदस्यों से सम्बन्धित ३ विशेष रूप से दुःखद घटनायें घटित हुईं। समिति के अध्यक्ष श्री लूणकरण नाहर जैन की पत्नी के अनुज श्री डूंगरमल वोहरा का चेन्नई में २ जनवरी २०१२ को आकस्मिक निधन हो गया। २६ जनवरी को समिति के आजीवन सदस्य श्री निर्मल कुमार जैन सेठी के कनिष्ठ पुत्र श्री पारस जैन का असमय निधन हो गया। ३१ मार्च को हमारी समिति के उपाध्यक्ष श्री नरेश चन्द्र जैन का दीर्घकालीन अस्वस्थता के बाद निधन हो गया। इस त्रासदी से समिति के सभी सदस्य शोकातुर हुये।

अन्तिम

विगत वर्ष २०११-१२ की सभी प्रवृत्तियों के सम्पादन में मुझे समिति के अध्यक्ष श्री लूणकरण नाहर जैन का तथा प्रबन्ध समिति के सभी माननीय सदस्यों का, विशेष रूप से श्री महेन्द्र प्रसाद जैन का, सक्रिय सहयोग एवं मार्गदर्शन निरंतर उपलब्ध रहा। **शोधादर्श** का सम्पादन डॉ. शशि कान्त के मार्गदर्शन में और सह-सम्पादक श्री सन्दीप कान्त जैन, श्री अंशु जैन 'अमर' व सौ. डॉ. अलका अग्रवाल के सहयोग से व्यवस्थित किया जाता रहा। सभी क्रियाकलापों में समिति के माननीय सदस्यों का सौहार्दपूर्ण सहयोग प्राप्त रहा। इन सभी महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त करना मेरा व्यक्तिगत और नैतिक दायित्व है।

नलिन कान्त जैन
महामंत्री

TIRTHANKAR MAHAVIR SMRITI KENDRA SAMITI, U. P.

Statement of Receipts & Payments For The Year Ending 31st March, 2012

RECEIPTS		Rs. P.	Payments		Rs. P.
Balance b/d:			Research Library:		
F.D.Rs.	21,76,073.00		Salary Libr, Asstt,	35,000.00	
Savings Bank	71,450.97		Salary Cleaner	2,320.00	
Cash in Hand	4,959.10	22,52,483.07	Contingencies	260.00	37,580.00
Research Library:			Shodhadarsh Magazine:		
Security Deposit	200.00		Stationery & Prtg.	36,780.00	
Subscription	940.00		Dispatch Postage	4,610.00	41,390.00
Misc. Receipts	350.00	1,490.00			
			Stationery		896.00
Shodhadarsh Magazine:			Postage		643.10
Subseription	2170.00		M.J.K. Nidhi Expenses		4,175.00
Donation	5717.00	7,887.00	T.C.S. Kosh Scholarship Exp.		30.157.00
			I.T. Counsel's & Audit Fee		1,500.00
Misc. Receipts		845.00	Advance Rent		2,00,000.00
			Excess Interest Refunded		900.00
Interest on FDRs		1,37,290.23	Balance c/f:		
Interest on Savings Bank		6,756.00	F.D.Rs.	20,26,378.00	
Seholarship Amount Returned		1,460.00	Savings Bank	56,107.20	
			Cash In Hand	8,485.00	20,90,970.20
	Total	24,08,211.30		Total	24,08,211.30

Compiled on the basis of information and explanations furnished.

For Avanish K. Rastogi & Associates
Chartered Accountants
Alok Jindal
Partner

पुनीत स्मरण

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

श्रद्धेय डॉक्टर साहब की जन्म-शताब्दी के उपलक्ष में दिनांक ६ फरवरी २०१२ को स्मरण गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसका विवरण इसी अंक में प्रकाशित है।

पुनः ११ जून को उनकी २४वीं पुण्यतिथि पर स्मरण गोष्ठी का आयोजन किया गया। उसमें यह निश्चय किया गया कि उनकी स्मृति में प्रकाश्य **शोधादर्श** के विशेषांक का लोकार्पण, उनके प्रिय विषय 'इतिहास की उपयोगिता' पर विचार गोष्ठी के साथ, २१ जुलाई को 'जयशंकर प्रसाद सभागार' में सम्पन्न किया जाय।

श्री अजित प्रसाद जैन

दिनांक १ जनवरी को **ज्योति निकुंज**, चारबाग, लखनऊ में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, की साधारण सभा की बैठक श्री लूणकरण नाहर जैन की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। समिति के संस्थापक-महामंत्री श्रद्धेय श्री अजित प्रसाद जैन जी के चित्र पर अध्यक्ष द्वारा माल्यार्पण तथा अन्य उपस्थित सदस्यों द्वारा पुष्पांजलि अर्पण करके उनके ६५वें जन्मदिन पर उनका पुनीत स्मरण किया गया। श्री अंशु जैन 'अमर' ने उनके जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व पर विशद प्रकाश डाला। डॉ. विनय कुमार जैन ने बताया कि श्री अजित प्रसाद जैन समिति के संस्थापक मंत्री थे और सामाजिक कार्यों में रुचि लेते थे। **शोधादर्श** के सम्पादन में उसे शोध के साथ-साथ उन्होंने सामाजिक चिन्तन की पत्रिका का स्तर दिया। इतने बड़े विद्वान होने के बावजूद उनमें दम्भ नहीं था। श्री राकेश जैन ने कहा कि वह निर्भीक और सत्यवान पत्रकार थे। डॉ. शशि कान्त ने अपनी भावना व्यक्त करते हुये कहा कि यद्यपि चाचा जी एक नैष्ठिक श्रावक थे, वे स्वतन्त्र चिन्तन का स्वागत करते थे और सामाजिक कुरीतियों पर खुलकर प्रहार करते थे। अन्त में, अध्यक्ष श्री लूण करण नाहर जैन ने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की और भजन चौबीस भगवान की स्तुति -

भज लो चौबीसी जिनराज, धरम की जहाज,
तीर्थंकर प्यारा, जिनका है हमें सहारा।

प्रस्तुत कर वातावरण को रससिक्त किया।

पुनः दिनांक २५ जून को प्रबन्ध समिति की बैठक में श्रद्धेय श्री अजित प्रसाद जैन की ७वीं पुण्य तिथि पर उनका पुनीत स्मरण करते हुए उनके चित्र पर अध्यक्ष द्वारा माल्यार्पण किया गया और सभी सदस्यों द्वारा पुष्पांजलि अर्पित की गई। श्री अंशु जैन 'अमर' ने श्रद्धेय अजित प्रसाद जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर समुचित प्रकाश डाला और उनके निष्पक्ष एवं जागरूक पत्रकार के स्वरूप को रेखांकित किया। डॉ. विनय कुमार जैन ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुये बताया कि श्री अजित प्रसाद अपने विचार बेबाक तरीके से प्रस्तुत करते थे परन्तु मर्यादित भाषा का प्रयोग करते थे। श्री धनेन्द्र कुमार जैन ने कहा कि श्री अजित प्रसाद जी निर्भीक पत्रकार थे और सही बात कहने में संकोच नहीं करते थे। डॉ. शशि कान्त ने बताया कि श्रद्धेय चाचा जी यद्यपि नैष्ठिक श्रावक थे तथापि शोध के प्रति सजग थे। उनसे धार्मिक-सांस्कृतिक विषयों पर प्रायः चर्चा होती थी और वे विषय को अन्वेषणात्मक दृष्टि से देखते थे, इसी के परिणाम स्वरूप उन्होंने "क्या पहला विवाह विधवा विवाह नहीं था" और "कालीनोस" शीर्षक लेख **शोधादर्श** में लिखे। अन्त में अध्यक्ष श्री लूण करण नाहर जैन ने अपनी काव्यांजलि प्रस्तुत की -

तुम्हें मरहूम कहता कौन है, तुम जिन्दो में जिन्दा हो।
तुम्हारी नेकियां बाकी हैं, तुम्हारी खूबियां बाकी हैं।।

श्री रमा कान्त जैन

दिनांक १० फरवरी को श्री रमा कान्त जैन की ७६वीं जन्म जयंती पर **ज्योति निकुंज**, चारबाग, लखनऊ में उनके परिवार जनों ने स्मृति गोष्ठी का आयोजन किया। इस अवसर पर स्मृतिशेष रमा कान्त जी के साहित्यकार मित्र श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध' के संस्मरणात्मक लेख 'व्यंग्कार कवि रमा कान्त जैन' का वाचन किया गया और रमा कान्त जी द्वारा रचित सरस्वती वन्दना का सामूहिक गान किया गया। प्रारंभ में श्री रमा कान्त के चित्र पर माल्यार्पण तथा पुष्पांजलि अर्पण किया गया।

पुनः दिनांक २६ मई को श्री रमा कान्त की ३री पुण्यतिथि पर श्रुतपंचमी पर्व एवं शोध पुस्तकालय स्थापना दिवस के उपलक्ष में आयोजित तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति की सभा में उनका पुनीत स्मरण किया गया।

- नलिन कान्त जैन

व्यंग्यकार कवि रमा कान्त जैन

- श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध'

किसी ने ठीक ही कहा है "रे मन ये दो दिन का मेला रहेगा।" वस्तुतः यह संसार एक विराट मेला है, जहां भीड़-भाड़ में अगणित लोगों के दर्शन होते हैं और कितने ही अतीत के नेपथ्य में तिरोहित हो जाते हैं और उनकी स्मृति भी धूमिल हो जाती है परन्तु कुछ ऐसी महान विभूति होते हैं जो अपनी अमिट छाप हृदयस्थल पर छोड़ जाते हैं, ऐसी ही एक महान विभूति थे मेरे मित्र कविवर रमा कान्त जैन जी।

रमा कान्त जैन का जन्म लखनऊ के एक साहित्यानुरागी परिवार में १० फरवरी सन् १९३६ ई. को हुआ था। उनके परिवार का परिचय मैं **शोधादर्श ७४** में प्रकाशित लेख 'लखनऊ के जैन साहित्यकार' में दे चुका हूं। उनके पिता स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन इतिहास-मर्मज्ञ लेखक व कवि थे, रमा कान्त जी के चाचा स्वं. श्री अजित प्रसाद जैन **शोधादर्श** के सम्पादक व लेखक रहे। रमा कान्त जी के अग्रज डॉ. शशि कान्त जी हिन्दी व अंग्रेजी के विद्वान लेखक व सम्पादक हैं। इस परिवार के अन्य पुत्र व पुत्रियां भी साहित्य प्रेमी हैं। रमा कान्त जैन जी से मेरा परिचय कवि गोष्ठियों के माध्यम से हुआ। मुझे अनेक बार इनके निवास स्थान पर जाने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ और कई बार कवि गोष्ठियों व काव्य समारोहों में भाग लेने वे मेरे घर भी आये।

रमा कान्त जी सौम्य स्वभाव के धनी और हंसमुख व्यक्ति थे। किसी भी बात को व्यंग्य में परिवर्तित कर देना उनके बायें हाथ का खेल था। बात करते-करते ही आशुकवियों की भांति त्वरित काव्य-रचना करने में वह बहुत सिद्ध-हस्त थे। मुझे स्मरण आ रहा है वह दिन जब मैं अपनी प्रकाशित कृतियां **'घरवाली'** और **"इन्द्र धनुष के रंग"** लेकर उनके आवास पर गया था। उन्होंने पुस्तकें हाथ में लीं और उन्हें उलट-पुलट कर देखा और एक कागज ले तत्काल ही एक मुक्तक लिख दिया -

हास्य व्यंग्य की मृदुमय ध्वनि जो
कानों में मधुरस घोल रही है।
वह और नहीं कोई लगता
'घरवाली' इनकी बोल रही है।।

कहते ये अपने को 'अबोध'
लेकिन क्या ऐसा लगता है।
इनकी लेखनी विधा हर में
रंग इन्द्र धनुष के घोल रही है।

रमा कान्त जी **'आहत मन का धन'** पुस्तक के लोकार्पण समारोह में मेरे घर आये थे। सभाकक्ष में लगे मेरी पत्नी स्व. चन्द्रा जड़िया के चित्र की ओर उन्होंने देखा और एक कागज जेब से निकाल लिख दिया -

यह मण्डप सजा है जिस चन्द्रा की याद में,
वह तो सजी है वहाँ निरभ्र आकाश में।
स्मृति बसी हुई है दयानन्द के हृदयाकाश में
श्रद्धा सुमन अर्पित करता रमा कान्त उस दिवंगत की याद में।।

मैं पूर्व में ही कह चुका हूं कि रमा कान्त जी अच्छे व्यंग्यकार थे। उनकी अनेक रचनायें व्यंग्य का पुट लिये हुये हैं। एक कवि गोष्ठी में पेशे से इंजीनियर एक कवि जब श्रृंगार रस की कविता पढ़कर मंच से हटे और उसके तुरन्त बाद ही मंच पर कविता पाठ करने रमा कान्त जी आये तो आते ही आते कहा -

जब से इंजीनियर मिजाजे इश्क हो गये।
तब से उनसे पुल बनवाने रिस्क हो गये।।

इसी प्रकार एक कविता में वह सरकार पर व्यंग्य करते हुये कहते हैं -

सरक-सरक कर जो चले कहलाती सरकार।

साहित्य में शब्दों की व्यंग्य भरी परिभाषा उनकी अपनी एक आविष्कृत विधा है, जैसे -

जब मन न हो तो उसे नमन कहते हैं।

इसी प्रकार वह एक अन्य स्थान पर कहते हैं -

विद्वत् जन की संगति विसंगति कहलाती है।
क्योंकि उसमें अहम् ईर्ष्या की गंध आती है।

निर्वाचन-प्रत्याशी नेताओं पर व्यंग्य करते हुये वह कहते हैं -

वे कहते हैं उन्हें मत दो।
तो उन्हीं की मान लो, मत दो।

काव्य के क्षेत्र में रमा कान्त जी ने सामाजिक व सामयिक क्षणिकायें, मुक्तक व दोहे आदि लिखे। एक सामाजिक क्षणिका दृष्टव्य है -

संत्रास से जी रहा आज आदमी।
जिधर देखिये हादसों की है गहमा-गहमी।
बीत जाये यह पल कुशल से
मना रहा हर पल हर आदमी।

रमा कान्त जैन बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे। वह जहाँ एक ओर काव्य-रचना में निष्णात थे वहीं दूसरी ओर गद्य लेखन में भी सिद्ध-हस्त थे। वर्ष २००३ ई. में मुझे उनकी एक कृति **गिलास आधा भरा है** समीक्षार्थ प्राप्त हुई थी। इसके कई आलेखों में चुटीले व्यंग्य किये गये हैं। रमा कान्त जी ने अनेक धार्मिक व सामाजिक तथा साहित्यक विषयों पर भी लेख लिखे हैं। **गुरुगुण-कीर्तन** शीर्षक से तो **शोधादर्श** चातुर्मासिक में वह एक स्थायी स्तम्भ ही चलाते रहे। वह अच्छे समीक्षक भी थे। यह सब होते हुये भी उनके साहित्य की आत्मा व्यंग्य ही रही है। यद्यपि रमा कान्त जी २६ मई २००६ को हम से दैहिक रूप से बिछुड़ गये, परन्तु अपने साहित्य के माध्यम से वह युग-युग अमर रहेंगे।

चन्द्रा मण्डप, ३७०/२७, हाता नूरबेग,
संगमलाल बीथिका, सआदतगंज, लखनऊ-२२६००३

साहित्य सत्कार

आत्मकल्याण के दस चरण : ले. श्रीमती इन्दु कान्त जैन; प्र. श्रुतसेवा निधि न्यास, फिरोजाबाद; जनवरी २०१२; पृ. ५६+४

श्रीमती इन्दु कान्त जैन की पुस्तक **आत्मकल्याण के दस चरण** एक समाजोपयोगी ग्रंथ है। लेखिका ने 'दशकं धर्म लक्षणम्' को इस पुस्तक में सुन्दर तथा सरस भाषा में सुन्दर दृष्टान्तों सहित व्याख्यायित किया है।

वर्तमान समाज में मानव सुख-समृद्धि प्राप्त करने हेतु भौतिक संसाधनों के पीछे दौड़ रहा है परन्तु उसे सुख प्राप्त नहीं हो रहा है क्योंकि वास्तविक सुख प्राप्ति हेतु उसे जो करना चाहिये उसे वह नहीं कर रहा है। वास्तविक सुख उसकी आत्मा में है जिसे वह जान नहीं पाया है।

धर्म के दस लक्षण **मनुस्मृति** के अनुसार इस प्रकार हैं :

धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमूऽक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्।।

इसी को अन्यान्य धर्मों ने अपने-अपने ढंग से परिभाषित किया है। बौद्ध, जैन तथा सिख पंथ तो सत्य सनातन धर्म की ही शाखायें हैं और उन सब में एकरूपता है। इन सब में हिन्दू विधि-विधान ही लागू हैं। इन्दु जी ने पुस्तक के मंगलाचरण में दस संकल्पों की अवधारणा में लिखा है :

उत्तम छिमा, मारदव, आरजव भाव हैं,
सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव हैं,
आकिंचन ब्रह्मचर्य धरम दश सार हैं,
चहुंगति दुखतै काढ़ि मुकति करतार हैं।।

धर्म के इन दश चरणों को उत्तम क्षमा धर्म, उत्तम मार्दव धर्म, उत्तम आर्जव धर्म, उत्तम शौच धर्म, उत्तम सत्य धर्म, उत्तम संयम धर्म, उत्तम तप धर्म, उत्तम त्याग धर्म, उत्तम आकिंचन्य धर्म और उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म के अध्यायों में विभक्त करके रोचक शैली में व्याख्यायित किया गया है।

भारत के साधु-सन्तों ने अपने-अपने शब्दों में अपने-अपने ढंग से इन लक्षणों की व्याख्या की है परन्तु आज हम उन्हें भूल गये हैं। इन्दु जी संस्कार शील कथाकार हैं। जैन धर्म की दीक्षा उन्हें बचपन से अपने परिवार में मिली है। इस पुस्तक में उन्होंने अपने कथन की पुष्टि में जिन प्रसंगों का वर्णन किया है उनमें कथा का आनन्द

है। साथ ही उनसे आध्यात्मिक शिक्षा भी मिलती है। यह उसी प्रकार है जैसे 'दया धरम का मूल है। नरक मूल अभिमान', 'बिन संतोष न काम नसाही। आत्म अनुभव सुख सुप्रकासा।' आदि।

मैं इस पुस्तक के लेखन एवं प्रकाशन हेतु श्रीमती इन्दु कान्त जैन को हार्दिक बधाई देता हूँ और कामना करता हूँ कि उनकी लेखनी सतत गतिशील रहकर साहित्य का भण्डार भरती रहे।

- साहित्य-भूषण डॉ. परमानन्द जड़िया

जड़िया निवास, १८६/५१, खत्री टोला, मशकगंज, लखनऊ-२२६०१८

जैन धर्म : प्राचीनतम जीवित धर्म : मूल ले. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन, अनुवादक श्री पुलक गोयल; प्र. धर्मोदय साहित्य प्रकाशन, बाहुबलि कॉलोनी, सागर; अगस्त २०११; पृष्ठ ५६; मूल्य रु. २०/-

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ने The Jaina Cultural Research Society, वाराणसी, के आग्रह पर **Jainism, The Oldest Living Religion** शीर्षक पुस्तिका का प्रणयन किया था और १६५१ में उस संस्था द्वारा उसका प्रकाशन किया गया था। कालान्तर में वह संस्था पार्श्वनाथ विद्यापीठ में विलीन हो गई और पार्श्वनाथ विद्यापीठ ने १६८८ में उसका द्वितीय संस्करण प्रकाशित किया। इस पुस्तक का गुजराती भाषा में सन् १६७६ में अहमदाबाद के श्री हेमन्त जे. शाह ने **जैन धर्म सहुथी वधु प्राचीन अनेजुवन्त धर्म** के नाम से अनुवाद किया था। श्री पुलक गोयल ने उसका हिन्दी में अनुवाद किया है जो **जैनधर्म : प्राचीनतम जीवित धर्म** के नाम से अगस्त २०११ में धर्मोदय साहित्य प्रकाशन, बाहुबलि कॉलोनी, सागर, द्वारा प्रकाशित किया गया। इस पुस्तिका के प्रणयन का मूल उद्देश्य जैन धर्म के सम्बन्ध में सामान्य प्रचलित धारणाओं का निरसन करके जैन धर्म के वास्तविक प्राचीनत्व को विभिन्न विदेशी और देशी विद्वान मनीषियों के खोजपूर्ण अभिमतों के माध्यम से प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत करना था। २०वीं सदी के मध्य तक यह शोध हो चुकी थी कि जैन धर्म के अनुश्रुतिगम्य व पौराणिक कथानकों में ऐसी सामग्री विद्यमान है जो यह सूचित करती है कि भारत में प्रचलित विभिन्न धार्मिक परम्पराओं में जैन धर्म का मौलिक और प्राचीनतम स्थान है।

प्रस्तुत पुस्तिका में सरल सहज शैली में विषय का निरूपण इस प्रकार किया गया है कि पाठक की जिज्ञासा जाग्रत हो। हिन्दी में अनुवाद प्रस्तुत करने के लिए श्री पुलक

गोयल जो श्री दिगम्बर जैन आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर, में वरिष्ठ शोध अध्येता हैं, साधुवाद के पात्र हैं।

स्मृतिका : संचयन व सम्पादन - श्री नलिन कान्त जैन; प्र. ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट, ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६००४; ६ फरवरी २०१२; पृ.१६

स्मृतिका के रूप में प्रस्तुत पुस्तिका श्रद्धेय इतिहास-मनीषी विद्यावारिधि डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्मशती के उपलक्ष में ६ फरवरी २०१२ को उनके जन्म दिवस पर प्रकाशित की गई थी और जन्मशती पर आयोजित स्मरण-गोष्ठी में इसका वितरण किया गया था।

डॉ. साहब के सुपुत्र डॉ. शशि कान्त के विनय एवं श्रद्धावनत निवेदन, उनके पौत्र श्री अंशु जैन 'अमर' द्वारा उनके जीवन एवं कृतित्व का संक्षिप्त परिचय और डॉ. साहब की लेखनी से प्रसूत **इतिहास की उपयोगिता, भारतीय इतिहास और जैन धर्म, जाति और धर्म,** तथा Political Thought in Pre-Muslim India विषयक मार्गदर्शक चिन्तन प्रसून इस पुस्तिका में संकलित हैं। आकाशवाणी लखनऊ से २४ जनवरी १९८८ को **नदिया एक, घाट बहुतेरे** कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रसारित जैन धर्म पर डॉ. साहब की वार्ता भी समाहित है। डॉ. साहब की सुपौत्री श्रीमती इन्दु कान्त जैन की कृति **आत्मकल्याण के दस चरण** का परिचय भी इसमें दिया गया है।

इस लघु पुस्तिका का सुरुचिपूर्ण एवं सुगठित सम्पादन व प्रस्तुतिकरण करने के लिए श्री नलिन कान्त जैन बधाई के पात्र हैं।

- सौ. डॉ. अलका अग्रवाल

'अनुभूति', ७, राधा एन्क्लेव, झांसी रोड, ललितपुर-२८४००३

योग मार्गणा (षट्खण्डागम धवला टीका के आधार से) : ले. श्री किशनचंद जैन 'भाई साहब', सं. श्री महावीर प्रसाद जैन, स्वतंत्रता सेनानी; प्र. श्री दिगम्बर जैन साहित्य प्रकाशन समिति, ३३२, स्कीम नं. १०, अलवर-३०१००१; २८ दिसम्बर २०११; पृ. १६+३०२

लेखक पं. किशनचंद जैन ने इस ग्रन्थ के अंतर्निहित भाव को अपनी ६-पृष्ठीय प्रस्तावना में सूचित किया है। विषय जैन दर्शन के गूढ़ ज्ञान से सम्बन्धित है। दर्शन के जिज्ञासुओं के लिए यह ग्रन्थ उपयोगी है। अध्ययन ५ अध्यायों में प्रस्तुत है। अध्याय १ में मंगलाचरण स्वरूप स्तुति दी गई हैं। अध्याय २ में योग का स्वरूप व

भेद-प्रभेद बताये गये हैं। अध्याय ३ में योग मार्गणा में आलापों का कथन है। अध्याय ४ में २० प्रमुख मार्गणाओं का सामान्य स्वरूप बताया गया है। अध्याय ५ में योग स्थान का स्वरूप और प्रकार बताये गये हैं।

सामान्य पाठक के लिए सम्पादक महोदय का वक्तव्य रुचिकर एवं महत्वपूर्ण है जिसमें श्री महावीर प्रसाद जी ने अपना जीवन परिचय भी दिया है। उनका जन्म १० जुलाई १९२२ को हुआ था और उनके पिता एक पटवारी थे जिनको मात्र ७/- मासिक वेतन मिलता था। श्री महावीर प्रसाद जी युवावस्था में क्रान्तिकारी गतिविधियों में भाग लेने लगे और १९४२ के आन्दोलन में उन्हें सजा भी हुई। घर की परिस्थिति को देखते हुये उन्होंने राजनीति छोड़ दी और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद वह पुलिस उप निरीक्षक के पद पर सरकारी नौकरी में नियुक्त हो गये तथा १९८२ तक पुलिस सेवा में रहे। पुलिस सेवा के दौरान १९७४ की एक घटना का उल्लेख उन्होंने किया है जो दिलचस्प है।

जब वह ब्यावर में थानेदार थे तीन कुन्टल अफीम बदमाशों से पकड़ी थी और चूंकि यह अफीम तत्कालीन भैरव सिंह मिनिस्ट्री में समजान खां नाम के मिनिस्टर की थी, उन्हें इस सुकृत्य का पारितोषिक यह दिया गया था कि उनका स्थानान्तरण थाने से हटाकर पुलिस ट्रेनिंग स्कूल में कर दिया गया। यह उनकी खुशकिस्मती थी कि उन्हें और कोई दण्ड नहीं दिया गया। इस सन्दर्भ में मुझे अपने मित्र कोमल सिंह सिसोदिया की याद आ गई। वह बांदा जिले के एक थाने में थानेदार नियुक्त थे। वह थाना तत्कालीन मुख्य मंत्री चन्द्रभानु गुप्त के मंत्रिमण्डल में एक कद्दावर मंत्री उदित नारायण शर्मा के निवास एवं निर्वाचन क्षेत्र में था। शर्मा जी की ख्याति एक 'क्रिमनल लाइयर' की थी और उनके परिवार के सभी सदस्य आपराधिक कार्यों में संलिप्त रहते थे। कोमल सिंह अपने कर्तव्य के प्रति निष्ठावान थे और एक दिन उन्होंने मंत्री जी के भतीजे को रंगे हाथों पकड़ लिया और हवालात में बन्द कर दिया। अब एक तूफान खड़ा हो गया। मंत्री जी ने अपने प्रभाव से जिले भर के बाजार बन्द करवा दिये। मुख्यमंत्री जी का दौरा हुआ। मंत्री जी के आक्रोश पर कोमल सिंह को तत्काल निलंबित कर दिया गया। पुलिस अधीक्षक को असलियत मालूम थी, उन्होंने कोमल सिंह को बुलाया और कहा कि आपका कोई नुकसान नहीं होगा, निलम्बन शीघ्र ही समाप्त हो जायेगा और आपका स्थानान्तरण दूसरे जिले में कर दिया जायेगा। कोमल सिंह स्वयं भी उस बदनाम थाने से हटना ही चाहते थे। मंत्रियों की इस प्रकार की करतूतों के कुछ और दृष्टान्त भी हैं।

१९८२ में राज्य सेवा से मुक्त होने के बाद श्री महावीर प्रसाद जी ने जैन दार्शनिक ग्रन्थों का अध्ययन किया और श्री दिगम्बर जैन साहित्य प्रकाशन समिति की स्थापना करके १८ ग्रन्थों का प्रकाशन भी किया। ९० वर्ष की आयु में प्रकाशित उनका यह अंतिम ग्रन्थ है। जैन दर्शन के प्रति अनुराग के लिए वह साधुवाद के पात्र है।

जैन तत्त्व दर्शन : ले. डॉ. श्री राम मुनिजी म. 'निर्भय'; प्र. लूणकरण कमलादेवी चेरिटेबुल ट्रस्ट, ५१४, राजेन्द्र नगर, लखनऊ-२२६००४; २०११; पृ. १६५

अपनी प्रस्तावना में उपाध्याय श्री रमेश मुनि जी शास्त्री ने यह स्पष्ट किया है कि इस पुस्तक में लेखक ने जैन विद्या के कतिपय मुख्य तथ्यों को साधार और साधिकार अभिव्यक्त किया है। लेखक डॉ. श्री राम मुनि जी 'निर्भय' श्रमणसंघीय सलाहकार, सिद्धान्ताचार्य और प्रवचनकार, गीतकार तथा कथाकार हैं। उनका जन्म १५.१०.१९४५ को हरियाणा के बुटाना ग्राम के एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ था। अपने ६ भाईयों और ३ बहनों में वह सबसे छोटे थे। २५.४.१९६६ को श्री सुदर्शन लाल महाराज द्वारा जैन भगवती दीक्षा में दीक्षित हो गये थे। उन्होंने तीन विषयों में एम.ए. करके पी-एच.डी. की डिग्री प्राप्त की, और २५ पुस्तकें लिखी। आचार्य शिव मुनि जी के प्रति वह समर्पित हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में ५० प्रकरणों के अन्तर्गत जैन तत्त्व दर्शन से सम्बन्धित विभिन्न विषयों का सरल भाषा में निरूपण किया गया है ताकि सामान्य जिज्ञासु उन्हें सरल भाषा में समझ सकें। नित्य भावना और वैराग्य भावना को पद्यबद्ध करके प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक को प्रकाशित करने का श्रेय श्री लूणकरण नाहर जैन को है जिसके लिए वे साधुवाद के पात्र हैं।

जैन धर्म में प्रतिक्रमण, स्वरूप एवं समीक्षा : ले. डॉ. स्वयंप्रभ पाटील; प्र. कुन्द भारती प्रकाशन, शुद्धात्म सदन, नेमिनाथ नगर, विश्राम बाग, सांगली-४१६४१५; २०१२; पृ. २८०+३२; मूल्य रु. १५०/-

लेखिका डॉ. स्वयंप्रभा पिरगौड़ा पाटील, जैनदर्शन शास्त्री हैं। लगभग १६६ ग्रन्थों का सन्दर्भ दिया गया है जो ग्रन्थ की प्रामाणिकता को सूचित करता है। दिगम्बर और श्वेताम्बर उभय सम्प्रदायों के साहित्य का अध्ययन किया गया है।

लेखिका ने कन्नड़ भाषा में मैसूर विश्वविद्यालय में **जैन श्रमणधर्मदल्लि प्रतिकमणद स्वरूप** नाम से अपना शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किया था और जनवरी २००७ में उन्हें पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त हुई थी तथा वह 'डॉ. ए.एन. उपाध्ये स्वर्ण पदक'

से भी सम्मानित हुई थीं। प्रस्तुत ग्रन्थ में उसे हिन्दी में भाषांतरित कर प्रस्तुत किया गया है, ताकि विद्वत् जगत में इसका सम्यक् प्रसारण हो सके।

प्रो. फूलचन्द जैन 'प्रेमी' की प्रस्तावना और डॉ. जिनेन्द्र जैन की भूमिका तथा लेखिका का स्वयं का वक्तव्य (लेखकिय) ग्रन्थ में प्रतिपादित विषय का संक्षिप्त परिचय देते हैं।

सार रूप में, आत्म स्वभाव को छोड़कर बाह्य में भटकना-उलझना अतिक्रमण है और इससे हटकर पुनः निज स्वभाव में आना प्रतिक्रमण है। प्रतिक्रमण का अर्थ है - की गई क्रिया (कर्म) को क्रमशः एक-एक करके चिन्तन पूर्वक देखना/विचार करना अर्थात् प्रातः काल से रात्रि काल तक एवं रात्रि काल से लेकर प्रातः काल तक की प्रत्येक पुण्य-पाप रूप क्रिया का चिन्तन/विचार करना अथवा देखना, प्रतिक्रमण है। श्रावक और श्रमण दोनों से ही यह अपेक्षित है कि वह अपनी प्रत्येक क्रिया का विचार करें कि वह कितनी शुद्ध है और प्रामाणिकता पूर्वक की गई है।

अध्ययन ६ अध्यायों में प्रस्तुत है। प्रथम अध्याय में जैन श्रमणाचार और प्रतिक्रमण का विवेचन है। द्वितीय अध्याय में प्रतिक्रमण का परिचयात्मक विवेचन है। तृतीय अध्याय में प्रतिक्रमण के भेद-प्रभेद बताये गये हैं। चतुर्थ अध्याय में प्रतिक्रमण का क्रियात्मक स्वरूप बताया गया है। पंचम अध्याय में परमार्थ प्रतिक्रमण पर प्रकाश डाला गया है। षष्ठम अध्याय में प्रतिक्रमण के लाभ पर प्रकाश डाला गया है।

परिशिष्ट में डॉ. सागरमल जैन का निबन्ध **प्रतिक्रमण - इतिहास और परम्परा** भी दिया गया है, जिसमें वैदिक, पारसी, बौद्ध, इसाई और जैन परम्पराओं में प्रतिक्रमण के स्वरूप का परिचय दिया गया है।

स्वयं अपने कृत्यों का परीक्षण करना और अपने विवेक से यह देखना कि हमने क्या गलत किया है और हम उसका परिमार्जन किस प्रकार कर सकते हैं, उचित मानवीय व्यवहार के लिए आवश्यक है। इसीलिए सभी धर्मों में इसे किसी-न-किसी रूप में स्वीकार किया गया है। वर्तमान में समाजशास्त्री ओर मनोवैज्ञानिक भी इसकी उपयोगिता को स्वीकार करते हैं।

यद्यपि लेखिका हिन्दी भाषी नहीं है, भाषांतरण में प्रयुक्त भाषा सहज है। हिन्दी में इस ग्रन्थ को प्रस्तुत करने के लिए डॉ. स्वयंप्रभा पाटील साधुवाद की पात्र हैं।
महावीर कथा : ले. आचार्य अशोक सहजानन्द; प्र. अरिहंत इण्टरनेशनल, २३६, दरीबां कला, चांदनी चौक, दिल्ली-११०००६; प्रकाशन वर्ष २०११; पृ. १५६; मूल्य रु. २००/-

आचार्य अशोक सहजानन्द ने चार अध्यायों में अपनी प्रस्तुति की है। प्रथम अध्याय में भगवान महावीर के जीवन की विशिष्ट घटनाओं का विवरण है। अध्याय २ में महावीर की शिक्षाओं को उनके अमर सन्देश के रूप में प्रस्तुत किया गया है। अध्याय ३ में चांदनपुर (श्रीमहावीरजी) का परिचय दिया गया है। अध्याय ४ में महावीर आराधना के अन्तर्गत स्तोत्र, चालीसा, आरती और भजनों का संकलन है। जन सामान्य की दृष्टि से यह पुस्तक उपयोगी है।

कबिरा खड़ा बाजार में : ले. डॉ. अनंग प्रद्युम्न कुमार; प्र. पुस्तक निधि, २३६, दरीबां कलां, दिल्ली-११०००६; २०१०; पृ. ८८; मूल्य रु. २००/-

डॉ. अनंग प्रद्युम्न कुमार का यह काव्य संग्रह चार सोपानों में विभक्त है। सोपान १ में यथार्थ बोध कराने वाली रूलाइयां ३१ अष्टपदियों में संकलित हैं। सोपान २ में त्रास से चेतने के दिशा-संकेत स्वरूप नीति विवेक विषयक ३१ चतुष्पदियां हैं। सोपान ३ में १५१ दोहों में आत्मसंल्लाप है जिसमें त्रास के परिप्रेक्ष्य में स्वयं को समझने का प्रयास लक्षित होता है। अंतिम सोपान ४ में २० गीतों में अस्तित्व का प्रज्ञा-लोक प्रस्तुत है।

डॉ. प्रद्युम्न कुमार दर्शनशास्त्र के अध्येता हैं और उस विषय में उन्होंने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। शिक्षक वृत्ति रही है। गम्भीर और समसामायिक विषयों पर गोष्ठियां आयोजित करने का शौक रहा। दार्शनिक पृष्ठभूमि में काव्य प्रतिभा का जो प्रस्फुटन होता है वह इस काव्य संकलन में देखने को मिलता है।

कवि अनंग की वाणी कबीर के समान ही तड़प उठती है -

मत सुनो, बहरो, न देखो, आंधरो,
है नहीं परवाह कवि को लेश भी;
बिन रुके कवि गीत गाता जायगा,
राख हो जाए भले ही देश भी;
किन्तु वह इतिहास को झकझोरता
शंख फूंकेगा जगा अखिलेश भी;
है नहीं परिताप किंचित भी उसे,
नर्क भोगेगा कलम का शेष भी।

जंगलों को गाने दो : ले. डॉ. किशोरी लाल व्यास 'नीलकंठ'; प्र. इन्दूर हिन्दी समिति, एफ-१, रतना रेजीडेंसी, माहेश्वरी नगर, हब्शीगुडा, हैदराबाद-५००००७; अगस्त २०१०; पृ. १००; मूल्य रु. ६०/-

डॉ. किशोरी लाल व्यास 'नीलकंठ' का यह चौथा कविता संग्रह है। इसमें पर्यावरण विषयक ५५ कविताएं संकलित हैं। अपने आमुख में कवि ने वन की उपयोगिता पर विशद प्रकाश डाला है। उनका कहना है कि वृक्षारोपण मात्र प्रथापालन न होकर हमारे जीवन का अंग बन जाना चाहिए। ये कविताएं कवि की वृक्ष संवेदना से जुड़ी रचनाएं हैं। उनका संदेश है कि हम पेड़े पौधों को अपना आत्मीय मानें। कवि का नाद है -

जंगलों को गाने दो
कि जंगलों से जल है,
जल से ही जीवन है, रस है, अमृत है
भू-संरक्षण है, उपजाऊ मिट्टी है,
मिट्टी का गीत है, संगीत है
प्राणवायु का अक्षय कोश है, प्रवाह सतत,
निसर्ग-चक्र का सहज संचालन है
अनगिनत प्राणियों का संरक्षण है
- जंगलों को गाने दो।

जो छपता है सो छपता है : ले. श्री अजित कुमार वर्मा; प्र. श्रीमती सरला वर्मा, कवि कुटीर, २४६, राजेन्द्र नगर लखनऊ-२२६००४; सितम्बर २०११; पृ. ७६; मूल्य रु. १५०/-

प्रस्तुत पुस्तक श्री अजित कुमार वर्मा का काव्य संग्रह है। इसे उन्होंने अपने पिता सुविख्यात हास्य कवि स्व. शारदा प्रसाद 'भुषुण्डि' की जन्म शती के शुभ अवसर पर एवं अपनी अम्मा की पावन स्मृति में उन्हें सादर समर्पित किया था। श्री वर्मा की एक गद्य कृति **मै गधा हूँ** पहले प्रकाशित हो चुकी है जिसमें ३१ व्यंग्य निबंधों का संग्रह है। इस निबन्ध संग्रह का मैने भी रसास्वादन किया था और उसका उल्लेख इस पुस्तक के पृष्ठ ७३-७४ पर उपलब्ध है।

प्रस्तुत संग्रह में ५४ रचनायें संकलित हैं। प्रारंभ सरस्वती की वंदना से होता है परन्तु उसमें भी व्यंग्य का माधुर्य है। 'जो छपता है, सो छपता है' शीर्षक गीत में कवि ने स्वतंत्र लेखक की व्यथा का उल्लेख किया है -

भूले से कोई लेख छपा, मानो हिजड़े ने जना लड़का।
मन-मयूर तब नृत्य कर उठा, अंग प्रत्यंग अपना फड़का।

पारिश्रमिक तो दूर रहा, अखबार तलक न मिलता है।
जो छपता है, सो छपता है।

'नेता चरित्र' और 'शिखण्डी शासन' में वास्तविक स्थिति का परिदृश्य है।

यह मेरे लिए व्यक्तिगत पीड़ा की बात है कि मित्र अजित कुमार वर्मा का गत २८ फरवरी को देहावसान हो गया। जब से मेरा उनसे परिचय हुआ वह दीपावली, नव वर्ष, और होली पर अपनी शुभकामना एक दोहे के रूप में अवश्य भेजते थे। उनका अंतिम संदेश २४-१०-२०११ को प्राप्त हुआ था। वह मेरे अनुज समान थे। अब मैं उनकी आत्मा की सद्गति और चिरशांति की कामना ही कर सकता हूँ। यह काव्य संकलन उनके अनुज और हमारे मित्र श्री अनिल कुमार 'बांके' के सौजन्य से प्राप्त हुआ है जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

डॉ. परमानन्द जड़िया की कृतियां -

छन्द मकरन्द - इसमें ५० कवित्त और २५ छन्द संकलित हैं। प्रारंभ में प्रभु को समर्पण और गणपति वन्दना है। कविता और सवैया के छन्द काव्य रचना की विशिष्ट विधा हैं। कवि ने विविध सामाजिक परिवेश पर अपने विचार कविता के माध्यम से प्रस्तुत किये हैं। सवैया के माध्यम से भी वर्तमान परिवेश पर सूक्ष्म व्यंग्य किया है। आत्म-निवेदन में कवि ने राम के प्रति अपनी विनय प्रस्तुत की है। अपनी रचना को वह राम की कृपा का प्रसाद ही मानते हैं -

छन्द प्रबन्ध अनेक लिखे,
'परमानन्द' कौन लिखाता रहा।
मान के पान अनेक मिले,
अनायास ये कौन दिलाता रहा।

युगपत् - तुलसी-काव्योद्यान तथा **सूरदास सरनाम** परमानन्द जी की दो लघु रचनायें हैं जो इसमें एक साथ प्रकाशित हैं। प्रथम रचना में तुलसी के साहित्य की सहज शैली में समीक्षा की गई है और दूसरी रचना में सूरदास के साहित्य को सहज रूप में व्याख्यायित किया गया है। इन रचनाओं के माध्यम से तुलसी और सूर के साहित्य को पढ़ने की जिज्ञासा प्रेरित होगी। परमानन्द जी ८५ वर्ष की वय में भी ऊर्जावान रचनाकार हैं। हमारी कामना है कि मित्रवर रचना-धर्म में इसी प्रकार प्रवृत्त रहें।

ये दोनों पुस्तकें मधुलिका प्रकाशन, १८६/५१, खत्री टोला, मशक गंज, लखनऊ-१८ से क्रमशः दिसम्बर २०११ और फरवरी २०१२ में प्रकशित हुई हैं।

- डॉ. शशि कान्त

अभिनन्दन

डॉ. कपूरचंद जैन, अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, श्री कुन्द-कुन्द जैन महाविद्यालय, खतौली, को वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, द्वारा **भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में जैन समाज का योगदान** विषयक उनके शोध-प्रबन्ध पर डी.लिट. की उपाधि प्रदान की गई। डॉ. रामजी राय पर्यवेक्षक थे।

श्रीमती चेतना मेनारिया को मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, द्वारा **उपाध्याय पुष्कर मुनि के साहित्य में प्रतिपादित समाज** विषय पर प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध पर विद्यावाचस्पति (पी-एच.डी.) की उपाधि प्रदान की गई। डॉ. एच सी. जैन निर्देशक थे।

गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद, द्वारा स्थानकवासी जैन अजरामर सम्प्रदाय के **चिन्तन मुनि** को उनके शोध-प्रबन्ध **भावना शतक बाई रत्नचन्द्र जी महाराज** पर पी-एच.डी. की उपाधि प्रदान की गई। उनके गाइड डॉ. इन्ताज मलिक थे जिन्होंने मुस्लिम सम्प्रदाय के होते हुए उपनिषद और इस्लामिक दर्शन के तुलनात्मक अध्ययन पर शोध कार्य किया है।

साध्वी श्री प्रमुदिता श्रीजी को उनके शोध-प्रबन्ध **जैन दर्शन में संज्ञा (व्यवहार के प्रेरक तत्व) की अवधारणा** पर और **कु. तृप्ति जैन** को उनके शोध-प्रबन्ध **जैन धर्म-दर्शन में तनाव प्रबन्धन** पर जैन विश्व भारती विश्वविद्यालय, लाड़नू, द्वारा पी-एच.डी. की उपाधि प्रदान की गई। प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर, के संस्थापक-निदेशक डॉ. सागरमल जैन निर्देशक थे।

मुम्बई विश्वविद्यालय, मुम्बई, द्वारा फिरोजाबाद के **श्री अनिल जैन** को उनके शोध प्रबन्ध **जैनदर्शन एवं पर्यावरण की सुरक्षा** पर पी-एच.डी. की उपाधि प्रदान की गई। श्री जैन एस्सार स्टील लि., सूरत, में वाइस-प्रेसीडेन्ट हैं।

अहमदाबाद के अपोलो अस्पताल में **डॉ. नितिन जैन** ने अपने सहयोगियों के साथ ६१-वर्षीय महिला की सफल बाई-पास सर्जरी करके चिकित्सा के क्षेत्र में विशेष उपलब्धि प्राप्त की।

जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, के पूर्व निदेशक **डॉ. पी. सी.जैन** को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, दिल्ली, द्वारा एमेरिटस प्रोफेसर के रूप में सम्मानित किया गया।

लखनऊ में अखिल भारतीय संगीत परिषद ने अपने वार्षिक सम्मान एवं साहित्यकार दिवस पर वरिष्ठ साहित्यकार/पत्रकार **श्री महेश प्रसाद पाण्डेय 'महेश'** को 'पं. रामनरायण त्रिपाठी पर्यटक सम्मान' से सम्मानित किया।

५ अप्रैल को एक सार्वजनिक समारोह में 'जिनेन्दु' के संस्थापक-सम्पादक **श्री जैनेन्द्र कुमार जैन** को पत्रकारिता में कीर्तिमान स्थापित करने के लिए सम्मानित किया गया।

२२ अप्रैल को नई दिल्ली में श्वेतपिच्छाचार्य विद्यानन्द जी मुनिराज के ८८वें जन्म दिवस पर कुन्द कुन्द भारती द्वारा जैन धर्म व दर्शन के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए **पं. रतन लाल जैन शास्त्री** (इन्दौर), **प्रो. राधा वल्लभ त्रिपाठी** (दिल्ली) और **पं. जयकुमार निशान्त** (टीकमगढ़) को पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित किया गया।

२७ मई को मुम्बई में अखिल भारतवर्षीय शास्त्री परिषद के समारोह में ललितपुर के युवा मनीषी **श्री सुनील जैन 'संचय' शास्त्री** को 'रामस्वरुप शास्त्री स्मृति पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।

मंगलायतन, सासनी, में ६ से ११ जून को अलीगढ़ के पं. कैलाशचन्द्र जैन के शताब्दी वर्ष में मंगल प्रवेश के उपलक्ष में 'मंगल-समर्पण' समारोह आयोजित किया गया।

आगरा के **प्रो. डॉ. सुनील जैन** को उत्तर प्रदेश शासन द्वारा उ.प्र. लोक सेवा आयोग का सदस्य मनोनीत किया गया।

सरोजनी नायडू स्वशासी महाविद्यालय, भोपाल, की अर्थशास्त्र में वरिष्ठ प्राध्यापक **प्रो. अंजलि जैन** को ग्लोबल सोसायटी फॉर हैल्थ एण्ड एजूकेशन ग्रोथ द्वारा २०१२ के 'भारत शिक्षा रत्न अवार्ड' से सम्मानित किया गया।

दिल्ली नगर निगम के २०१२ के चुनाव में मौजपुर से **श्री संजय जैन,** कृष्णा नगर से **श्रीमती कल्पना जैन,** दरियागंज से **श्रीमती सिम्मी जैन,** रिठाला से **श्रीमती शान्ता जैन** और डिप्टीगंज से **सुश्री पिंकी जैन** विजयी हुई।

उपरोक्त सभी महानुभावों का उनकी यशवृद्धि के लिए शोधादर्श परिवार हार्दिक अभिनन्दन करता है।

शोक संवेदन

दिनांक २८ दिसम्बर २०११ को **श्रीमती प्रेमवती गर्ग जैन,** पत्नी श्री एस.पी. गर्ग जैन, का देहरादून में स्वर्गवास हो गया। वह ८५-वर्षीय सुश्राविका थीं और **शोधादर्श** के आजीवन अभिदाता श्री अवनीश गर्ग की माता जी थी।

दिनांक २ जनवरी २०१२ को चेन्नई में ५३-वर्षीय **श्री डूंगरमल वोहरा** का आकस्मिक निधन हो गया। वह हमारे समिति के अध्यक्ष श्री लूण करण नाहर जैन की पत्नी श्रीमती कमला जैन के छोटे भाई थे।

दिनांक ३ जनवरी को लखनऊ में राजवैद्य डॉ. चन्द्र कुमार जैन की पत्नी **डॉ. कुसुम लक्ष्मी जैन** का देहावसान हो गया। वह धर्मनिष्ठ सुश्राविका थीं और अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गई हैं।

२५ जनवरी को इन्दौर में वयोवृद्ध समाजसेवी **श्री बाबूलाल पाटोदी** ने समताभावपूर्वक देह त्याग किया। उनका जन्म १५ जून १९२० को हुआ था और वे १९४२ में भारत छोड़ो आन्दोलन में जेल गये थे। तीन बार वे विधान सभा के सदस्य निर्वाचित हुये थे। १९९१ में उन्हें पद्मश्री के राष्ट्रीय अलंकरण से विभूषित किया गया था।

दिनांक २६ जनवरी को दिल्ली में हमारी समिति के आजीवन सदस्य श्री निर्मल कुमार सेठी जैन के ३१-वर्षीय कनिष्ठ पुत्र **पारस जैन** का असमय निधन हो गया। वह एक होनहार नवयुवक थे और उनका निधन परिवार एवं समाज के लिए महान क्षति है।

दिनांक ९ फरवरी को लखनऊ में श्वेताम्बर जैन समाज के प्रभावशाली व्यक्ति ७०-वर्षीय **श्री बृज लाल जैन** का एक दुर्घटना में हृदयाघात से असामयिक निधन हो गया।

दिनांक २८ फरवरी को गाजियाबाद में वयोवृद्ध **श्री अजित कुमार वर्मा** का गम्भीर अस्वस्थता के कारण निधन हो गया। वह **शोधादर्श** के सुधी पाठक और लेखक थे।

दिनांक २४ मार्च को लखनऊ में श्री जयंती शरण जैन की पत्नी **श्रीमती सरिता जैन** का निधन हो गया। वह धर्मनिष्ठ सुश्राविका थीं और अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गईं हैं।

दिनांक २६ मार्च को जबलपुर में श्री सुरेश जैन (रिटा.आई.ए.एस.) की माता और न्यायमूर्ति विमला जैन की सास, ९५-वर्षीय **श्रीमती केशरीदेवी जैन** ने समता भाव पूर्वक देह त्याग दिया। उनके संकल्प के अनुसार चिकित्सा शास्त्र के विद्यार्थियों के उपयोग के लिए उनका देहदान कर दिया गया।

दिनांक २७ मार्च को लखनऊ में वयोवृद्ध पत्रकार **श्री वीरेन्द्र कुमार वर्मा** का आकस्मिक निधन हो गया। वह **शोधादर्श** के सुधी पाठक थे।

दिनांक २८ मार्च को ललितपुर में सेठश्री की सामाजिक उपाधि से सम्मानित ८०-वर्षीय **श्री बाबूलाल जैन लागोनवालों** का स्वर्गवास हो गया। वह प्रतिष्ठाचार्य श्री पवन कुमार दीवान, मुरैना, के पिता थे और एक धर्मनिष्ठ सुश्रावक थे।

दिनांक ३१ मार्च को लखनऊ में हमारी समिति के उपाध्यक्ष **श्री नरेश चन्द्र जैन** का निधन हो गया। वह समिति के आजीवन सदस्य थे। गत कुछ माह से वह गम्भीर रूप से अस्वस्थ चल रहे थे। उनके निधन से समिति को गहरा आघात पहुंचा है।

फल्टण में ७६-वर्षीय **श्री रतन लाल पाटनी** जो इन्दौर के पी.एम.बी. गुजराती कालेज में वाणिज्य विषय के प्रोफेसर और प्राचार्य रहे थे, की २३ मार्च को सुहित सागर के रूप में मुनि दीक्षा लेने के बाद, ३१ मार्च को यम सल्लेखना सम्पन्न हुई।

नई दिल्ली में ८ अप्रेल को जाग्रत वीर समाज के अध्यक्ष श्री प्रताप जैन की ६७-वर्षीय पत्नी **श्रीमती शीला जैन** की देह शान्त हो गयी।

दिनांक ५ जुलाई को लखनऊ में ७८-वर्षीय सुश्रावक **श्री किशोर चंद जैन** का निधन हो गया। उनकी दानी धर्मात्मा के रूप में ख्याति थी। उन्होंने १० वर्ष पहले रु.११००/- मूल्य की प्लास्टिक की ६ कुर्सियां समिति को पुस्तकालय के लिए भेंट की थीं। वह **शोधादर्श** के अभिदाता और सुधी पाठक थे।

उपरोक्त सभी महानुभावों के प्रति शोधादर्श परिवार अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है, दिवंगत आत्माओं की चिरशांति और सद्गति के लिए प्रार्थना करता है तथा शोक संतप्त परिवारजनों एवं मित्रवर्ग के प्रति हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

समाचार विविधा

प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर

दिनांक ३०-३१ दिसम्बर २०११ और १ जनवरी २०१२ को भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली, के आर्थिक सहयोग से **भारतीय दर्शन को जैन दार्शनिकों का अवदान** विषयक राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित हुई। संगोष्ठी के निर्देशक डॉ. सागरमल जैन ने बताया कि भारतीय दर्शन में जैन दार्शनिकों का अवदान त्रिविध रहा है, यथा अन्य दर्शनों की एकान्तवादी मान्यताओं की निष्पक्ष समीक्षा, परस्पर विरोधी दार्शनिक मतवादों के मध्य अनेकांतवादी दृष्टि से समन्वय का प्रयत्न और निष्पक्ष होकर दर्शन संग्रहक गन्थों की सूचना। संगोष्ठी में २० विद्वानों एवं विदुषियों ने शोधालेख प्रस्तुत किये।

श्रुतसेवा निधि न्यास का अक्षराभिषेकोत्सव, फिरोजाबाद

८ जनवरी २०१२ को फिरोजाबाद में पालीवाल ऑडिटोरियम में धर्म, साहित्य और संस्कृति को समर्पित श्रुतसेवा निधि न्यास का सातवां अक्षराभिषेकोत्सव-२०१२ आयोजित किया गया। कार्यक्रम का शुभारंभ मां श्रुतदेवी के चित्र पर माल्यार्पण से हुआ। मुख्य अतिथि श्री एम.के. जैन, दिल्ली, थे और विशिष्ट अतिथि सीजेएम श्री राजेश्वर शुक्ल व डिप्टी कमिनश्र कस्टम श्री चंदनकुमार जैन, दिल्ली, थे। प्रोफेसर श्री जे.सी. जैन द्वारा रचित **जैन कर्म सिद्धांत विज्ञान के आलोक में,** इन्दु कान्त जैन द्वारा लिखित **आत्मकल्याण के दस चरण,** और **न्यास-परिचायिका** कृतियों का लोकार्पण अतिथियों ने किया। यशस्विनी शुक्ल ने आध्यात्मिक भजन की प्रस्तुति दी।

विभिन्न क्षेत्रों में कीर्तिमान गढ़ने वाले व्यक्तियों का सम्मान करते हुये उन्हें शाल, प्रशस्ति पत्र, साहित्य और माला आदि प्रदान की गई। डी.एम. श्री सुरेन्द्रसिंह को प्रशासन-प्रभाकर, एस.पी. श्रीमती मंजिल सैनी दहल को विधि-संरक्षिका, सीजेएम श्री राजेश्वर शुक्ल को न्याय-निधि, श्री एम.के. जैन को समाज-विभूषण, डिप्टी कमिश्नर श्री चदंन कुमार जैन को सेवा-सुधाकर, कवि श्री नारायण दास 'निर्झर' को काव्य-कलाधर, डॉ. अजय कुमार आहूजा को शिक्षा-भास्कर, सेठ महावीर जैन को समाज-रत्न, श्री संजय मित्तल को उद्योग-बन्धु, श्री ओमप्रकाश 'अमर' को लोककला-कोविद, श्री प्रताप जैन (दिल्ली) को सेवालंकार, श्री राधेलाल वर्मा 'तिलकधारी' को प्राणी-मित्र, डॉ. महेन्द्र कुमार जैन, साहू सतेन्द्र कुमार जैन एवं

श्री विशनस्वरूप जैन को साधु-सेवा-सम्मान और मनोज कुमार जैन एवं प्रगति जैन को प्रतिभा-पुंज तथा श्रीमती इन्दु कान्त जैन को मसि-कला-विशारद की मानद उपाधियों से अलंकृत किया गया।

बाहुबलि जैन म्यूजिक ग्रुप की चंचल, मंचल, गोल्डी, शिक्षा, दर्शना और पूजा ने शारदे वंदना और स्वागत गीत प्रस्तुत किये। श्री प्रेमपाल वर्मा ने भजन सुनाया। न्यास के संस्थापक जैन विद्वान प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन ने सम्मानित किये गये सभी हस्ताक्षरों का परिचय देते हुये संस्था के बारे में बताया। कोषाध्यक्ष श्री विमलकुमार जैन रेतावाले ने आभार प्रकट किया। संचालन महामंत्री एवं वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अनूपचन्द्र जैन ने किया।

इस अवसर पर एक ३६-पृष्ठीय सुन्दर सचित्र **परिचायिका** भी प्रकाशित की गई।

प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान, वैशाली

प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान, वैशाली, में २ मार्च को **आचार्य कुन्दकुन्द व्याख्यानमाला** सम्पन्न हुई। अध्यक्षता प्रो. जयदेव मिश्र, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग एवं सह-निर्देशक, केन्द्रीय पुस्तकालय, पटना विश्वविद्यालय, पटना, ने की। संस्थान के निदेशक डॉ. ऋषभचन्द्र जैन ने व्याख्यानमाला का विषय परिचय कराते हुए आचार्य कुन्दकुन्द के मौलिक योगदान की प्रासंगिक चर्चा की। लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली, के साहित्य-संस्कृति संकाय एवं प्राकृत भाषा विभाग के अध्यक्ष डॉ. सुदीप जैन ने आचार्य कुन्दकुन्द के योगदान की वर्तमान में प्रासंगिकता एवं महत्व विषय पर अपना वक्तव्य प्रस्तुत करते हुए बताया कि भगवान महावीर स्वामी ने जिस प्राकृत भाषा को अपने उपदेश का माध्यम बनाया उस प्राकृंत भाषा एवं उनके अध्यात्म उपदेश को जन-जन तक पहुंचाने का श्रेय आचार्य कुन्दकुन्द को ही है जिन्होंने ८४ पाहुड ग्रन्थ प्राणिमात्र के कल्याणार्थ लिखे। राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, में जैन अनुशीलन केन्द्र के पूर्व निदेशक डॉ. पी.सी. जैन ने बताया कि वैशाली प्रजातंत्र की जन्मदाता है और वैशाली के राजकुमार भगवान महावीर ने प्रजातंत्र की अवधारणा को अपने सिद्धान्तों में स्थान दिया था। **परस्परोपग्रहो जीवानाम्** का सूत्र देकर उन्होंने सभी जीवों को सक्रिय बनाने की राह दिखाई क्योंकि सामूहिक रूप से परस्पर में सक्रिय बनाना और सहयोग की भावना रखना ही प्रजातंत्र है।

सनातन धर्म महाविद्यालय, मुजफ्फरनगर, के संस्कृत विभागाध्यक्ष एवं अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद के अध्यक्ष डॉ. जयकुमार जैन ने वैदिक एवं श्रमण संस्कृति के बीच की समानताओं एवं असमानताओं पर अपना व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए कहा कि संस्कृति में आचार, विचार एवं व्यवहार इन तीनों की एकरूपता पायी जाती है। इन में से किसी एक के न होने पर वह संस्कृति पंगु हो जाती है। हमारे देश में संस्कृतियों का परस्पर में आदान-प्रदान हुआ है, हो रहा है और आगे भी होता रहेगा क्योंकि यह नैसर्गिक प्रक्रिया है।

अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में डॉ. जयदेव मिश्र ने पटना विश्वविद्यालय में उपलब्ध संस्कृत एवं प्राकृत विषय की हस्तलिखित पाण्डुलिपियों की जानकारी प्रस्तुत की और संस्कृत-प्राकृत के ग्रन्थों पर शोधार्थियों को शोधकार्य करने के लिए प्रेरित किया।

इस अवसर पर संस्थान से प्रकाशित एवं डॉ. गोकुल चन्द्र जैन द्वारा अंग्रेजी भाषा में लिखित पुस्तक **Prakrit and Jainism in Inter-Disciplinary Perspective** का लोकार्पण किया गया।

५ अप्रैल को भगवान महावीर और अहिंसा विषय पर **जगदीशचन्द्र माथुर स्मृति व्याख्यान माला** आयोजित की गई। सर्वप्रथम डॉ. हरीशचन्द्र सत्यार्थी ने भारत में आर्यो के आगमन और सिन्धु घाटी की प्राचीन सभ्यता के विषय में बताया। तत्पश्चात् डॉ. जयकुमार उपाध्ये, नई दिल्ली, ने पम्प कवि के अनुसार भगवान महावीर के जन्माभिषेक का वर्णन किया। डॉ. अनेकान्त जैन, नई दिल्ली, ने वर्तमान समाज के लिए प्रासंगिक अहिंसा, अनेकान्त और अपरिग्रह के स्वरूप की चर्चा की। संस्थान के निदेशक डॉ. ऋषभचन्द्र जैन ने कहा कि सभी को आत्महित में प्रयासरत रहना चाहिए क्योंकि आत्महित के साधे बिना परहित का साधना संभव नही है और आत्महित का साधना भी अहिंसा के बिना असम्भव है। डॉ. शैल कुमारी ने **आचारांग** और **भगवतीसूत्र** में वर्णित आचार धर्म और सूक्ष्म हिंसा के विषय में विचार प्रस्तुत किये। डॉ. संगीता अग्रवाल ने चारों कषायों से निवृत्ति के मार्ग की वर्तमान में प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला। अध्यक्षीय वक्तव्य में प्रो. रवीन्द्र कुमार सिंह ने बताया कि वर्तमान समय में भगवान महावीर के अहिंसा और अपरिग्रह के सिद्धान्त अत्यंत प्रासंगिक हैं, तथा उनके द्वारा देश से भ्रष्टाचार समाप्त हो सकता है।

डॉ. अनेकान्त जैन द्वारा लिखित पुस्तक **दार्शनिक समन्वय की जैन दृष्टि नयवाद** का और आचार्य कुन्द-कुन्द कृत **समयसार** के अंग्रेजी अनुवाद का लोकार्पण किया गया।

वर्ष २०११ की परीक्षा में सर्वप्रथम स्थान पाने वाले संस्थान के छात्र श्री विनय पासवान को 'प्रो. भागचन्द्र पुष्पलता जैन स्वर्ण पदक' प्रदान किया गया।

प्राकृत भाषा और साहित्य के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान के लिए भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा की ओर से राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री निर्मल कुमार सेठी द्वारा संस्थान के निदेशक डॉ. ऋषभचंद्र जैन को 'विद्वत्-रत्न' की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया।

डॉ. महेन्द्र कुमार जैन न्यायाचार्य की जन्म-शताब्दी, दमोह

२४ मार्च को दमोह (म.प्र.) में जैन न्यायशास्त्र के अद्वितीय विद्वान न्यायाचार्य डॉ. महेन्द्र कुमार जैन का जन्म-शताब्दी समारोह उनके परिवार द्वारा मनाया गया। प्रो. भागचन्द जैन 'भागेन्दु' ने डॉ. महेन्द्र कुमार के कृतित्व का परिचय दिया। **अकलंक ग्रन्थ-त्रयी** तथा अकलंक के अन्य ग्रन्थों का टीका के साथ उन्होंने सम्पादन किया था। जैन दर्शन पर उनका ६५० पृष्ठों का ग्रन्थ डॉ. महेन्द्र कुमार के दार्शनिक ज्ञान की परिपक्वता का परिचायक है। ४८ वर्ष की अल्प वय में ही वह इस असार संसार से विदा हो गये, परन्तु अपने कृतित्व के माध्यम से वह अभी भी अमर हैं। काशी हिन्दु विश्वविद्यालय में उन्होंने अध्यापन किया था। उनकी स्मृति को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए उनके सुपुत्र श्री पद्मचन्द जैन ने काशी हिन्दु विश्वविद्यालय के इन्जीनियरिंग कालेज और जैन-बौद्ध विभाग के छात्रों के लिए दो स्वर्ण पदक प्रदान किये जाने की व्यवस्था की।

महावीर जयन्ती

५ अप्रैल को भगवान महावीर की २६११ वीं जन्म जयन्ती लखनऊ में समारोह पूर्वक मनाई गई। श्री जैन धर्म प्रवर्द्धिनी सभा द्वारा रथयात्रा और सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया।

श्री महावीर जैन साधना केन्द्र, पटेलनगर, आलमबाग, में श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन सभा द्वारा पूर्वान्ह में डॉ. शशि कान्त की अध्यक्षता में और वयोवृद्ध विद्वान श्री प्रकाशचन्द्र जैन 'दास' के सान्निध्य में कार्यक्रम का आयोजन किया गया। डॉ. शशि कान्त ने बताया कि जैन धर्म की शिक्षा का सार **'सत्वेषु मैत्रीं, गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु**

जीवेषु कृपापरत्वं, माध्यस्थ भावं विपरीत वृत्तौ' में निहित है। भक्तिभाव पूर्ण भजनों से वातावरण रससिक्त रहा।

यह समाचार त्रासदायक है कि भगवान महावीर की निर्वाण स्थली पावा (फाजिलनगर, जिला कुशीनगर) में कोई आयोजन नहीं हुआ और उस दिन जैन मंदिर भी बन्द पड़ा रहा।

पुस्तकालय स्थापना दिवस एवं श्रुतपंचमी पर्व

दिनांक २६ मई को तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, के तत्वावधान में में श्रुतपंचमी पर्व एवं शोध पुस्तकालय स्थापना दिवस के उपलक्ष में पुस्तकालय परिसर में, मुन्नेलाल कागजी धर्मशाला, चारबाग, लखनऊ, में श्रुत देवी की वन्दना हेतु तथा श्रद्धेय श्री रमा कान्त जैन के पुनीत स्मरण हेतु सभा का आयोजन किया गया।

षट्खण्डागम की स्थापना के बाद श्री महेन्द्र प्रसाद जैन द्वारा मंगलाचरण किया गया। वाग्देवी के चित्र पर और श्री रमा कान्त जैन के चित्र पर माल्यार्पण के पश्चात श्री नलिन कान्त जैन ने कार्यक्रम का परिचय देते हुये बताया कि दिगम्बर आम्नाय में श्रुत का लिपिकरण किये जाने की परम्परा **षट्खण्डागम** ग्रन्थ के लिपिबद्ध किये जाने से प्रारंभ होती है। ई. सन् ७५ की ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी को उक्त लिपिबद्ध ग्रन्थ की पूजा की गई थी और तभी से यह दिवस श्रुतपंचमी के रूप में विख्यात है। पुस्तक दान तथा पुस्तकालय स्थापना के लिए इस दिवस का विशेष महत्व है। तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के शोध पुस्तकालय की स्थापना १९७६ ई. में श्रुतपंचमी के दिन ही की गई थी।

डॉ. विनय कुमार जैन, श्री धनेन्द्र कुमार जैन और श्री दिनेशचंद्र जैन ने श्रुत पंचमी पर्व के महत्व पर प्रकाश डाला। श्री अंशु जैन 'अमर' ने श्रुत के लिपिकरण के सम्बन्ध में दिगम्बर और श्वेताम्बर उभय आम्नायों की अनुश्रुतियों का विवेचन किया और २०वीं शताब्दी में जैन शास्त्रों के मुद्रण हेतु आन्दोलन पर भी प्रकाश डाला। उन्होंने समिति के पूर्व महामंत्री और **शोधादर्श** के पूर्व सम्पादक श्री रमा कान्त जैन के व्यक्तित्व और कृतित्व का परिचय भी दिया। कुमारी पलक जैन ने अपने दिवंगत बाबा जी के प्रति स्मरणांजलि प्रस्तुत की।

श्री दिनेशचंद्र जैन ने भजन प्रस्तुत किया -

सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्र उत्तम है, यही नारा है
सब धर्मों का राजा यह जैन धर्म हमारा है।

श्री स्वराज्य चन्द्र जैन ने भी भजन प्रस्तुत किया -

हमने चाही भक्ति तुम्हारी, हमें मिला संसार
हे वीरा! तुम्ही करो भव पार, हे वीरा! तुम्हीं करो भव पार।

श्री सन्दीप कान्त जैन ने अपने पिता श्री की रचना "सरस्वती वंदना" का पाठ किया।

अध्यक्ष श्री लूण करण नाहर जैन ने श्री रमा कान्त के प्रति अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुये कहा -

हम उन्हें याद किया करते
जो औरों के लिए जिया करते
अगरबत्ती की तरह जलकर
खुशबू दूसरों को दिया करते।

उन्होंने आध्यात्मिक भजन -

नर कर उस दिन को याद कि जिस दिन चल-चल-चल होगी,
तू जोड़-जोड़ कर धरे, वस्तु नहीं कोई तेरे साथ होगी।

से वातावरण को रससिक्त किया। कार्यक्रम का समापन जिनवाणी की स्तुति के गायन से हुआ।

राष्ट्रिय प्राकृत संगोष्ठी

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान (मानित विश्वविद्यालय), नई दिल्ली, एवं श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ (मानित विश्वविद्यालय), नई दिल्ली, के संयुक्त तत्वावधान में दिनांक १०,११ व १२ मई को आयोजित **राष्ट्रिय प्राकृत संगोष्ठी** सफलता के साथ सम्पन्न हुई। इसमें तीन दिनों में उद्‌घाटन एवं समापन सत्रों के अतिरिक्त २५ शैक्षणिक सत्र हुये, जिनमें १२० गवेषणापूर्ण शोध-आलेख प्रस्तुत किये गये और इन पर गंभीर चर्चा भी हुई। इसमें नवयुवा विद्वानों से लेकर वरिष्ठतम वयोवृद्ध विद्वान भी अपनी गवेषणापूर्ण-प्रतिभा को प्रस्तुत कर रहे थे। तीन संगोष्ठी-भवनों में तीन स्वतंत्र-विषयों पर शैक्षणिक-सत्र एक साथ चले और सभी कक्ष विद्वान श्रोताओं से भरे रहे। इस प्रकार तीन दिनों मे नौ विषयों के खण्डों में अलग-अलग शैक्षणिक सत्र पूरे दिन आयोजित हुये।

प्राचीन अभिलेखों के मर्मज्ञ विद्वान डॉ. शशि कान्त ने **'प्राकृत का अभिलेखीय साहित्य'** पर अपना गवेषणा पूर्ण आलेख भेजकर अनुग्रहीत किया।

संगोष्ठी के आयोजन में राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान की ओर से परियोजना अधिकारी डॉ. शुक्ला मुखर्जी ने संयोजन-व्यवस्था की तथा उनके सहयोगी संयोजक रहे वहीं के विकासाधिकारी पालि-प्राकृत, डॉ. रजनीश शुक्ला। विद्यापीठ की ओर से प्रशासनिक व्यवस्थागत सहयोग में कुलसचिव डॉ. बी. के. महापात्र, प्रो. शुद्धानन्द पाठक, प्रो. वीरसागर जैन, डॉ. जयकुमार उपाध्ये, डॉ. अनेकान्त जैन, डॉ. कल्पना जैन आदि का उल्लेखनीय सहयोग रहा। इस सम्पूर्ण प्रकल्प में मार्गदर्शक की सराहनीय भूमिका प्रो. डॉ. राजाराम जैन, नोएडा, की रही। अन्त में संगोष्ठी में पारित प्रस्तावों को मूर्त रूप प्रदान करने के संकल्प के साथ संगोष्ठी की गरिमामय पूर्णता हुई। विवरण प्रो. सुदीप कुमार जैन के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट

संस्थान द्वारा हस्तलिखित ग्रन्थों और पाण्डुलिपियों को स्कैन करने की योजना बनाई गई है। जिन पुस्तकालयों/संस्थाओं में इस प्रकार की सामग्री हो, वे श्री जिन शासन आराधना ट्रस्ट से बी. सी. जरीवाला, ६ बद्रिकेश्वर सोसायटी. नेताजी सुभाष मार्ग, मरीन ड्राइव (पूर्व) रोड, मुम्बई- ४०५००२ के माध्यम से सम्पर्क कर सकते हैं।

श्री जैन इन्टरनेशनल ट्रेड आर्गनाइजेशन (JITO)

जीटो ने वैवाहिक सम्बन्धों के लिये www.jitomatrimonial.com प्रारम्भ की है। आवश्यक जानकारी ५, द्वितीय तल, ७/१०, कोटा वाला बिल्डिंग, हार्निमन सर्किल, फोर्ट, मुम्बई - ४०००२३ पर स्थित जीटो कार्यालय से प्राप्त की जा सकती है।

भगवान महावीर स्मारक समिति

समिति के मानद मंत्री श्री रतनलाल गंगवाल ने २६ मई को कुन्द कुन्द भारती, नई दिल्ली, में श्वेत पिच्छाचार्य श्री विद्यानन्द जी मुनिराज के सान्निध्य में सम्पन्न सभा के विवरण के साथ एक सचित्र मनोहारी फोल्डर भी भेजा है। इस फोल्डर में वे ही सब भ्रमोत्पादक विवरण दिये गये हैं जिनके सम्बन्ध में **शोधादर्श-७२** के सम्पादकीय में हमने विवेचना दी थी। पुनः उल्लेख है कि **वैशाली अब स्वतंत्र जिला है और मुजफ्फरपुर जिले के अंतर्गत नहीं है** तथा **कुमारामात्याधिकरण की मुद्रा महावीर स्वामी के एक हजार वर्ष से भी अधिक बाद की है, अतः उसका राजकुमार वर्धमान द्वारा प्रयोग किये जाने का प्रश्न ही नहीं उठता।** सही तथ्य देने में क्यों संकोच है, विषाद का विषय है। यह भी त्रासदायक है कि समिति के पदाधिकारी अपना पद सुरक्षित रखने के लिये उसी प्रकार क्रियाशील हैं जैसा कि सामान्य राजनीतिक संस्थाओं में प्रचलित है।

- नलिन कान्त जैन

पाठकों के पत्र

डॉ. उषा माथुर, लखनऊ

शोधादर्श पत्रिका का **७४वां** अंक नवम्बर २०११ मिला। इसमें समाविष्ट सभी लेख महत्वपूर्ण एवं ज्ञानवर्धक हैं। शेफाली की बेटी संचिता द्वारा सृजित बाल कविता 'मन को किया तितली तितली' बाल मन की रचनात्मक सोच का स्तुत्य प्रयास है, प्रकृति को निकट से देखने का उसका अपना दृष्टिकोण है। तितली आज कीट जगत से लुप्तप्रायः हो रही है। वैज्ञानिक उसे बचाने का प्रयास कर रहे हैं। साहित्य में वह अवश्य जीवित रहेगी।

डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव, भिलाई

शोधादर्श का ७४वां अंक नवम्बर २०११ मिला। यद्यपि अपनी परम्परा पर शोधपूर्ण रचनाओं का ही संकलन है, तथापि कतिपय रचनाएं उल्लेखनीय हैं, यथा- **'भगवान शीतलनाथ की जन्मभूमिः मलय-भद्रपुरः एक चिन्तन'** (डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल) जिसमें विद्वान लेखक ने अभिलेखीय पुरातात्त्विक साक्ष्यों के आलोक में भद्रपुर की पहचान मध्य प्रदेश के विदिशा (पूर्वनाम भिलसा) नगर से की है और मलय देश को मालव माना है जो मध्य प्रदेश का सीमावर्ती क्षेत्र अब भी है। इस आलेख में आये वाक्य 'गजरथ चलाने की परम्परा' और दूसरे वाक्य गजरथ को सिंघई की पदवी देकर पगड़ी बांधने की प्रथा में आये शब्द गजरथ के अर्थ के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न हो गयी है। आशा है, **शोधादर्श** के आगामी अंक में मेरी जिज्ञासा का समाधान प्रस्तुत किया जायेगा। श्रीमती इन्दु कान्त जैन एक गंभीर लेखिका हैं। इस अंक में भी उन्होंने **'क्षमावाणी पर्व की सार्थकता'** लेख के माध्यम से पर्व मनाने की परम्परा और उसके वास्तविक स्वरूप के अनुपालन पर सटीक प्रकाश डाला है। निःसन्देह क्षमादान में वाणी के साथ-साथ आत्मिक भाव का योगदान आवश्यक होता है। **'समायोजन और अध्यात्म'** (श्री वीरेन्द्र कुमार जैन) नामक रचना में भी बहुत कुछ पूर्वोल्लिखित रचना के समान गंभीर विषय को परिभाषित और विश्लेषित किया गया है। श्री ललित नाहटा द्वारा जैन प्रतीक चिह्न की आकृति एवं उसकी माप पर डाला गया प्रकाश जनसामान्य के लिए ही नहीं, अपितु जैन अनुयायियों के लिए भी ज्ञानवर्द्धक है, अनुकरणीय है। उन्होंने ऊर्ध्वा लोकाकाश की चन्द्राकार आकृति, तीन बिन्दु और स्वस्तिक की जैसी व्याख्या की है, वैसी व्याख्या अधोलोकाकाश के चक्रांकित पंचाङ्गुल की भी करते तो

अच्छा होता। श्री नाइटा जैन विद्या और साहित्य के सुधी जानकार हैं, इसलिए हम उनसे अपेक्षा कर सकते हैं कि जैन चिह्न के लिए जैन तीर्थंकरों व केवली भगवन्तों की जो वाणी आधार है और जिसे भगवान ने बताया है, उसे भी ससन्दर्भ एवं सानुवाद आगामी किसी अंक में प्रकाशित करने का प्रयत्न करें तो जैन श्रद्धालुओं के साथ शोधकर्ता भी लाभान्वित होंगे। **समणसुत्तं** में जो कमी **शोधादर्श** के ७२वें अंक में लगी थी, इस अंक में उसका निवारण हो गया है।

ज्ञानसंभृत इस अंक के सम्पादन एवं प्रकाशन के लिए आपको तथा समस्त **शोधादर्श** परिवार को भूरिशः बधाई। किमधिकम्।

शोधादर्श ७४ के साथ इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन की जन्मशती के उपलक्ष में प्रकाशित **स्मृतिका** की प्रति के लिए भी हार्दिक धन्यवाद। आदरणीय बाबूजी की पुण्य स्मृति को मेरी विनम्र भावांजलि।

श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध', लखनऊ

शोधादर्श अंक चौहत्तर
सौम्य ज्ञान की खान।
जिसमें लेख समीक्षा खबरें
काव्य मधुर मतिमान।।
गुरुगुण-कीर्तन मध्य सामने
आये 'भूधरदास'।
सन्त 'कबीरदास' से जिनकी
समता होती खास।।

बाल 'संचिता मित्तल' की है,
कविता भाव विभोर।
'प्यासी धरती' 'बारिश' 'बादल'
लाती हर्ष हिलोर।
'अमर नाथ जी' 'दीप धरें' कह
देते सद्उपदेश।
सम्पादक को साधुवाद है,
दयानन्द सविशेष।।

श्री दुली चन्द जैन, चेन्नई

वर्षों से **शोधादर्श** पढ़ता आ रहा हूँ तथा उससे प्रभावित हूँ। **शोधादर्श** ७४ में 'समणसुत्तं : मूल स्रोत और अनुवाद' लेख पढ़ा। उसमें संकलित गाथाओं का मूल स्रोत दिया गया है। मैंने सन् १९९३ में **'जिनवाणी के मोती'** पुस्तक लिखी तब इनमें से कुछ गाथाओं का स्रोत पता किया था। बड़ा ही श्रम साध्य कार्य है। यह लेख प्रकाशित करने के लिए बधाई स्वीकार करें।

डॉ. परमानन्द जड़िया, लखनऊ

शोधादर्श के नूतन अंक नवीन सज-धज के साथ आ रहे हैं। मुख पृष्ठ हर बार किसी ऐतिहासिक स्मारक के चित्र से मण्डित रहता है।

शोधादर्श ७३ – गुरुगुण-कीर्तन स्तम्भ में कविवर द्यानतराय का जीवन-वृत श्री रमा कान्त जैन की शोध वृत्ति का स्मरण कराता है। द्यानतराय अच्छे कवि थे। उनकी कवितायें प्रेरणा प्रद हैं।

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का लेख **'जैन संस्कृति का भारतीय संस्कृति को योगदान'** पढ़कर मुझे ऐसा लगता है कि यह एक पक्षीय धारणा है। प्रत्येक धर्म तथा संस्कृति अन्योन्याश्रित है। लेन-देन का सिद्धान्त प्रत्येक भाषा और संस्कृति को प्रभावित करता रहा है। डॉ. संजय कुमार का लेख **'मन और ध्यान'** पूर्ण वैज्ञानिक सत्य है।

'बिखरते सपने' वस्तुतः नारी की परवशता का दर्पण है, परन्तु कहीं-न-कहीं हमें समझौता करना ही पड़ता है। हम पूर्ण स्वतंत्र नहीं हैं। लड़कों को भी मा-बाप का दवाब तो सहना ही पड़ता है। डॉ. शशि कान्त अंग्रेजी में अच्छा लिखते हैं, परन्तु उनका लेख बहुत बड़ा होने के कारण हिन्दी पत्रिका के लिये उपयुक्त नहीं है। 'सागर और कूप' भी बहुत लम्बी रचना है। अंग्रेजी में एक कहावत है – 'ब्रेविटी इज द आर्ट'। संक्षिप्तता एक कला है। अन्य सामग्री भी पठनीय और मननीय है। सुसम्पादन हेतु आपको बधाई।

शोधादर्श ७४ – मुख पृष्ठ पर भगवान महावीर की निर्वाण-भूमि पावानगर में निर्मित मंदिर का चित्र मनभावन है। 'गुरुगुण-कीर्तन' में कविवर श्री भूधरदास जी पर स्वर्गीय रमा कान्त जैन का लेख पढ़कर प्रसन्नता हुई। रमा कान्त की पुस्तक **'हिन्दी भारती के कुछ जैन साहित्यकार'** मेरे निजी पुस्तकालय में संग्रहीत है, वे बड़े गुणाग्राही और गुण-वाही लेखक थे। डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का लेख **'जाति और धर्म'** विचारात्मक है। धर्म का सम्बन्ध तो आत्मा से है – जाति पाति से नहीं। परन्तु यह समाज बार बार सजग करने पर भी जाति पाति के दलदल में गहरे धंसता जा रहा है। डॉ. शशि कान्त का लेख जैन दृष्टि प्रधान है। अन्य विचारक दूसरे ढंग से भी लिख सकते हैं। अन्य सामग्री भी पठनीय है। 'लखनऊ के जैन साहित्यकार' लेख में मुझे श्रीमती सुधा जिन्दल तथा श्रीमती त्रिशला जैन के नाम नहीं मिले। लखनऊ जैसे महानगर में अन्य भी बहुत से जैन साहित्यकार हो सकते हैं। जैन होने के नाते आपको इस लेख का सम्पादन करना चाहिये था। पत्रिका प्रेषण हेतु आपको धन्यवाद।

श्री प्रेम कुमार जैन, विदिशा

शोधादर्श ७४ प्राप्त हुआ, साथ ही **स्मृतिका** की पुस्तिका भी। इतिहास के प्रति जैन दृष्टि और भ. शीतलनाथ की जन्म भूमि मलय भ्रदपुर, दोनों लेखों में इतिहास परक सारगार्भित जानकारी है। इतिहास पुरुष डॉ. ज्योति प्रसाद की विरासत को आप, आपका परिवार समर्पण निष्ठा से गतिशील रखे है।

श्री बी. डी. अग्रवाल, लखनऊ

शोधादर्श ७४ को आद्योपान्त पढ़ा। अंक केवल पठनीय ही नहीं, मननीय भी है। पत्रिका का निखार स्पष्ट है।

आपके लेख **'इतिहास के प्रति जैन दृष्टि'** की जितनी भी प्रशंसा की जाये कम होगी। शोधार्थियों के लिये यह श्रमसाध्य लेख अत्यंत उपयोगी है।

आयुष्मति संचिता मित्तल की तीनों कवितायें पढ़कर विशेष प्रसन्नता हुई। उसकी काव्य प्रतिभा दिन प्रतिदिन निखरे, यही ईश्वर से प्रार्थना है। उसे विशेष आशीर्वाद।

डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल, अमलाई

डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन का आलेख **'जाति और धर्म'** ऐतिहासिक संदर्भ में पठनीय और मननीय है जो जाति बोध से ऊपर उठकर मानवीय एकता के भावबोध का सृजक है। अदभुत संयोग, आज भी रूढ़िग्रस्त महानुभाव जाति व्यामोह में उलझे हैं। डॉ. शशि कान्त जी का आलेख **'इतिहास के प्रति जैन दृष्टि'** एक संग्रहणीय और ज्ञानवर्धक रचना है जिसमें आदि काल से २०वीं शती तक के जैन इतिहास, दिगम्बर श्वेताम्बर आगम के तुलनात्मक तथ्य आदि का प्रामाणिक विकास-क्रम दर्शाया गया है। डॉ. शशि कान्त जी इसके लिए साधुवाद के पात्र हैं। इक्कीसवी सदी के प्रथम दशक की प्रवृत्ति पर भी संक्षिप्त उल्लेख अपेक्षित था। **'लखनऊ के जैन साहित्यकार'** रचना एक कुल की तीन पीढ़ियों की साहित्य-सृजन साधना का बोध कराती है। **'जैन प्रतीक चिन्ह'** और **'समण सुत्तं : स्रोत और अनुवाद'** मूल की रचनाएँ दिशाबोधक और ज्ञानवर्धक हैं। 'भगवान शीतलनाथ की जन्म भूमि मलय-भद्रपुर' मूर्ति लेखीय आधार एवं जनश्रुति के साक्ष्य को रेखांकित करता है जो सहज प्रमाण स्वरूप है। इस पर खुला चिंतन अपेक्षित है। अन्य रचनाएँ भी ज्ञानवर्धक और प्रेरक हैं। स्थायी स्तम्भ साहित्य सत्कार, समाचार विविधा, अभिनन्दन आदि श्रम साधना से प्रसूत मार्गदर्शक ज्ञानवर्धक हैं। श्री नलिन कान्त जैन की भगवान महावीर के प्रति श्रद्धाजंली उनकी खोजवृति एवं खुले चिंतन का सूचक है। ईद-उल-अज़हा के समय दी जाने वाली कुर्बानी के सम्बन्ध में श्री बीना अहमद और फराहखान द्वारा गांटमिल्क ब्लॉग पर लिखा गया क्रूरता के विरुद्ध संदेश - जानवरों को खाने के लिए पालने से पर्यावरण को नुकसान होता है - इस्लाम में गोश्त सेवन की आवश्यकता पर कुछ नहीं कहा गया - जानवरों की बली प्रथा बंद करें, आदि सामयिक एवं तर्क संगत चिंतन है। श्री नलिन जी से अनुरोध है कि वे लेखक की नवीन कृति **'विश्व के धर्म : अहिंसा और शाकाहार'** के अंतर्गत 'इस्लाम धर्म में सात्विक आहार का उद्घोष' अवश्य पढ़ें। मानव समाज को रूढ़ियों से ऊपर उठकर

उदार हृदय से तथ्यगत सच्चाई स्वीकारना चाहिये। क्रूरतापूर्वक पशु वध कर मांस का निर्यात और कम मूल्य पर विक्रय राष्ट्र की जनता एवं प्राणिमात्र के प्रति छल है। यह सब धर्म की आड़ में हो रहा है। कविताओं की क्षणिकाएँ भावबोधक हैं। स्व. श्री रमा कान्त जी की रचना 'कविवर भूधरदास जी' वैराग्य वर्धक है।

शोधादर्श ७३ - डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन का आलेख **'जैन धर्म संस्कृति का भारतीय संस्कृति को योगदान'** और श्री अजित प्रसाद जी का **'पहला विवाह क्या विधवा विवाह नहीं था'**, विचारोत्तेजक और मार्ग दर्शक हैं। जैन संस्कृति के साथ अछूत जैसा व्यवहार किये जाने के कारण समस्त भारतीय संस्कृति का समुचित मूल्यांकन नहीं हो सका। अभी भी संकीर्ण मनोवृत्ति में अंतर नहीं आया। दिगम्बर जैन परम्परा ऋषभदेव के साथ सुनन्दा के विधवा विवाह को मान्य नहीं करती। डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव को **'एलोरा की देवी प्रतिमा इन्द्राणी या अम्बिका'** आलेख के लिए बधाई। बहुत श्रमसाधना और शोध के उपरांत ही सम्यक् निर्णय निकलते हैं। आज ऐसी श्रम-साधना का भाव तिरोहित हो रहा है। आलेख से सम्बंधित मनोरम चित्र कवर पृष्ठ पर देकर लेखक के मनोरथ को पुष्ट किया है।

'एकान्तवाद और स्वच्छंदता अनुचित' आलेख दिशा बोधक है। जैन परम्परा में जितना स्वेच्छाचार एवं एकान्तवाद दिखाई देता है, अन्य परम्पराओं में दुर्लभ है। इस अनैतिकाचार के गम्भीर परिणाम समाज/संस्कृति को अनुभूत करने होंगे। अन्य आलेख स्तरीय और ज्ञानवर्धक हैं। वैशाली गणराज्य दल विहीन था। सह-अस्तित्व के भावबोध बिना विद्यमान स्थिति विस्फोटक बनी है। श्री सचिन्द्र शास्त्री का आलेख मननीय है। 'मन और ध्यान' का अच्छा विवेचन हुआ है।

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति का प्रतिवेदन देखा। अन्य सभी समाज सेवी संस्थाओं से अनुरोध है कि वे भी सदस्यों से प्राप्त भारी भरकम योगदान के उपयोग को पारदर्शी बनाकर अपनी पत्रिका में प्रदर्शित करें। सभी स्थायी स्तंभ ज्ञानवर्धक एवं श्रम साधना के सूचक हैं। कविताएं भावपूर्ण/दिशा बोधक हैं। वर्तमान में वीतराग देव के स्थान पर रागी देवताओं की ओर रुझान बढ़ रहे हैं। उसके समाधान हेतु गवेषणापूर्ण आलेख प्रकाशित करें, कृपा होगी।

श्री हुकम चंद जैन, मेरठ

कितने दिनों से हृदय में एक बात आ रही है। जैन धर्म का साहित्य चार अनुयोगों में विभक्त है। जितनी भी साहित्य प्रकाशन संस्थाएं हैं वे अगर ग्रंथ के नाम के साथ एक शब्द यह भी कि किस अनुयोग का ग्रन्थ है, अंकित कर दें तो उपयोगी होगा। जैन पद्मपुराण (प्रथमानुयोग) ऐसा लिख दें तो आने वाली पीढ़ी समस्त साहित्य के विषय में जान जायेगी कि कौन ग्रन्थ किस अनुयोग का है।

आभार

श्री एस.पी. गर्ग जैन, न्यू कॉलोनी, रांझावाला, देहरादून ने अपनी पत्नी श्रीमती प्रेमवती गर्ग जैन के स्वर्गवास (२८ दिसम्बर, २०११) पर उनकी पुनीत स्मृति में **शोधादर्श** को रु. ५०१/- भेंट किये।

डॉ. शशि कान्त ने अपने पिता जी इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्मशती (६ फरवरी, २०१२) पर उनकी पुनीत स्मृति में रु. ५००/- भेंट किये।

अपने पितामह बा. पारस दास जैन, पितामही श्रीमती रामकटोरी जैन, माता श्रीमती अनन्त माला जैन और पितृव्य श्री अजित प्रसाद जैन की पुनीत स्मृति में भी डॉ. शशि कान्त ने रु. २०१/- भेंट किये।

श्रीमती आशा जैन ने अपने पति 'सम्पादक सरताज' श्री रमा कान्त जैन की ७६वीं जन्म जयंती (१० फरवरी, २०१२) और तृतीय पुण्यतिथि (२६ मई) पर उनकी पुनीत स्मृति में रु. २०१/- व २०१/- भेंट किये।

श्री आदेश जैन, आर्यनगर, लखनऊ ने श्रुतपंचमी पर रु. १००/- भेंट किये।

श्री कैलाश नारायण टण्डन, पाण्डुनगर, कानपुर, ने अपनी पत्नी श्रीमती शकुन्तला टण्डन की पुण्यतिथि पर उनकी पुनीत स्मृति में रु. ५१/- भेंट किये।

पाठकों/अभिदाताओं से निवेदन

आजीवन अभिदाता की व्यवस्था समाप्त कर दी गई है। कुछ आजीवन अभिदाता स्वयं ही वार्षिक शुल्क भेज रहे हैं, यथा कानपुर से श्रीमती राजदुलारी जैन। सभी अभिदाताओं से निवेदन है कि **इस वर्ष (२०१२) से वार्षिक शुल्क भेजने की कृपा करें। वार्षिक शुल्क सम्प्रति रु. ६०/- (साठ रुपये) मात्र है।**

सुधी पाठकों से यह भी निवेदन है कि **अपने परिवर्तित पते की सूचना देने की कृपा करें।** कुछ पाठकों ने यह सूचना दी भी है, जिसके लिये हम उनके आभारी हैं।

आजीवन अभिदाताओं तथा उन अभिदाताओं जिन्होंने वर्ष २०१२ का शुल्क भेज दिया है, की सूची, तथा उन पाठकों की सूची जिन्होंने अपने परिवर्तित पते की सूचना दी है, नीचे दी जा रही है।

- सम्पादक मण्डल, शोधादर्श

शोधादर्श के आजीवन अभिदाता

१. श्री अवनीश गर्ग जैन
एवं श्रीमती रेखा गर्ग
लखनऊ- २२६००१

२. डा. आर. के. अग्रवाल
लखनऊ- २२६०१२

३. डा. (श्रीमती) इन्दु रस्तोगी
लखनऊ- २२६०१०

४. डा. एस. के. जैन
लखनऊ- २२६०१८

५. श्री कमल सिंह जयपुरिया
हावड़ा- ७१११०१

६. श्री किशोर चन्द्र जैन
लखनऊ- २२६००४

७. डा. (श्रीमती) कुसुम पटोरिया
नागपुर - ४४०००१

८. श्री के. एस. पुरोहित
गांधीनगर- ३८२००६

८. प्रो. के. डी. मिश्रीकोटकर
चांडुर बाजार- ४४४७०४

९. श्री चक्रेश जैन
इन्दौर - ४५२०१८

१०. श्री ब्र. जय निशान्त
टीकमगढ़ - ४७२००१

१२. श्री जितेन्द्र प्रकाश अग्रवाल
गोरखपुर - २७३००७

१३. डॉ. जितेन्द्र बी० शाह
अहमदाबाद - ३८०००१

१४. श्री प्रद्युम्न श्री महाराज
द्वारा श्री जितेन्द्र कापड़िया
अहमदाबाद - ३८०००७

१५. श्री प्रवीन कुमार जैन
नई दिल्ली- ११०००२

१५. मुनि श्री प्रमाण सागर जी
द्वारा - श्री सन्तोष कुमार जयकुमार
सागर- ४७०००२

१८. श्री भरत कुमार मोदी
इन्दौर - ४५२००१

१९. श्री माणिक चन्द्र जैन लुहाड़िया
कुन्दकुन्द नगर,
पो. सोनागिर-४७५६८६ (जिला) दतिया

२०. श्रीमती राजदुलारी जैन
कानपुर - २०८००२

२१. श्री रूप चन्द जैन कटारिया
नई दिल्ली- ११०००१

२२. श्री ललित सी. शाह
अहमदाबाद - ३८००१४

२३. मुनि श्री विमल सागर जी
द्वारा डा. शैलेन्द्र हरण जी
उदयपुर - ३१३००१

२४. श्री विवेक काला
जयपुर- ३०२००४

२५. श्री वीरेन्द्र कुमार जैन
गाजियाबाद- २१००१०

२५. श्री मुकेश जैन, एडवोकेट
मुजफ्फरनगर- २५१००२

२५. श्री वेद प्रकाश गर्ग
मुजफ्फरनगर- २५१००२

२७. श्री शान्तीलाल जैन बैनाड़ा
आगरा - २८२००२

२८. श्री श्रीकिशोर जैन एवं श्री शरद कुमार जैन, दिल्ली- ११००५१
२९. श्री सतीश कुमार जैन नई दिल्ली- ११००७०
३०. श्री ब्र. सन्दीप सरल बीना - ४७०११३
३१. श्रीमती सितारा जैन जबलपुर - ४८२००२
३२. श्री सुरेश चन्द्र जैन मसूरी- २४८१७६
३३. श्रीमती त्रिशला जैन शास्त्री लखनऊ- २२६००४
३४. श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा लखनऊ- २२६००६

सुधी पाठक जिनका वर्ष २०१२ का शुल्क प्राप्त हुआ है

१. श्री आदेश्वर प्रसाद जैन, सिकन्दराबाद (उ.प्र.)
२. श्री इन्द्र कुमार सतिया, हुबली
३. सुश्री उषा चोरडिया, जयपुर
४. डा. उषा जैन, बिजनौर
५. श्री कैलाश नारायण टन्डन, कानपुर
६. गुजरात विश्वविद्यालय लाइब्रेरी, अहमदाबाद
७. श्री जैन गुरुकुल विद्या मंदिर सेकेंडरी स्कूल, ब्यावर
८. श्री दर्शन लाड, मुम्बई
९. श्री दुली चंद जैन, चेन्नई
१०. श्री धन कुमार जैन, लखनऊ
११. श्री पवन कुमार जैन, पुणे
१२. श्री मगन लाल जैन, लखनऊ (२०१३-२०१४ भी)
१३. श्री महेश चंद जैन, सिकंदराबाद (उ.प्र.) (२०१३-२०१४ भी)
१४. श्री माधव प्रसाद जैन, उज्जैन
१५. श्री रंजीत सुन्दर दास जैन, आरा
१६. श्रीमती राजदुलारी जैन, कानपुर
१७. श्री विनय कुमार जैन (गीता ट्रेडिंग कम्पनी), लखनऊ (२०१३-२०१४ भी)
१८. डा. शिव प्रसाद, वाराणसी (२०१३ भी)
१९. डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा (बी.एस.एम.पी.कालेज), रुड़की
२०. श्री धन प्रकाश जैन, मेरठ

सुधी पाठक जिन्होंने परिवर्तित पते की सूचना दी

१. डॉ. इन्दु रस्तोगी, लखनऊ
२. श्री धन प्रकाश जैन, मेरठ
३. श्री पवन कुमार जैन, पुणे
४. श्री पारस सुधीर शहा जैन, बारामती (पुणे)
५. श्री मगन लाल जैन, लखनऊ
६. डॉ. रमेश चन्द्र जैन, बिजनौर
७. डॉ. (श्रीमती) रश्मि जैन, फिरोजाबाद
८. श्री सुरेन्द्र पाल जैन, गाजियाबाद

आवश्यक सूचना

वार्षिक शुल्क ६० रु. (साठ रुपये), 'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र., ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–२२६ ००४', को 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति' के नाम लखनऊ में देय चेक अथवा ड्राफ्ट द्वारा भेजने का अनुग्रह करें। मनीआर्डर से भेजने पर उसकी सूचना एक पोस्टकार्ड पर भी अपने पूरे नाम पते के साथ अवश्य भेजें। विदेशों के लिए पत्रिका का वार्षिक शुल्क २५ डालर है।

शोधादर्श चातुर्मासिक पत्रिका है और सामान्यतया इसके अंक मार्च, जुलाई व नवम्बर में प्रकाशित होते हैं।

शोधादर्श में प्रकाशनार्थ शोधपरक एवं अप्रकाशित लेख आमंत्रित हैं। लेख कागज के एक ओर सुवाच्य अक्षरों में लिखित अथवा टंकित होना चाहिये और उसमें यथावश्यक सन्दर्भ/स्रोत सूचित किये जाने चाहियें। यथासंभव लेख ३–४ टंकित पृष्ठ से अधिक न हो। *लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रख लें। अप्रकाशित लेख–रचना लौटाना कठिन होगा।*

शोधादर्श में प्रकाशित लेखों को उद्धरित किये जाने में आपत्ति नहीं है, परन्तु *शोधादर्श* का श्रेय स्वीकार किया जाना और पूर्ण सन्दर्भ दिया जाना अपेक्षित है।

प्रकाशनार्थ लेख और समीक्षार्थ पुस्तक/पत्रिका सम्पादक को ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–२२६ ००४, के पते पर भेजे जायें।

प्रत्यावर्तन में पत्रिका की केवल एक प्रति सम्पादक को उपरोक्त पते पर भेजी जाये।

लेखक के विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेखों में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भों की प्रामाणिकता के संबंध में लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

सभी विवाद लखनऊ में स्थित सक्षम न्यायालयों/न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार के अधीन होंगे।

सुधी पाठक कृपया अपनी सम्मति और सुझावों से अवगत करावें ताकि पत्रिका के स्तर को बनाये रखने और उन्नत करने में हमें प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे। कृपया पत्रिका पहुँचने की सूचना भी देवें।

– सम्पादक

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र

प्रबन्ध समिति

(१ जनवरी २०१० को सर्वसम्मति से निर्वाचित)

अध्यक्ष	श्री लूण करण नाहर जैन
महामंत्री	श्री नलिन कान्त जैन
संयुक्त मंत्री	डॉ. विनय कुमार जैन
उपमंत्री	श्री महेन्द्र प्रसाद जैन, श्री रोशनलाल नाहर
कोषाध्यक्ष	श्री बिजय लाल जैन
सदस्य प्रबन्ध समिति	डॉ. शशि कान्त, श्री सन्दीप कान्त जैन, श्री रोहित कुमार जैन, श्री धनेन्द्र कुमार जैन, श्री आदित्य जैन, श्री दीपक जैन, श्री अजय कुमार जैन कागजी, श्री अंशु जैन 'अमर' श्री राकेश कुमार जैन, श्री हंसराज जैन

प्रकाशन

भगवान महावीर स्मृति ग्रन्थ	सं. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	50/-
Bhagwan Mahavira: Life, Times & Teachings	**by Dr. Jyoti Prasad Jain**	**5/-**
Way to Health & Happiness - Vegetarianism	**by Dr. Jyoti Prasad Jain**	**4/-**
Mysteries of Life & Eternal Bliss	**by Prof. Anant Prasad Jain**	**7/50**
जीवन रहस्य एवं कर्म रहस्य	लेखक प्रो. अनन्त प्रसाद जैन	7/50

पांचों प्रकाशन मात्र रु. 70/- में प्राप्त किये जा सकते हैं। मूल्य लखनऊ में देय चेक या ड्राफ्ट द्वारा 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति' के नाम महामंत्री को ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-226004 के पते पर भेजा जाय।

छात्रवृत्ति के लिये आवेदन

छात्रवृत्ति के लिये आवेदन निर्धारित प्रपत्र पर, उस शिक्षा संस्थान के माध्यम से जहां विद्यार्थी अध्ययनरत हैं, ३० सितम्बर २०१२ तक भेजे जायें। प्रपत्र समिति के कार्यालय से ५/- का टिकट लगा लिफाफा भेज कर प्राप्त कर लिया जाये।

- महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति